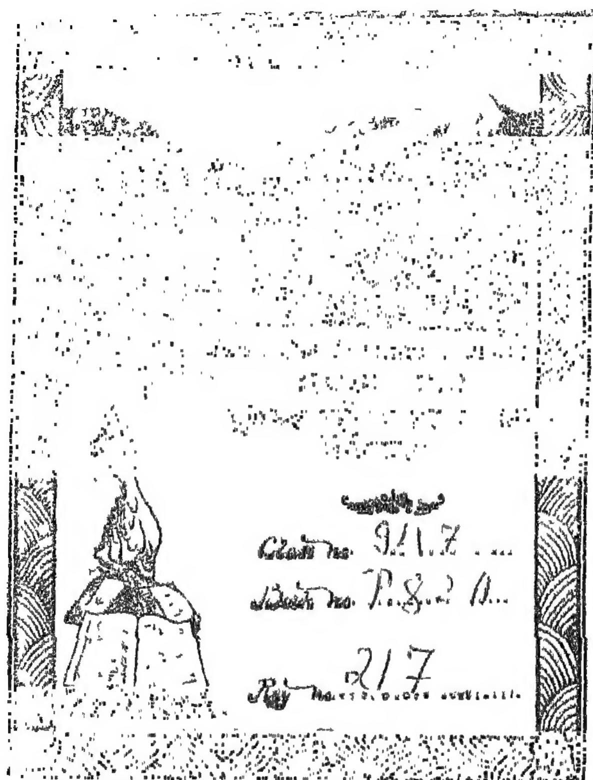


आधुनिक रूस

(रूस का संक्षिप्त इतिहास)

लेखक —

श्री० प्रभुदयाल मेहरोत्रा, एम० ए०

(रिसर्च स्कॉलर प्रयाग विश्वविद्यालय)



प्रकाशक—

नरेन्द्र पब्लिशिङ्ग हाउस

रैन बसेरा :: चुनार

प्रथम संस्करण]   नवम्बर, १९३४   [मूल्य १)

प्रकाशक—
नरेन्द्र पब्लिशिङ्ग हाउस
रैन बसेरा :: चुनार, यू० पी०



मुद्रक—
गिरिजा प्रसाद श्रीवास्तव,
हिन्दी-साहित्य प्रेस, प्रयाग।

विषय-सूची

रूस का इतिहास	...	...	...	१
१९०५ की क्रान्ति	...	...	...	३२
१९१७ की क्रान्ति	...	...	...	६०
अस्थायी सरकार	...	...	...	७९
तीसरी राज्य-क्रान्ति	...	...	...	९६
सोवियट शासन की प्रारम्भिक कठिनाइयाँ			...	१२०
सोवियट के दो महत्त्वपूर्ण कार्य्य		...	...	१३७
सोवियट रूस और एशिया के राष्ट्र		...	...	१५१
सोवियट रूस की नवीन शिक्षा-प्रणाली			...	१५९
सोवियट रूस का शासन-विधान		...	...	१६७
तृतीय अन्तर्राष्ट्रीय क्या है ?		...	...	१८८
रूस की पञ्चवर्षीय योजना		...	...	१९१
लेनिन		...	...	२०५

आधुनिक रूस

रूस का इतिहास



दि आप यूरोप और एशिया के नक़शों को देखें, तो यूरोप के पूर्व में और एशिया के उत्तर में आपको एक लम्बा-चौड़ा देश दिखायी देगा जो ८३,३६,८६४ वर्ग-मील में फैला हुआ है। इसी को रूस कहते हैं।

इस देश का इतिहास काफ़ी प्राचीन है। यदि आप रूस का प्राचीनतम इतिहास पढ़ें, तो आपको पता चलेगा कि उस समय रूस में अनेक जातियाँ रहती थीं। प्रोफ़ेसर नाइडर्ले ने खोज की है कि विस्टुला और नीपर नदियों के बीच में सर्ब और बलगेरियन रहते थे जो प्रथम शताब्दी में डान्यूब तक आ गये थे। तीसरी तथा चौथी शताब्दियों में नीपर और नीस्टर नदियों के बीच में एक बलवान जाति रहती थी जिसे आण्टे कहते थे। इन्होंने उस समय अपना एक फ़ेडरेशन बना रक्खा था। छठीं और सातवीं शताब्दियों में अवारों ने इन्हें पराजित किया था।

सातवीं शताब्दी में खज़ार नामक एक और जाति रहती थी जो काफ़ी सभ्य थी। इस जाति ने कुछ और अन्य जातियों को जीत कर उन पर अपना अधिकार जमा लिया था। ख़ज़ारों का बोल-बाला १०वीं शताब्दी तक बना रहा, जब टर्की की कई जातियों ने स्टपी (Steppe) में धावा करके उन पर अधिकार कर लिया। कुछ समय तक बराबर दक्षिण की जातियाँ धावा करती रहीं।

उत्तर में एक जाति रहती थी, जिसे 'रस' कहते थे। इन आक्रमणकारियों से बचने के लिये रस जाति ने अपना एक नया सङ्गठन कर अपने को पूर्णतया सुरक्षित कर लिया। नवग्रेड नामक शहर की जनता में आपस में बड़ी कलह रहती थी। अपने कलह को मिटाने के लिये उन्होंने 'रस' जाति से प्रार्थना की, कि वह नवग्रेड में आकर रहे। उनकी प्रार्थना स्वीकार कर रस लोग नवग्रेड में आकर रहने लगे। रूरिक नवग्रेड का प्रथम राजा था। इस वंश के राजे जाड़ों में नीपर नदी के किनारे के गावों में घूम घूम कर टैक्स वसूल किया करते थे। टैक्स में उन्हें ऊन, धन और दास मिलते थे। बसन्त शुरू होते ही वे छोटी छोटी नावों पर चढ़ कर, जो एक पेड़ की बनी होती थीं, लौट जाते थे ताकि स्टपी में रहने वाली जातियाँ उन पर धावा करके उनका माल न छीन लें। उन जातियों से अपने को सदा के लिए बचाने के लिए उन्होंने स्टपीज़ की सरहद पर मिट्टी की दीवाल बना ली थी। इस प्रकार बहुत वर्षों तक उन्होंने वहाँ शासन किया। व्लाडिमिर ने कीव नगर में नॉरमन वंश की ध्वजा फहराई। व्लाडिमिर ने सन् ९८८ में

ईसाई धर्म को स्वीकार कर लिया। व्लाडिमिर के मरने के पश्चात् (१०१५) उसके पुत्र स्वाटोपाके ने अपने भाइयों को मार डाला, पर उसके यारोस्लेव नाम के एक दूसरे भाई ने, जो नवग्रेड का राजा चुना जा चुका था, उसे पराजित किया। यारोस्लेव ने तमाम देश को क्रीव के आधीन कर दिया। वह विद्या का प्रेमी था। उसने एक शिक्षालय स्थापित किया। पुस्तकों का संग्रह किया और उन के अनुवाद कराये। यही नहीं, उसने एक क़ानून की भी स्थापना की। इस राजा की चारों तरफ़ तूती बोलती थी। आसपास के राजे भाग भाग कर इसकी शरण में आते थे। सन् १०५४ में इस राजा की मृत्यु हो गयी। इसके वंश ने बहुत काल तक क्रीव में शासन किया। सन् ११६९ में एण्ड्रू की सेनाओं ने क्रीव पर धावा कर उसे तहस-नहस कर डाला। पुनः सन् १२४० में चङ्गेज़ खाँ के भतीजे बातु ने आक्रमण करके उसे पूरी तरह नष्ट ही कर दिया। फलतः क्रीव के राजा का महत्व जाता रहा और रूस की एकता भी नष्ट हो गयी। देश में अनेक छोटे-छोटे राज्य स्थापित हो गये जो बहुधा आपस में लड़ा करते थे। बहुत काल तक रूस में अन्धकार छाया रहा।

धीरे-धीरे अन्धकार दूर हुआ और देश ने उन्नति करनी प्रारम्भ की। रूस की इस उन्नति में गलीशिया नवग्रेड तथा मॉस्को का विशेष हाथ था। तत्कालीन रूस की तीन राजनीतिक विशेषताओं में से प्रत्येक में एक विशेषता पायी जाती थी। वे विशेषतायें ये थीं :—(१) शहरों की आम सभा जिसे 'वेचे'

(Veche) कहते थे। ये सभायें शहरों तथा बड़े गाँवों में होती थीं और उनमें गाँव के तमाम लोग भाग लेते थे। (२) राजा, (३) जिमींदार तथा अन्य बड़े आदमी। गलीशिया में बड़े आदमियों का बोलबाला था। उत्तरीय-पच्छिमीय सरहद्दों में लोकतंत्रीय शासन था। नवग्रेड में प्रजातंत्रीय शासन था। नवग्रेड में एक सभा शासन करती थी जो अपना एक मेम्बर तथा कमाण्डर चुनती थी; ड्यूकों से सन्धियाँ करती थी। ड्यूकों का काम था विदेशी आक्रमणों से राज्य की रक्षा करना। नवग्रेड में व्यापार की बड़ी उन्नति थी; पूँजीपति और धनी व्यापारी ही प्रधान नागरिक थे, जिन्होंने आगे चलकर नवग्रेड के प्रजातंत्रीय शासन को अपने ढङ्ग का कर लिया था। नवग्रेड का राज्य बहुत दूर तक फैला था।

केन्द्रीय रूस के राजनीतिक जीवन में एक और उल्लेखनीय बात थी। रूस का यह भाग यूरोप से पूर्णतया अलग था। खेती यहाँ का प्रधान व्यवसाय था। यहाँ का ड्यूक सामाजिक जीवन का सङ्गठनकर्ता तथा मालिक था। शहर थोड़े थे। शहरों की सभाओं का प्रभाव बहुत कम था। बड़े-बड़े जिमींदार आदि भी न थे। फलतः ड्यूक के अधिकार असीम थे। वह मनमाना शासन करते थे। अपनी इन शक्तियों के कारण ही कुछ समय पश्चात् वह रूस के मालिक बन बैठे। डानियल मॉस्को का प्रथम ड्यूक था। सन् १२४० से लेकर सन् १४८० तक मॉस्को के तमाम ड्यूक 'गोल्डन होर्ड' (Golden Horde) के खाँ के आधीन

थे। वे बराबर ख़ाँ की राजधानी सराँय को जाया करते थे और उसे प्रत्येक भाँति प्रसन्न रखने का प्रयत्न करते थे। कुछ समय पश्चात् उनमें और तातारों में झगड़ा हो गया। ख़ाँ की सहायता से उन्होंने तातारों को हरा दिया और अपने राज्य का विस्तार किया। प्रथम ईवान ने तमाम मॉस्को प्रान्त में येन-केन-प्रकारेण अपना अधिकार जमा लिया। डेमेट्रिस ने ऊपरी वालगा, तुला तथा कासिनाव को अपने राज्य में मिला लिया। प्रथम और द्वितीय बसिल ने अन्य और प्रान्तों को जीता। मॉस्को इस समय तमाम रूस को एक करने में लगा था। मॉस्को को इस आन्दोलन में सब से बड़ी सहायता मिली उस समय, जब रूस के धर्माचार्य मॉस्को में रहने लगे और उनके वहाँ रहने से मॉस्को रूस का धार्मिक केन्द्र माना जाने लगा। डेमेट्रियस ने सन् १३८० में तातारों को हराकर बड़ा नाम कमाया। दो वर्ष बाद तख्तामिश ने मॉस्को पर धावा किया, शहर को तहस-नहस कर दिया और और उसमें आग लगा दी। तिमूर ने तख्तामिश को हराया। सौ वर्ष तक मॉस्को पर मंगोलों का अधिकार अक्षुण्ण बना रहा।

तृतीय ईवान ने अन्य प्रान्तों को जीत कर तमाम रूस को मॉस्को के आधीन कर लिया। सन् १४८० में उसने अपने कन्धे से तातारों का जुआ फेंक कर अपने को स्वाधीन बना लिया। तृतीय ईवान के उत्तराधिकारी चतुर्थ ईवान (भयानक) के राज्य-काल में अनेक सुधार हुए। चतुर्थ ईवान ने 'ज़ार' की पदवी ग्रहण

की। 'जार' 'सीजर' का लघु रूप है। उसने अपने दरबार के छोटे-छोटे ड्यूकों के अधिकार छीन कर उन्हें अपना नौकर बनाया। यदि कोई ड्यूक भाग कर विदेश जाता तो विश्वासघाती समझा जाता। विवश होकर ड्यूकों आदि ने जार की ड्यूमा में रह कर राजनीतिक अधिकार पाने का प्रयत्न किया। उनमें से जो सब से अधिक शक्तिशाली थे, उन्होंने एक प्रकार की 'प्रीवी कौंसिल' की स्थापना की जिसके द्वारा वे देश पर शासन करते थे। उन्होंने जनता के प्रतिनिधियों को पहिले-पहल इकट्ठा किया जिन्होंने तृतीय ईवान के फौजदारी क़ानून को संशोधित किया। फिर भी 'प्रीवी कौंसिल' का शासन अधिक काल तक न रह सका। ईवान इसे पसन्द न करता था। उसने क्रमशः ड्यूकों आदि को नष्ट करना प्रारम्भ कर दिया। अपने शत्रुओं के प्रति अपना क्रोध प्रदर्शित करने के लिये उसने सन् १५६४ में मॉस्को छोड़ दिया और एलेक्जण्ड्रोवस्क्या स्लोबोडा में रहने लगा। तत्पश्चात् उसने अपने राज्य को दो भागों में विभाजित कर दिया। प्रथम भाग पर तो वह स्वयं राज करता था और वह उसकी निजी सम्पत्ति समझी जाती थी। दूसरे भाग को उसने एक ईसाई तातार को दे दिया। पोलैण्ड, लिथुनिया तथा स्वीडन से उसने वर्षों तक सफलतापूर्वक युद्ध किया जिसके परिणाम-स्वरूप उसे सेना तथा आर्थिक नीति में अनेक सुधार करने पड़े। उसने अनेक नवीन टैक्स लगाये। सरकारी खज़ाने की अलग स्थापना की गई जो उसके निजी खज़ाने से पृथक् समझा जाता था। सरकारी

ख़ज़ाने का काम चारों बोर्डों द्वारा होता था। बड़े-बड़े लोगों को अनेक पदवियाँ दी गयीं। तातार के आक्रमणों से देश को बचाने के लिये पश्चिमीय और दक्षिणीय सरहद्दों पर लम्बी-चौड़ी दीवालें बनाई गईं। एक केन्द्रीय बोर्ड रहता था जो प्रत्येक लड़ाई के लिये सेनापतियों को चुनता था।

चतुर्थ ईवान का पुत्र तथा उसका उत्तराधिकारी थिओडोर एक दुर्बल पुरुष था। ईवान अपने इसी पुत्र के सम्बन्ध में कहा करता था कि वह ज़ार बनने की अपेक्षा किसी गिरजाघर में घण्टा बजाने का काम अधिक सफलतापूर्वक कर सकता था। थिओडोर नाममात्र का राजा था। राज का सारा काम उसका ससुर बोरिस गाडुनोव किया करता था जो सदा ईवान की नीति पर ही चलना पसन्द करता था। सन् १५९८ में थिओडोर की मृत्यु हुई। अब बोरिस स्वयम् ज़ार बन बैठा। पर रूस की असंतुष्ट जनता ने पोलों की सहायता से रूस की गद्दी का एक नया हक़दार खड़ा कर दिया। सन् १६०५ में बोरिस की मृत्यु हो गयी। सन् १६०५ की १९ वीं जून को इस नये हक़दार ने मॉस्को में प्रवेश किया। सन् १६०६ की १७ वीं मई को जनता ने विद्रोह कर उसे मार डाला और उस प्राचीन वंश का सदा के लिये नाम मिटा दिया। तत्पश्चात् ज़ार का सिंहासन वसिल नाम के एक मामूली आदमी के हाथ में आ गया। उसने सन् १६०६ से लेकर १६१० तक राज्य किया। उसने जनता को आश्वासन दिया कि वह चतुर्थ ईवान की नीति को काम में नहीं लावेगा। पर अभी वसिल चैन से बैठने भी न

पाया था, कि दक्षिण में सामाजिक क्रान्ति प्रारम्भ हो गयी। धीरे-धीरे दक्षिण और पूर्व में क्रान्ति पूर्णतया फैल गयी। डेमेट्रियस नाम के एक आदमी ने, जो अपने को गद्दी का हक़दार बतलाता था, मॉस्को पर आक्रमण कर दिया। मॉस्को के क़रीब ही टकिनो नगर में उसने अपना डेरा डाल दिया। बसिल ने स्वीडन से सहायता माँगी। अभी उसे स्वीडन से सहायता मिली ही थी कि पोलैंड के राजा सिगिसमण्ड ने रूस पर धावा बोल दिया। वह स्वयं रूस के सिंहासन पर बैठना चाहता था। सन् १६०९ के सेप्टेम्बर में वह स्मोलेन्सक तक पहुँच गया। सन् १६१० की जुलाई में बसिल सिंहासन से उतार दिया गया। तीन वर्ष तक रूस में अशान्ति मची रही।

सन् १६१३ में माइकेल सर्वसम्मति से एक कौंसिल द्वारा, जिसे 'जेम्सकी सोबोर' (Zemsky Sobor) कहते थे, ज़ार चुना गया। माइकेल ने सन् १६४५ तक शासन किया। कौंसिल ने तीन वर्ष तक देश में अमन-चैन स्थापित करने में माइकेल की सहायता की। तत्पश्चात् एक दूसरी कौंसिल बनाई गयी जिसने पुनः तीन वर्ष तक ज़ार की सहायता की। माइकेल के पिता ने सन् १६३३ तक अपने पुत्र की तरफ़ से देश पर शासन किया। स्वीडन और पोलैण्ड से सन्धियाँ स्थापित की गयीं। पश्चिमीय और दक्षिणीय सरहदों में अभी तक शान्ति स्थापित नहीं हुई थी। अतः सेना का पूरी तरह से सङ्गठन किया गया। विदेशों से योग्य सेनापति बुलाये गये तथा विदेशों से किराये पर

सिपाही बुलाये गये। इन सब के परिणाम-स्वरूप नये-नये टैक्स लगाये गये।

क्रमशः रूस और यूरोप में घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित हो रहा था। प्रत्येक वर्ष हजारों यूरोप-निवासी रूस आया करते थे। फलतः रूस में यूरोप की सभ्यता का कुछ कुछ प्रचार-सा होने लगा। जनता ने यूरोपीय भाषायें सीखनी आरम्भ कर दीं। वे विदेशी पोशाक पहिनने लगे तथा अपने घरों में विदेशी वस्तुओं का प्रयोग करने लगे। रूस में विदेशी पुस्तकों के अनुवाद होने लगे तथा नये धर्म का प्रचार होने लगा।

थिओडोर के पश्चात् पीटर सिंहासन पर बैठा, पर पीटर अभी केवल दस वर्ष का बालक ही था। फलतः थिओडोर की बहिन सोफिया ने अपने भाई के हाथों में शासन की बागडोर सौंप दी। पीटर अपने हमजोलियों के साथ खेला-कूदा करता था। सन् १६८७ में सोफिया ने क्रीमिया पर आक्रमण करवाया। यह आक्रमण, जिसमें दो वर्ष लग गये थे, पूर्णतया असफल रहा; अतएव पीटर को अवसर मिल गया और उसने भी अवसर से समुचित लाभ उठाकर तथा सोफिया के हाथों से शासन की बागडोर छीन कर स्वयं ज़ार बन गया। ज़ार बनने के बाद भी पीटर खेल-कूद में लगा रहता था। वह विदेशी विशेषज्ञों से विशेष रूप से मिला करता था। स्वीजरलैण्ड निवासी फ्राञ्ज़ लेफर्ट से उसकी घनिष्ठ मित्रता हो गयी, जिसने उसे अनेक कुकर्म सिखलाये। उसने पीटर को अजब पर आक्रमण करने को विशेष

रूप से उत्साहित किया। दो लड़ाइयों (१६९५-९६) में ही पीटर समझ गया कि उसका सैनिक ज्ञान कितना अधूरा है। उसके मित्र ने उसे सलाह दी कि वह विदेशों में जाकर अपने ज्ञान को बढ़ावे। पीटर ने अपने मित्र की सलाह मान ली और एक मामूली मजदूर बनकर जर्मनी, हॉलैण्ड तथा इङ्गलैण्ड गया। शीघ्र ही सोफ़िया के एजेण्टों ने रूस में विद्रोह खड़ा कर दिया। अतएव विद्रोह को कुचलने के लिये पीटर शीघ्र ही रूस लौट आया।

पीटर ने सन् १६९९ में टर्की से सन्धि कर ली और दूसरे ही दिन स्वीडन के विरुद्ध युद्ध घोषित कर लिवनिआ पर आक्रमण कर दिया। यह युद्ध सन् १७२१ तक जारी रहा जिसके कारण पीटर को अनेक सैनिक, आर्थिक तथा शासन-सम्बन्धी सुधार करने पड़े। पीटर यूरोपीय सभ्यता से इतना प्रभावित हो गया था कि उसने रूस आते ही आज्ञा निकाल दी थी कि लोग अपनी दाढ़ी बनवाया करें और यूरोपीय कपड़े पहिना करें। जो लोग इन आज्ञाओं को न मानते थे, उन्हें कड़ा दण्ड दिया जाता था।

सन् १७००में नर्वा स्थान पर स्वीडन के राजा बारहवें चार्ल्स ने पीटर की सेना को पीस डाला। पर जब चार्ल्स पीटर के हिमायती डेनमार्क और पोलैण्ड को जीतने में लगा था, पीटर ने नवीन शक्तिशाली सेना खड़ी करके लिवनिआ, इस्टोनिया तथा नेवा नदी के मुख पर अधिकार कर लिया, जहाँ उसने पहिली मई, सन् १७०३ को अपनी नवीन राजधानी सेण्टपीटर्सबर्ग की

बसाया। वह पीटर्सबर्ग को यूरोप की खिड़की कहा करता था। इस बढ़े हुए खर्चे को पूरा करने के लिए उसे जहाँ धन मिलता था, वहाँ वह उसे हथिया लेता था। उसने रूस के प्राचीन केन्द्रीय शासन को नष्ट कर दिया और रूस को आठ सरकारों में विभाजित कर दिया। प्रत्येक सरकार का प्रधान उसका एक जनरल होता था तथा प्रत्येक सरकार को अपने हिस्से के अनुसार सेना का खर्च देना पड़ता था। सन् १७०९ में पोल्टवा स्थान पर पीटर ने चार्ल्स को बुरी तरह हराया। चार्ल्स टर्की भाग गया। इस विजय के कारण रूस की इज्जत यूरोप में होने लगी; पर इस युद्ध का अन्त सन् १७२१ में ही हुआ, जब दोनों देशों में सन्धि हो गयी। रूस को कुछ प्रान्त मिल गये।

युद्ध से छुट्टी पाकर पीटर ने अपना ध्यान सुधारों की तरफ़ दिया। उसे केन्द्रीय शासन की पुनः स्थापना करनी थी जिसे उसने स्वयं नष्ट किया था। पीटर की अनुपस्थिति में, जो केवल बड़े दिन पर—साल में एक मरतबा—राजधानी में आता था, 'सिनेट' ही एक ऐसी केन्द्रीय संस्था थी, जो रूस पर शासन करती थी। पीटर ने रूस में स्वीडन के ढङ्ग पर कालेजों की स्थापना करने के लिये विदेशी विशेषज्ञों को बुलाया। तीन कालेजों के हाथों में आर्थिक प्रबन्ध था। अन्य तीन कालेजों का काम था—रूस की उपजाऊ शक्तियों को बढ़ाना। तीन और विशेष कालेज होते थे, जो अन्य कालेजों से श्रेष्ठ समझे जाते थे तथा सिनेट के समान समझे जाते थे। विदेशी नीति, थल-सेना तथा जल-सेना, ये तीन चीजें, जो सीधे

ज़ार से सम्बन्ध रखती थीं, इन उपर्युक्त तीन विशेष कालेजों को सौंप दी गयी थीं।

पीटर समाज-सुधारक नहीं था। पर तो भी उसके सुधारों ने रूसी समाज में अनेक परिवर्तन कर दिये थे। सरकारी नौकरों का एक पृथक् वर्ग बन गया था, जिनका समय एक ही ढङ्ग से बीतता था। दूसरी तरफ़ ज़िमींदारियों में काम करने वाले पूर्ण तथा अर्ध-दासों का एक अलग ही वर्ग बन गया था जिस पर पॉल-टैक्स लगाया गया था, जिसे ज़िमींदार ही संग्रह करते थे। पीटर व्यापारियों का एक अलग वर्ग बनाना चाहता था, व्यापारी सङ्घों की स्थापना करना चाहता था तथा एक प्रकार का म्युनिसिपल स्वराज्य देना चाहता था; पर वह इसमें सफल नहीं हुआ।

शिक्षा में भी पीटर ने अनेक सुधार किये। शिक्षालयों की स्थापना की। उपयोगी पुस्तकें—अधिकतर अनुवाद—प्रकाशित करवायीं तथा वर्णमालाओं को जारी किया। यही नहीं, धार्मिक क्षेत्र में भी पीटर ने सुधार किये; पर उसके धार्मिक सुधारों से पादरी बहुत नाराज होगये।

पीटर के घर में ही उसका विरोध होने लगा। उसके पुत्र एलेक्सिस ने, जिस पर पादरियों का प्रभाव पड़ चुका था, पिता के धार्मिक सुधारों से असन्तोष प्रगट किया। पिता के भय के कारण वह विदेश भाग गया। धोखे से वह वापस लाया गया और पिता के विरुद्ध षड्यंत्र करने के अभियोग में क़ैद कर लिया गया।

क़ैदख़ाने में पीटर ने अपने पुत्र को इतने कष्ट दिलवाये कि वह सन् १७१८ में उन कष्टों के कारण मर ही गया।

अब ऐन और एलिज़बेथ नाम की दो पुत्रियाँ ही शेष रह गयी थीं। ये पुत्रियाँ उसकी दूसरी स्त्री—मर्था कैथरीन से—जो किसी समय लिवनिया में क़ैद रह चुकी थी, हुई थीं। मरते वक़्त पीटर ने अपना उत्तराधिकारी नियुक्त नहीं किया। यद्यपि ऐसा करने का अधिकार उसने पहले ही से प्राप्त कर रक्खा था। कैथरीन सिंहासन पर बैठ गयी। एलेक्सिस के पुत्र—पीटर के पोते—की अवहेलना की गयी। रूस की कर्त्ता-धर्त्ता इस समय तीन औरतें थीं—कैथरीन, ऐन तथा एलिज़बेथ।

ऐन ने बड़े बड़े लोगों को विदेशी भाषा,नाच तथा तहज़ीब सिखलाने के लिये एक स्कूल की स्थापना की। बॉल नाच, थियेटर तथा गाने-बजाने की रूस में धूम मच गयी। एक से एक विदेशी गवैये आदि रूस में पाये जाते थे। देश का शासन बहुत बुरा था। रूस में ऐशो-आराम का बोलबाला था।

प्रथम कैथरीन के बाद द्वितीय पीटर सिंहासन पर बैठा। बहुत शीघ्र देश के बड़े-बड़े लोगों ने ऐन को इस शर्त पर सिंहासन पर बिठाया कि उसकी शादी, उत्तराधिकार, युद्ध तथा शान्ति, टैक्स तथा सैनिक नियुक्तियों पर सुप्रीम कौंसिल का अधिकार रहेगा ऐन ने ये शर्तें मान लीं ; पर शीघ्र ही वह इन शर्तों की परवा न करके अपने मित्र बाइरन की सहायता से मनमाना शासन करने लगी। वह अधिक काल तक शासन न कर सकी और सिंहासन

से उतार दी गयी। उसके स्थान पर पीटर की लड़की एलिज़बेथ सिंहासन पर बैठा दी गयी। एलिज़बेथ ने प्रथम रूसी विश्वविद्यालय की स्थापना की।

द्वितीय कैथरीन का शासन रूस के इतिहास में विशेष महत्व रखता है। वह एक शिक्षित महिला एवं पक्की लेखिका थी। तत्कालीन यूरोप के विद्वानों से—वाल्टेयर आदि से—उसकी बराबर चिट्ठी-पत्री होती थी। यूरोप के बड़े बड़े राजाओं से उसने घनिष्ठता कर रक्खी थी। वह अनेक सुधार करना चाहती थी। अपने प्रस्तावित सुधारों पर विचार करने के लिये उसने ५६४ प्रतिनिधियों की एक सभा बुलाई। इस सभा में देश के प्रत्येक भाग के तथा प्रत्येक श्रेणी के—पादरियों तथा दासों को छोड़ कर—प्रतिनिधि शामिल थे। धनियों ने इसके इस सुधार का विरोध किया कि उनके अधिकार दासों पर परिमित कर दिये जावें। उसने भी उनके विरोध को मान लिया और अपने सुधार के प्रस्ताव को वापस ले लिया।

वह वैदेशिक क्षेत्र में कुछ नाम कमाना चाहती थी। उसकी वैदेशिक नीति की दो योजनायें प्रधान थीं। प्रथम योजना थी—पोलैण्ड से उन पश्चिमीय प्रान्तों को छीन लेना, जिनमें रूसी लोग रहते थे। उसकी दूसरी योजना थी—काले सागर के किनारे पर अधिकार कर लेना, यूरोप से टर्कों को खदेड़ देना तथा मालदेविया, वालाचिया, बालकन तथा यूनान में अनेक नवीन राज्य स्थापित करना। वह कुस्तुनतुनिया पर अधिकार कर लेना

चाहती थी ताकि वहाँ से उसका पोता कान्स्टैनटिन नवीन यूनान साम्राज्य पर शासन कर सके। प्रथम टर्की-युद्ध में प्रशा उसकी सहायता कर रहा था जिसके परिणाम-स्वरूप टर्की साम्राज्य में रहने वाले ईसाइयों की रक्षा करने का अधिकार रूस को मिल गया। पौलैण्ड का एक भाग रूस को मिल गया। द्वितीय टर्की-युद्ध के अन्त में रूस को टर्की-साम्राज्य का कुछ भाग मिल गया। कैथरीन के प्रेमियों ने उसके प्रशंसा के पुल बाँध दिये।

उसने देश में कुछ शासन-सम्बन्धी परिवर्त्तन किये। न्यायालयों की स्थापना की गयी, आर्थिक तथा शासन-विभाग पृथक्-पृथक् कर दिये गये। स्थानीय कॉरपोरेशनों की स्थापना की गयी जिसकी बैठक प्रत्येक तीसरे घण्टे होती थी, जिनमें स्थानीय समस्याओं पर विचार होता था। उसने म्यूनिसिपल स्वराज्य की नींव डाली।

उसके शासन में दासों की स्थिति बहुत शोचनीय थी। उन पर नाना प्रकार के अत्याचार होते थे। फलतः उन्होंने विद्रोह कर दिया। पर विद्रोह शीघ्र ही कुचल दिया गया और उसका नेता मौत के घाट उतार दिया गया।

कैथरीन का पुत्र तथा उसका उत्तराधिकारी प्रथम पॉल ४४ वर्ष की उम्र में सिंहासन पर बैठा। वह अपनी माता कैथरीन से बहुत नाराज था क्योंकि उसका कहना था कि अपने पिता तृतीय पीटर के पश्चात् उसे ही गद्दी पर बैठना चाहिये था और उसकी माता कैथरीन ने स्वयं गद्दी पर बैठ कर उसका

अधिकार उससे छीन लिया था। उसे कैथरीन के नाम से ही घृणा हो गई थी। कैथरीन के लाड़लों से वह नफ़रत करता था तथा कैथरीन की देशिक तथा वैदेशिक नीति से वह कोसों दूर रहना चाहता था। वह इतना अत्याचारी था कि उसके दरबार में ही उसके विरुद्ध षड्यन्त्र रचा जाने लगा। उसके शासन का अन्त उस समय हुआ जब वह नेपोलियन के साथ इङ्गलैण्ड के विरुद्ध भारतवर्ष पर आक्रमण करने का स्वप्न देखता था। उसने यह नियम बना दिया कि दास अपने मालिकों का सप्ताह में तीन दिन से अधिक काम न किया करें। पर दूसरी ओर उसने लाखों सरकारी कृषकों को दास के तौर पर धनिकों को दे दिया। उसे अपने ऊपर इतना घमण्ड था कि वह कहा करता था कि संसार में वही आदमी बड़ा है जिससे वह एक दफ़ा बात कर चुका है।

प्रथम ऐलेकज़ेण्डर के राज्य में अनेक सुधार किये गये। उसे उसकी दादी ने शिक्षा दी थी, जो चाहती थी कि पॉल के स्थान पर ऐलेकज़ेण्डर ही सिंहासन पर बैठे। अपने छोटेपन में वह स्वीज़रलैण्ड के प्रजातन्त्रीय शासन द्वारा ख़ूब प्रभावित हुआ था। १६ वर्ष की उम्र में उसकी शादी हो गयी थी। वह अपने पिता पॉल की दक़ियानूसी नीति का विरोधी था। उसका कहना था कि वह क़ानून के अनुसार शासन करना चाहता था। फलतः जनता के हृदयों में उसके लिये बड़ा आदर था। उसने अपने मित्रों की एक कमिटी बना रक्खी थी जो सुधारों को कार्यान्वित

करने में उसकी सहायता करती थी। उसने पीटर के कालेजों के स्थान पर, जिनका कैथरीन के काल में अन्त हो चुका था, मंत्रिमण्डलों की स्थापना की। एक क़ानून बना कर उसने दासों को बहुत कुछ स्वतन्त्रता दिला दी। उसके राज्य में ४७,००० दास स्वाधीन होकर स्वतंत्र किसान बन गये। तीन नवीन विश्वविद्यालयों की स्थापना की गयी और शिक्षा की ओर अधिक ध्यान दिया गया।

पहले उसने नेपोलियन का विरोध किया और इङ्गलैण्ड से मिल कर नेपोलियन को कुचलना चाहा। नेपोलियन के हाथों दो मरतबा पराजित होने पर उसने अपनी नीति बदल दी और नेपोलियन से मिल कर इङ्गलैण्ड का विरोध करने लगा। सन् १८०७ में टिलसिट के स्थान पर उसने नेपोलियन से मुलाक़ात की। नेपोलियन की मित्रता के कारण उसे स्वीडन से युद्ध करना पड़ा जिसके अन्त में फ़िनलैण्ड मिल गया। दूसरा युद्ध टर्की से करना पड़ा जो ६ साल तक जारी रहा और जिसके अन्त में बसराबिया मिल गया। एक साल बाद ही दोनों मित्रों में खटकने लगी। नेपोलियन पोलैण्ड के प्रश्न को उठाना चाहता था और इसे एलेक्जेण्डर पसन्द नहीं करता था। नेपोलियन चाहता था कि ज़ार उसे अपनी बहिन व्याह दे, ज़ार इसके लिये तैयार न था। तब से मित्रता कम ही होती चली गयी।

तत्कालीन प्रसिद्ध राजनीतिज्ञ स्पेरन्स्की ने सम्राट् की स्वीकृति से वैध सरकार की एक योजना तैयार की। इस योजना में स्वराज्य की चार सीढ़ियाँ थीं। सब से नीचे कैन्टनों में 'ड्यूमा'

थी, जिसके सदस्य चुने जाते थे। सब से ऊपर तमाम राज्य की 'ड्यूमा' थी। प्रत्येक नीचे की 'ड्यूमा' अपने से ऊपर की 'ड्यूमा' के लिये सदस्य चुनती थी। कैन्टन की 'ड्यूमा' ज़िले की 'ड्यूमा' के लिये प्रतिनिधि चुनती थी, ज़िले की 'ड्यूमा' प्रान्तीय 'ड्यूमा' के सदस्य चुनती थीं, प्रान्तीय ड्यूमा देश की 'ड्यूमा' के लिये प्रतिनिधि चुनती थीं। अन्तिम 'ड्यूमा' धारा सभा थी। वह स्वयं क़ानून नहीं बना सकती थी; पर आवश्यकीय प्रश्नों पर प्रस्ताव पास कर सकती थी। सिनेट के अधिकार केवल न्याय से सम्बन्ध रखते थे। नवीन सुधारित मंत्रिमण्डल के सुपुर्द शासन का कार्य था। 'कौंसिल ऑफ स्टेट' जिसके सदस्य देश के बड़े बड़े लोग थे और जिसका सभापति स्वयम् सम्राट् था, क़ानूनों का मसविदा बनाती थीं। दक़ियानूसी दल ने उपर्युक्त सुधारों का घोर विरोध किया। ज़ार की भी सुधारों को कार्यान्वित करने की हिम्मत न पड़ी। फलतः केवल कौन्सिल ऑफ स्टेट तथा सुधारित मन्त्रिमण्डल की योजनायें ही कार्यान्वित हुईं।

सन् १८१२ में नेपोलियन ने रूस पर धावा किया। नेपोलियन को रूस से यों ही लौटना पड़ा। यही नहीं, उसकी विशाल सेना नष्ट-भ्रष्ट हो गयी। नेपोलियन के पतन का प्रधान कारण यह रूस का आक्रमण ही था। सन् १८१५ में वीयना की कांग्रेस में ऐलेक्ज़ेन्डर की बहुत पूछ थी। वह नेपोलियन [illegible] बचाने वाला समझा जाता था। उसने यूरोप [illegible] साथ मिल कर 'पवित्र ग्रह' (Holy Alliance) की स्थापना की।

पर नेपोलियन के युद्धों के कारण ऐलेक्जेण्डर को एक अन्य भाँति की भारी हानि उठानी पड़ी। उसकी सेना के छोटे-छोटे अफसर जब यूरोप के अन्य देशों से लौट कर रूस आये तो अपने साथ अनेक विचार लेते आये। उन्होंने यूरोपीय देशों में राजनैतिक समाचार-पत्रों को पढ़ा था तथा प्रतिनिधि सभाओं में वादाविवाद सुने थे। यूरोपीय देशों में उन्होंने स्वतंत्र शासन की अच्छाइयाँ देखी थीं; पर रूस लौट कर उन्होंने देखा कि ज़ार मनमाना शासन करता था, जनता अशिक्षित थी, दासों पर अत्याचार होते थे। सन् १८१६-१८ में इन्होंने दो राजनैतिक गुप्त संस्थाओं की स्थापना की—(१) पेस्टेल ने दक्षिणीय सेना में तथा (२) कुछ अफसरों ने पिटर्सबर्ग में। प्रथम संस्था ने कारबोनारी संस्था की नक़ल की थी। दूसरी संस्था ने टगन्डबन्ड के सिद्धान्तों का अनुकरण किया था। आगे चल कर पेस्टेल ने एक प्रजातंत्रीय एवम् अत्यन्त केन्द्रीय विधान तैयार किया। निकिटा मराबीव ने सन् १८१२ के स्पेन तथा अमेरिका का अनुकरण करके एक एकतंत्रीय तथा फ़ेडेरल विधान तैयार किया। पेस्टेल सशस्त्र क्रान्ति पसन्द करता था और पिटर्सबर्ग का दल वैध आन्दोलन में विश्वास करता था एवम् शिक्षा, न्याय आदि में सरकार की सहायता कर रूस को वैध शासन के लिये तैयार करना चाहता था।

पिटर्सबर्ग दल का विश्वास था कि ऐलेक्जेन्डर उनके साथ सहानुभूति करेगा, क्योंकि सन् १८१५ में ऐलेक्जेन्डर पोलेण्ड को एक विधान दे चुका था और रूस को विधान देने का

आश्वासन दे चुका था। पर उन्हें शीघ्र ही निराश होना पड़ा। ऐलेक्जेन्डर दोनों भाँति के आन्दोलनकारियों को अपना शत्रु समझता था। ऐलेक्जेन्डर ने दकियानूसी नीति से काम लेना प्रारम्भ कर दिया। फलतः नरम दल वालों का भी ज़ार पर से विश्वास उठ गया और या तो उन्होंने राजनीति के काम से सदा के लिये छुट्टी ले ली या वे गरम-दल में शामिल हो गये। गरम दल क्रान्ति की तैयारी करने लगा तथा ज़ार को ज़ेर करने के लिये अवसर ढूँढ़ने लगा।

ऐलेक्जेन्डर के पश्चात् प्रथम निकोलस सिंहासन पर बैठा। अपने राज्य के प्रथम पाँच वर्षों में वह अपने सिंहासन को सुरक्षित नहीं समझता था और इसीलिये लोगों को प्रसन्न रखना चाहता था। शासन में सुधार करने के लिये मसाला इकट्ठा करने को उसने एक विशेष कमिटी नियुक्त की। पर उसने गरम-दल वालों के साथ कठोरता से पेश आने में कुछ उठा नहीं रक्खा। उनमें से पाँच फाँसी पर लटका दिये गये, अनेकों को देश-निकाला दिया गया और साइबेरिया भेज दिये गये।

सन् १८२७-२९ में टर्की से युद्ध कर उसने यूनान को स्वतंत्र कर दिया। उसने शिक्षा की तरफ़ विशेष ध्यान दिया। वह शिक्षा ख़तरनाक राजनीति से पूर्णतया अलग रखना चाहता था। तथा चाहता था, कि केवल बड़े तथा धनी लोगों के लड़के ही शिक्षा पावें। उसने सन् १८०४ वाले एलेक्जेन्डर के उदार विश्वविद्यालय स्टेट्यू को वापस ले लिया। सन् १८३५ में एक नया क़ानून बनाकर

उसने प्रारम्भिक शिक्षा को ऊँची शिक्षा से पृथक् कर दिया। प्रारम्भिक शिक्षा में छोटे लोगों के लड़के शिक्षा पा सकते थे, ऊँची शिक्षा में केवल बड़ों लोगों के लड़के ही भर्ती हो सकते थे।

दासों ने अनेक बार विद्रोह किया। वे अपने ऊपर होने वाले प्रतिदिन के अत्याचारों से खीझ उठे थे। निकोलस ने अनेक गुप्त कमिटियाँ स्थापित कीं जिन्होंने अनेक बार असफल होने के बाद, सन् १८४२ ई० में एक क़ानून तैयार किया जिसने व्यक्तिगत दासता का अन्त कर दिया तथा खेतों पर काम करने वालों की मजदूरी आदि निश्चित कर दी। प्रेस सम्बन्धी अपराधों की सज़ा देने के लिये एक गुप्त कमिटी बनाई गयी, जिसका सभापति जार चाहता था कि देश की तमाम शिक्षा "धार्मिक सत्यता" पर निर्धारित हो। इतिहास और वेदान्त का पढ़ाना बन्द कर दिया गया, विद्यार्थियों की संख्या परिमित कर दी गयी, अनेक लेखक गिरफ़्तार कर लिये गये या देश से बाहर निकाल दिये गये।

एक समय कुछ लोगों ने जब्त साहित्य पढ़ा था तथा उस पर वादाविवाद किया था। जार ने उन्हें पकड़ा कर दास बन कर काम करने के लिये साइबेरिया भेज दिया।

निकोलस यूरोप की राजनीति में भी बहुत दख़ल दिया करता था। वह यूरोप को अपनी उँगलियों पर नचाना चाहता था। २७ मार्च, सन् १८४८ को उसने एक मेनिफ़ेस्टो निकाला था जिस के अन्त में उसने कहा था—"ऐ लोगों, बात मानो, क्योंकि ईश्वर हमारे साथ है।" निकोलस ने अपनी सेना हङ्गरी को दबाने के लिये भेजी

जिसने हैप्सबर्ग के विरुद्ध विद्रोह कर दिया था। टर्की से भी उसने एक युद्ध खड़ा कर लिया। टर्की की सहायता को फ्रान्स, इङ्गलैण्ड, अरसान तथा कृतघ्न आस्ट्रिया आ डटे। निकोलस को मुँह की खानी पड़ी। महान् दुःख के कारण वह १८५५ में मर गया। उसकी तमाम योजना असफल प्रमाणित हो चुकी थी। इसके पुत्र तथा उत्तराधिकारी द्वितीय ऐलेक्जेण्डर को शासन की काया-पलट करनी थी। द्वितीय ऐलेक्जेण्डर के शासन-काल में अनेक सुधार जारी हुए। पर वह स्वयं एक निर्बल प्रकृति का मनुष्य था। उसके सुधारों के परिणाम-स्वरूप जनता में जीवन-सञ्चार हो गया, उनकी राजनीतिक आकाक्षायें बढ़ गयीं, राजनैतिक माँगें दिन पर दिन बढ़ने लगीं। उपर्युक्त स्थिति देख कर जार ने कुछ सुधारों को कार्यान्वित नहीं किया, कुछ को वापस ले लिया। पर जनता जाग चुकी थी। फलतः वह बेसब्र हो गयी। गरम दल की तूती बोलने लगी। जार ने दमन से काम लेना शुरू कर दिया। जनता ने क्रान्ति को प्रारम्भ कर दिया। 'मर्ज बढ़ता गया ज्यों-ज्यों दवा की'।

दासों को स्वाधीनता देना द्वितीय ऐलेक्जेण्डर का सब से बड़ा सुधार था। इसी सुधार के कारण अन्य सुधार आवश्यक हो गये। अपने सुधार का प्रयोजन समझाते हुए ऐलेक्जेण्डर ने एक अवसर पर कहा था कि 'वर्तमान हालत टिक नहीं सकती, उस समय की प्रतीक्षा करने की अपेक्षा कि दासता का नीचे से अन्त हो, यह अधिक श्रेयस्कर है कि इसका अन्त ऊपर से किया जावे।' पर धनी लोगों ने उसके इस सुधार का विरोध किया। उनका कहना था कि

इस सुधार के कारण इनकी श्रेणी का जीवन ही खतरे में था। दासों को स्वाधीन करने की योजना आरम्भ में नम्र थी। पर ऐलेक्जेण्डर चाहता था कि धनी लोग ही इस सुधार के अगुआ बनें। उसने अपना व्यक्तिगत प्रभाव डाल कर जिमींदारों को प्रान्तों में कमिटियाँ बनाने को राज़ी किया। जिमींदारों को आश्वासन दिया गया था कि क़ानून बनाते समय उनके प्रतिनिधियों से सलाह ली जायगी। कम से कम ४६ प्रान्तीय कमिटियाँ, जिनमें जिमींदारों के १,३६६ प्रतिनिधि भाग ले रहे थे, डेढ़ वर्ष तक दासों को स्वाधीन बनाने के ढङ्ग पर अपनी अपनी योजनायें बनाती रहीं। सन् १८६१ के क़ानून द्वारा खेतों में काम करने वालों को व्यक्तिगत स्वतंत्रता मिल गयी। उन्हें इसके स्थान पर अपने मालिकों को कुछ देना नहीं पड़ा। उनकी जीविका के लिये जिमींदार को उन्हें निश्चित लगान पर कुछ भूमि देनी पड़ी। भूमि की क़ीमत जो आपस में तय हो जाय—देकर भूमि पर किसानों का पूरा अधिकार हो सकता था। ऐसी हालत में सरकार जिमींदारों को पूरी क़ीमत दे देती थी और किसान सरकार को ४९ वर्षों में धीरे-धीरे दाम चुका देता था। सन् १८८० तक केवल सौ पीछे १५ ही किसान ऐसे रह गये थे जो उपर्युक्त योजना द्वारा अपनी भूमि के मालिक नहीं बन पाये थे और सन् १८८१ में तो इस योजना को सब को अवश्यमेव मानना पड़ा था। जिमींदारों को भी—जिन पर क़र्ज़ा लदा रहता था—यह योजना बहुत कुछ पसन्द आ गयी। उन्हें सज़े में नगद-नारायण मिल गये और खतरनाक स्थिति से वे बाहर हो गये।

फिर भी जिमींदारों ने स्थानीय शासन में अपना अधिकार रखना चाहा पर वे इस प्रयत्न में सफल नहीं हुए। स्वाधीन किसानों ने अपने-अपने गावों का सङ्गठन कर लिया। प्रत्येक गाँव पर कुछ बड़े-बूढ़े शासन करते थे जो किसानों द्वारा चुने जाते थे।

किसानों के स्वाधीन बन जाने के पश्चात् सन् १८६४ के क़ानून द्वारा शासन में अनेक सुधार किये गये। ज़िले और प्रान्तों में कौंसिलों की स्थापना की गयी। इन कौंसिलों को "जेम्सट्वोस" (Zemstvos) कहते थे। पर इन कौंसिलों में जिमींदारों का ही अधिक बहुमत था। कुल मिला कर रूस में जिमींदारों को ६,२०४ जगहें दी गयी थीं (यानी ४८ प्रति सैकड़ा)। किसान केवल ५,१७१ प्रतिनिधि चुन सकते थे। १६४९ प्रतिनिधि शहरों के होते थे (यानी १२ प्रति सैकड़ा)। सड़कों, अस्पतालों, भोजन, शिक्षा आदि पर कौंसिलों का अधिकार था।

तीसरा प्रधान सुधार क़ानूनी अदालतों से सम्बन्ध रखता था। अदालतें स्वाधीन कर दी गयीं। जूरियों से काम लिया जाने लगा। न्यायाधीशों को पद से अलग नहीं किया जाता था, मुक़दमे खुले आम होते थे। कार्यवाही ज़बानी होती थी, तथा बड़े एडवोकेट होते थे। कार्यवाही में कुछ ख़राबी होने पर ही सिनेट में अपील हो सकती थी।

म्यूनिसिपल सेल्फ़-गवर्नमेन्ट तथा सेना में भी सुधार किये गये। सैनिकों का कार्य-काल २५ वर्ष से घटाकर १६ वर्ष कर दिया गया, सब श्रेणियों के लिये सैनिक कार्य आवश्यक बना

दिया गया। सैनिक अदालतों तथा सैनिक स्कूलों में भी सुधार किये गये।

हाँ, प्रेस में कोई सुधार नहीं किया गया था। पत्रों की संख्या बढ़ गयी थी। निकोलस के काल में केवल ६ समाचार-पत्र तथा १९ मासिक पत्र निकलते थे। ऐलेक्जेन्डर के काल में समाचार-पत्रों की संख्या ६६ तथा मासिक-पत्रों की संख्या १५६ थी। आगे चलकर पत्रों की टोन भी गरम हो गयी थी। पत्रों का मुँह बन्द करने के लिये नये-नये क़ानून बनाये गये थे। सेन्सर अपना काम कर रहा था।

क्रान्ति की एक नवीन लहर आयी। विश्वविद्यालयों के विद्यार्थी इस क्रान्ति के नेता थे। वे स्वाधीन किसानों की तरफ़ देख रहे थे और आशा करते थे कि वे विद्रोह कर देंगे। शिक्षा द्वारा मजदूरों, सैनिकों तथा किसानों को क्रान्ति के लिये तैयार करने में वे लगे थे। गुप्त संस्थाओं की स्थापना की गयी। सन् १८६३ वाले पोल-विद्रोह के साथ रूस में विद्रोह करने का प्रयत्न किया गया। अप्रैल १८६६ में काराकोजोव नामक एक विद्यार्थी ने जार को मार डालने का प्रयत्न किया। ये सब प्रयत्न असफल हुए। कुछ नौजवान क्रान्तिकारी मौत के घाट उतार दिये गये, कुछ साइबेरिया भेज दिये गये और क्रान्ति कुचल दी गयी। ऐलेक्जेन्डर ने दक़ियानूसी विचार के पुरुषों को अपना सलाहकार चुना। दमन से काम लिया जाने लगा। दो मासिक-पत्रों का प्रकाशन बन्द कर दिया पर जनता में असन्तोष बढ़ता ही गया। स्वीजरलैण्ड में रहने

वाले रूसी एक नवीन क्रान्तिकारी सिद्धान्त का प्रचार कर रहे थे जिसे आगे चलकर "पापुलिज्म" (Papulism) कहते थे। बाकुनिन ने नौजवानों को सलाह दी कि सिद्धान्तों का अध्ययन करने का काम छोड़ कर वे जनता में जा मिलें और उसे क्रान्ति के लिये तैयार करें। बाकुनिन का कहना था कि उपर्युक्त कार्य अत्यन्त सरल है क्योंकि रूस के किसान अपने कम्यूनों के कारण पैदायशी साम्यवादी हैं। बाकुनिन की शिक्षा का रूस के उन नौजवानों पर, विशेषतः लड़कियों पर जो विदेशों में शिक्षा पा रही थीं, खूब प्रभाव पड़ा क्योंकि रूस में स्त्रियों की शिक्षा का प्रबन्ध न था। सन् १८१३ में सरकार ने उन सब को रूस बुला लिया था। उन्होंने रूस आकर उन तमाम विद्यार्थी सरकिलों से घनिष्ठ सम्बन्ध कर लिया जो अपने प्रान्तीय शाखाओं तथा मजदूरों में क्रान्तिकारी साहित्य बाँट रहे थे।

उपर्युक्त कार्य के नेता थे—निकोलस टचेकोव्स्की, प्रिन्स पीटर क्रोपोटकिन तथा सरगियस स्टेपनिआक। सन् १८७४ में उन्होंने "जनता के पास जाना" निश्चय किया। वे चारों तरफ देश में फैल गये। किसान बन कर किसानों के बीच रहने लगे। पुलिस ढूँढ़-ढूँढ़ कर उन्हें पकड़ने लगी। ७७० गिरफ़्तार किये गये। २१५ क़ैद कर लिये गये। अब उन्होंने अपना ढङ्ग बदल दिया। सन् १८७६ में एक गुप्त संस्था की स्थापना की गयी। देश भर में 'टेररिस्ट' (Terrorist) काम होने लगे। वेरा जासुलिच ने ट्रेपाव पर गोली चलायी, क्योंकि उसने एक क़ैदी

को बेतों से पीटा था। वह जूरी द्वारा निर्दोष कह कर छोड़ दिया गया, सन् १८७९ में सोलोव्येव ने ज़ार पर पाँच गोलियाँ मारीं; सन् १८८० में खालटुरिन नामक एक मजदूर ने जाड़ा-भवन में सम्राट् के भोजन-कमरे में आग लगा दी। पुलिस से कुछ करते-धरते न बनता था। सरकार ने राजभक्तों से सहायता माँगी। राजभक्तों की तरफ़ से उत्तर दिया गया कि "जब तक जनता की राय की अवहेलना की जायेगी तब तक सहयोग सम्भव नहीं है।" एक राज-भक्त ने ज़ार से कहा,—"आपने जो बलगेरिया को दिया है, वह हमें भी दीजिये (यानी विधान तथा राजनैतिक स्वतंत्रता)" ज़ार ने एक सुप्रीम कमीशन नियुक्त किया। कमीशन चाहता था कि नरम दल वालों के साथ रियायतें करके क्रान्तिकारियों को अकेला कर दें और उन्हें दबा कर जनता के प्रतिनिधियों की एक सलाह देने वाली एसेम्बली बुलावें। कमीशन ने ज़ार से सिफ़ारिश की कि वह शासकीय तथा आर्थिक सुधारों के लिये दो कमिटियाँ नियुक्त करे। ये कमिटियाँ अपनी रिपोर्ट एक आम कमीशन के सामने रक्खें। इस आम कमीशन में म्यूनिसिपैलिटियों और कौंसिलों द्वारा चुने "अनुभवियों" की बातें भी सुनी जावें (दो दो अनुभवी म्यूनिसिपैलिटी तथा कौंसिलों से)।

क़ानून 'सिनेट' ही द्वारा बनाये जावेंगे, पर सिनेट की बैठक में १५ डेलीगेट शामिल कर लिये जावेंगे। यद्यपि उपर्युक्त योजना में कोई विशेष महत्वपूर्ण बात न थी, पर मुमकिन था कि इससे

अमन व चैन क़ायम न हो जाता। पर ज़ार की क़िस्मत में और ही कुछ लिखा था। जिस दिन ऐलेक्ज़ेन्डर ने उपर्युक्त योजना पर अपने हस्ताक्षर किये, उसी दिन क्रान्तिकारियों ने उसका अन्त कर दिया।

वैदेशिक नीति में द्वितीय ऐलेक्जेन्डर अधिक सफल रहा। रूस, अफ़ग़ानिस्तान तथा चीनी तुर्किस्तान की सरहद्दों तक पहुँच गया। सुदूर-पूर्व में ऐगन (१८५८) की सन्धि द्वारा रूस को चीन से वह भूमि मिल गयी जो अमर तथा उस्री नदियों के पूर्व से पैसिफ़िक महासागर तक जाती है। व्लार्डीवास्टक में सामुद्रिक बेड़े (Naval base) की स्थापना हो गयी। सन् १८७५ में दो करिल द्वीपों के स्थान पर जापान ने सखालिन दे दिया। सन् १८७६ में बहुत ही थोड़ी क़ीमत लेकर रूस ने अमेरिका को अलास्का बेच दिया।

द्वितीय ऐलेक्जेन्डर के शासन-काल में रूस ने उद्योग-धन्धों में आशातीत उन्नति की। रेलवे की लम्बाई पहिले से लगभग ६ गुनी हो गयी। फ़ैक्टरियों की संख्या बढ़ गयी। बैङ्कों की स्थापना की गयी।

तृतीय ऐलेक्जेन्डर ने १८८१ से लेकर १८९४ तक रूस पर शासन किया। उसने द्वितीय ऐलेक्जेन्डर के सुधारों को जारी रखने का आश्वासन दिया, पर साथ ही अपने को निरंकुश शासन का रक्षक भी कहता था। उसके मंत्री किसानों के लिये कुछ रियायतें करना चाहते थे; पर दक़ियानूसी विचार के लोगों

के कारण वह अपनी नीति में सफल नहीं हुए। जिला-कौंसिलों का विधान बदल दिया गया। अब उनमें जिमींदारों के ५,४३३ (यानी ५७ प्रति शत) प्रतिनिधि होते थे; म्यूनिसिपैलिटियों के १,२७३ प्रतिनिधि (यानी ३ प्रति सैकड़ा) होते थे। २,८१७ प्रतिनिधि गाँवों के होते थे। सरकार चाहती थी कि जिमींदार तथा जिला-कौंसिलों की कार्यकारिणी कमिटियाँ प्रान्तीय गवर्नरों के आधीन हो जावें।

प्रेसों पर लगाम लगा दी गयी, क्रान्तिकारी संस्थाओं को कुचला गया। दमन की भीषणता के कारण कुछ समय के लिये जनता चुप हो गयी। सन् १८७१ में भीषण अकाल पड़ा। सहस्रों मर्द, औरतें तथा बच्चे काल के मुँह में चले गये। आन्दोलन का पुनः श्रीगणेश हुआ। रूस के साम्यवादियों पर मार्क्स की छाप पड़ गयी। ग़ल्लों के सस्ता हो जाने के कारण किसानों की हालत दिन पर दिन बिगड़ रही थी। उन पर क़र्ज़ पर क़र्ज़ लद रहा था। सरकार नये नये टैक्स लगा रही थी। जैसे-जैसे उन्नीसवीं सदी का अन्त नजदीक आ रहा था, वैसे-वैसे किसानों की हालत बदतर हो रही थी।

१ नवम्बर, १८७४ को तृतीय एलेक्जेन्डर की मृत्यु हुई। वह उस समय ५० वर्ष का था। एक समय था जब वह ख़ूब हट्टा-कट्टा था, पर क्रान्तिकारियों के लगातार भय के कारण अब उसका स्वास्थ्य ख़राब हो गया था। क्रान्तिकारियों के डर के कारण वह गट्चिना में क़ैदी की भाँति रहता था। उसकी

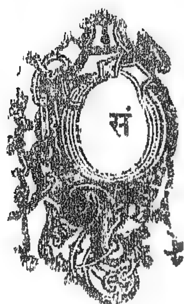
पुलिस उसे चौबीसों घण्टे चारों तरफ से घेरे रहती थी कि कहीं कोई क्रान्तिकारी उसे गोली न मार दे। क्रान्तिकारी आन्दोलन रूस में बढ़ रहा था—वह आन्दोलन जिसने २३ वर्ष बाद जारशाही का सदा के लिये अन्त कर दिया।

उसका उत्तराधिकारी द्वितीय निकोलस एक दुर्बल प्रकृति का पुरुष था। सन् १८९५ में उसकी शादी होने पर चारों तरफ से उसके पास बधाई देने डेपुटेशन आये। डेलीगेटों ने जार से कहा कि "जनता की आवाज़ सुनी जावे तथा भविष्य में क़ानून की इज्जत की जाया करे तथा क़ानून माने जाया करें—न केवल राष्ट्र द्वारा, वरन् शासकों द्वारा भी।" डेलीगेटों को उत्तर देते हुए जार ने कहा, "मुझे मालूम है कि उन लोगों द्वारा, जो देश के शासन में जेम्सटनों प्रतिनिधियों का भी भाग रहे, इस बात का स्वप्न देख रहे हैं, जेम्सट्नों की कुछ बैठकों में ऐसी आवाज़ें उठाई गयी हैं। सब को मालूम कर लेना चाहिये कि निरङ्कुश शासन की रक्षा करने का मेरा उतना ही पक्का इरादा है, जितना कि मेरे पिता का था।" दूसरे दिन एक खुली चिट्ठी में उसे उपर्युक्त घोषणा का उत्तर दिया गया। चिट्ठी में कहा गया था—"अपने सम्बन्ध में निरर्थक स्वप्न अब संभव नहीं है। यदि निरङ्कुशशाही अपने को व्यूरोक्रेसी नादिरशाही के समान घोषित करती है तो उसकी हार निश्चत.........वह स्वयम् अपनी क़ब्र खोद रही है.........आपने ही लड़ाई का आह्वान किया है और लड़ाई अब आवेगी।"

सच्च बात तो यह है कि लड़ाई तो पहिले ही आ चुकी थी। जून, १८९६ में पीटर्सबर्ग में पहली हड़ताल हुई जिसमें ३०,००० मजदूर शामिल थे। सन् १८९८ में रूसी सामाजिक लोकतंत्रीय मजदूर दल (The Russian Social Democratic Labour Party) की स्थापना की गयी। पुराने नेता शान्तिमय आर्थिक नीति को पसन्द न करते थे। 'स्पार्क' (चिनगारी) नामक पत्र में उन्होंने मार्क्स की राजनैतिक तथा क्रान्तिकारी नीति का समर्थन किया। सन् १९०३ में उनकी एक कॉन्फरेन्स लन्दन में हुई। उनके पक्ष में—जिनका नेता लेनिन था—कॉन्फरेन्स का बहुमत था। तत्पश्चात् बोल्शेविक दल की नींव रक्खी गयी। पाठकों को स्मरण रखना चाहिये कि बोल्शेविज्म माने बहुमत होता है। दूसरी तरफ, "पीपुल्स विल" (Peoples will) दल को स्वर्ग "सामाजिक क्रान्तिकारी" (Social Revoluntionaries) नाम से पुनः जीवित किया गया। यह पार्टी किसानों की क्रान्ति में तथा भयवाद (Terrorism) में विश्वास करती थी। दो वर्ष पश्चात् दक्षिणीय रूस में किसानों के विद्रोह शुरू हो गये। सन् १८९९ में विद्यार्थियों ने उपद्रव मचाये। शिक्षा-मंत्री बोगोलेपोव ने सैनिक नीति से काम लिया। २७ फरवरी, १९०१ को एक विद्यार्थी ने बोगेलपोव को सदा के लिये ठण्डा कर दिया। १५ अप्रैल को गृह-मंत्री सिपिआजिन मार डाला गया। प्लेहेव उसका उत्तराधिकारी बनाया गया। प्लेहेव के सम्मुख दो काम थे। किसानों के विद्रोह को दबाना और

साथ ही नरम दल के लोगों को शान्त करना। नरम दल वालों ने अपना "स्वतंत्रता सङ्घ" (Union for liberation) कायम कर रक्खा था। सन् १९०३ में ५,५९० लोगों पर राजनैतिक अभियोग लगाये गये थे। जुलाई १९०४ में प्लेहेव अपनी गाड़ी में बैठा हुआ जा रहा था। किसी ने उसका और साथ ही उसकी गाड़ी का अन्त कर दिया।

१९०५ की क्रान्ति



सार के इतिहास के पन्ने क्रान्तियों से भरे पड़े हैं। यदि आप उन क्रान्तियों का अध्ययन करें और उनके कारणों का पता लगावें तो आपको मालूम होगा कि उनके होने का एक ही कारण है, और वह है सर्व-साधारण का आर्थिक सङ्कट, थोड़े से पूँजीपतियों का सर्व-साधारण की गाढ़ी कमाई से फ़ायदा उठाना और सुख भोग करना तथा शासक-वर्ग का इन्हीं पूँजीपतियों का साथ देना। गत उन्नीसवीं सदी में ऐसी कितनी ही क्रान्तियाँ हुई हैं। साथ ही बीसवीं सदी में जो भीषण क्रान्ति हुई है, जिसने ४८ घण्टे के अन्दर ही रूस का तख़्ता उलट दिया और एक नए युग का श्रीगणेश किया, उसका कारण भी उपर्युक्त ही था। सन् १९१७ की रूस की क्रान्ति एक ऐसी क्रान्ति थी, जिसने रूस की ज़ारशाही का तो अन्त किया ही, साथ ही संसार के अन्य निरङ्कुश शासकों की भी कुम्भकर्णी निद्रा को तोड़ दिया। बल्कि एक तरह से तो इस क्रान्ति ने सारे संसार के पूँजीपतियों को सजग कर दिया।

रूस में इससे पहले, सन् १९०५ में भी एक क्रान्ति हुई थी, जिसका सरग़ना मोशिए लेनिन था। वह क्रान्ति भी आर्थिक

सङ्कटों के कारण ही हुई थी और महात्मा लेनिन के शब्दों में वह १९१७ वाली बड़ी क्रान्ति की भूमिका-मात्र थी। अस्तु, उन क्रान्तियों का हाल जानने से पहिले रूस के आर्थिक इतिहास के सम्बन्ध में थोड़ी सी जानकारी प्राप्त कर लेना आवश्यक है।

इन क्रान्तियों से पहले रूस में धनवानों और जमींदारों की तूती बोलती थी। वे देश की सम्पत्ति, व्यापार और भूमि के स्थायी स्वामी बन बैठे थे। मजदूर और किसान सवेरे से शाम तक मेहनत करके एड़ी-चोटी का पसीना एक करते थे; परन्तु उन्हें भर पेट भोजन और तन पर कपड़ा भी नसीब नहीं होता था; वरन् उलटे उन्हें उन धनिकों और जमींदारों के नित नए अत्याचारों का शिकार होना पड़ता था। उपजाऊ भूमि में से, जहाँ साधारण किसान के पास औसतन आठ या नौ एकड़ जमीन थी वहाँ आम तौर पर प्रत्येक जमींदार ८०,००० एकड़ जमीन का मालिक था। मोशिए लेनिन ने अपनी एक कृषि-सम्बन्धी प्रसिद्ध पुस्तक में बताया है कि रूस में ऐसे जमींदारों की संख्या ७०० थी और उनके पास सब मिला कर सारे रूस की उपजाऊ भूमि का तीन चौथाई हिस्सा था। इन ७०० जमींदारों के पास ६,००,००० किसानों से तिगुनी भूमि थी। ये जमींदार स्वयं तो बहुत थोड़ी अर्थात् एक पञ्चमांश जमीन जोतते-बोते थे और अधिकतर भूमि दूसरे किसानों को लगान पर दे दिया करते थे। १९वीं सदी के अन्त में काली भूमि के जमींदार अपनी भूमि का आधा हिस्सा और दूसरे प्रदेशों के जमींदार अपनी भूमि का ३० से ४० प्रति शत भाग

किसानों को मालगुजारी पर दे दिया करते थे। किसानों को बहुत लगान देना पड़ता था। बहुधा किसानों को, अपने उपार्जित अन्न का आधा भाग जमींदारों को दे देना पड़ता था। कहीं-कहीं किसानों को जमींदारों का बेगार भी करना पड़ता था। इसके सिवा उन्हें अपने हल से जमींदारों की भूमि भी जोत देनी पड़ती थी। ये जमींदार खेती के लिए आधुनिक वैज्ञानिक साधनों से काम नहीं लेते थे, क्योंकि उनका लक्ष्य होता था—किसानों से लगान वसूल करना।

किसानों की स्थिति बड़ी ही खराब हो रही थी। इनमें जो थोड़े से धनी थे, उनके पास भी अपनी खेती सुधारने के लिए साधन न थे। फलतः दिन प्रति दिन किसानों की आर्थिक हालत गिरती जाती थी। उनकी इस गिरती हुई आर्थिक स्थिति का अन्दाजा निम्न-लिखित अङ्कों से लगाया जा सकता है:—

यूरोपीय रूस के ५० प्रान्तों के किसानों के घोड़ों* की संख्या, सन् १८८८ से लेकर सन् १८९८ तक के दस वर्षों में, बहुत घट गई थी। सन् १८८८ में इन किसानों के पास १,९०,००,००० घोड़े थे। परन्तु सन् १८९८ में केवल १,७०,००,००० घोड़े रह गए। यानी इन दस वर्षों में २० लाख घोड़े घट गए थे। इसी भाँति बैल आदि की संख्या भी आलोच्य वर्षों में ३,४०,००,०००

*रूस में जोतने का काम बहुधा घोड़ों से लिया जाता है। इसके सिवा हमारे देश की तरह बैल भी व्यवहार में लाये जाते हैं। ये ही दो प्रकार के पशु रूसी किसानों की खेती के प्रधान अवलम्ब हैं।

से २,४०,००,००० हो गई थी, यानी दस वर्षों में १ करोड़ बैल आदि पशु घट गए थे। इन्हीं वर्षों में केन्द्रीय रूस के कई प्रान्तों की दशा और भी बदतर हो गई थी। वहाँ के जमींदार किसानों पर विशेष अत्याचार करते थे।

उन्नीसवीं सदी के अन्तिम तीस वर्षों में रूस के पूँजीपतियों ने बड़ी उन्नति की। तमाम देश में कल-कारख़ानों का जाल बिछ गया। किसी-किसी कारख़ाने में १०,००० तक मजदूर काम करते थे। इन वर्षों में यूरोप के अन्य देशों की अपेक्षा रूस ने अधिक उन्नति की। बीसवीं सदी के प्रारम्भ में कच्चे लोहे की पैदावार में तमाम संसार में, रूस का चौथा स्थान था। रूस में जितना कच्चा लोहा पैदा होता था, उतना ऑस्ट्रिया-हङ्गरी, बेलजियम और फ़ान्स मिल कर भी पैदा नहीं कर सकते थे। लोहे और कोयले की पैदावार में रूस ने संसार में सब से अधिक उन्नति की थी। तेल की पैदावार में केवल अमेरिका ही रूस का मुक़ाबला कर सकता था। सन् १८९० में अमेरिका रूस से अधिक तेल पैदा कर सकता था। परन्तु दस वर्षों में रूस ने इतनी उन्नति की कि सन् १८९९ में रूस अमेरिका से भी बाज़ी मार ले गया। इसके सिवा तेल भी वह अमेरिका से उत्तम पैदा करने लगा। रुई के उद्योग-धन्धे में बीसवीं सदी के प्रारम्भ में, रूस केवल अमेरिका तथा इङ्गलैण्ड से पीछे तथा अन्य सभी तमाम देशों से आगे था। इस तरह एक तरफ़ तो रूस में, बड़े पैमाने में उद्योग-धन्धों की उन्नति हो रही थी और दूसरी तरफ़ छोटे पैमाने के उद्योग-

धन्धों का नाश हो रहा था। उपर्युक्त उन्नति को सब से बड़ी सहायता रेल से मिली थी। प्रति वर्ष रूस में रेल का विस्तार बढ़ रहा था। सन् १८६० में यहाँ रेलवे लाइन १,२४० मील लम्बी थी; पर सन् १९०० में उसका विस्तार बढ़ कर २७,८१० मील तक पहुँच गया। रेल की जितनी उन्नति हो रही थी, उतनी ही उन्नति उससे सम्बन्ध रखने वाले उद्योग-धन्धों की भी हो रही थी। मजदूरी के सस्तेपन ने भी इस उन्नति में बड़ी सहायता की। इसके कारण पूँजीपतियों को अधिक लाभ होता था। पश्चिमी यूरोप के देशों की अपेक्षा रूस में मजदूरी की दर कहीं सस्ती थी। जब विदेशी पूँजीपतियों ने देखा कि रूस में पूँजी से अधिक लाभ उठाया जा सकता है तो उन्होंने भी वहाँ अपनी पूँजी लगाना आरम्भ कर दिया। फलतः बीसवीं सदी के प्रारम्भ में रूस में ६० करोड़ रूबल्स विदेशी पूँजी लगी हुई थी। यह पूँजी मुख्यतः फ्रान्स और जर्मनी की थी। विदेशी पूँजी के बल पर ही कोयले का धन्धा चल रहा था और एलेक्जेण्डर कारखाने की भाँति बहुत से कारखाने इसी विदेशी पूँजी पर निर्भर रहते थे। इन कारखानों में लाखों मजदूर काम करते थे। जिस तेज़ी से उन्नीसवीं सदी के अन्त में रूस ने उद्योग-धन्धे में उन्नति की, उसी तेज़ी से बीसवीं सदी के पहले दस वर्षों में उसने उसकी अवनति भी कर डाली। इस अवनति का बड़ा जबरदस्त कारण रूस की कृषि-अवनति थी। रूस की पैदावार बहुत कम हो गई। बीसवीं सदी के प्रारम्भ में किसान विशेषतः दरिद्र थे। जमींदार उन पर अधिक अत्याचार

कर रहे थे। पहले की अपेक्षा भूमि कम जोती-बोई जाती थी। किसानों के पास पहले की अपेक्षा बहुत कम जानवर थे। उनकी दीन-हीन दशा रूस के उद्योग-धन्धों में उन्नति नहीं होने देती थी।

बीसवीं सदी के प्रारम्भ में रूस के मजदूरों में घोर असन्तोष फैल रहा था। वे अपनी स्थिति से पूर्णतया असन्तुष्ट थे और उस का सुधार करना चाहते थे। उन्होंने घोर आन्दोलन करना आरम्भ किया। इस आन्दोलन ने शासकों को चिन्तित कर दिया। वे उसे दबाना चाहते थे, पर समर्थ नहीं हुए। अतएव उन्होंने एक नई तरकीब सोची। आन्दोलन को शान्तिमय तथा वैध बनाए रखने का प्रयत्न किया। मजदूर अपना असन्तोष प्रकट करने के लिए भले ही आन्दोलन करते रहें, परन्तु वह शान्तिमय तथा वैध हो। रूस के खुफिया-पुलिस के प्रधान ने, जिसका नाम सबटव था, क़ानूनी सङ्घों की स्थापना की। वे सङ्घ उसी के नामानुसार 'सबटव सङ्घ' के नाम से प्रसिद्ध थे। इन अर्द्ध सरकारी सङ्घों का काम देश के मजदूरों को अपने में शामिल किए रहना और उनके आन्दोलन का स्वयं सञ्चालन कर उसे शान्तिमय बनाए रखना था। देश भर में इन सङ्घों की शाखाएँ थीं। इनके अपने क्लब थे, जिनमें मजदूर निःशुल्क शामिल हो सकते थे। खुफिया-पुलिस इनकी रक्षा करती थी और खर्च के लिए धन देती थी। इन क्लबों में मजदूरों के लाभ के लिए व्याख्यान दिए जाते थे। मजदूरों को वहाँ बहुत से मनोरञ्जन के सामान भी मिलते थे। चूँकि जो मजदूर इन 'सबटव सङ्घों' के सभासद थे, वे हड़तालों में भाग लेते थे, अतएव इन

सङ्घों को भी हड़तालों में भाग लेना पड़ता था। सबटव की योजना थी कि उसके सङ्गठन के नेता मजदूरों को शान्तिमय बनाए रहें और मजदूरों के प्रति रियायत करने के लिए मालिकों पर जोर डालें। ये रियायतें कुछ महत्व भले ही न रखती हों, पर वे ऐसी अवश्य हों, जिनसे मजदूर प्रसन्न रह सकें। सन् १९०२ की १९ वीं फरवरी को मॉस्को के सबटव-सङ्घ ने मजदूरों के एक प्रदर्शन का सङ्गठन किया। इस प्रदर्शन में दस हजार से अधिक मजदूर शामिल हुए थे। मजदूरों को फाँसने के लिए सरकार ने जो यह जाल बिछाया था, उसका अन्त क्रान्ति ही ने किया।

दक्षिण में खुफ़िया-पुलिस को और भी कम सफलता मिली। क्योंकि वहाँ जो मजदूर सबटव-सङ्घ में शामिल हुए थे, वे हड़ताल आन्दोलन में उन सारे सङ्घों को घसीट लाए। सन् १९०३ के हड़ताल-आन्दोलन में मजदूरों ने सबटव-सङ्घों पर पूरा अधिकार कर लिया। फलतः दक्षिण में ये सङ्घ अपने कार्य में इतने असफल रहे, कि शाएविच नाम के एक सबटव-एजेण्ट को देश-निकाले की सजा दी और उसी समय से सबटव स्वयं सरकार की नजरों से गिर गया।

पुलिस द्वारा मजदूर-आन्दोलन को रोकने का सब से बड़ा केन्द्र पिटर्सबर्ग था। वहाँ का पादड़ी गपन खुफ़िया-पुलिस का एजेण्ट था। खुफ़िया-पुलिस गपन की सहायता करती थी। वह मनमानी सभाएँ कर सकता था। सङ्गठन का खर्च चलाने के लिए पुलिस उसे रुपए देती थी। गपन को अपने निजी

खर्चे के लिए भी पुलिस से रुपए मिलते थे। गपन के सङ्घ ने अपना कार्य सन् १९०३ से प्रारम्भ किया। उसका जाल अनेक ज़िलों में फैल गया। वीबर्ग, वसीलियन्च, नेवस्की, कलमस्क, नर्व, मॉस्को, कलपिनव, सेसट्रो आदि ज़िलों में उसकी शाखाएँ थीं। सन् १९०४ के दिसम्बर में ४ मजदूर बरख़ास्त किए गए। ये गपन-सङ्घ के सभासद थे। अतएव सङ्घ की ओर से एक डेपुटेशन डाइरेक्टर के पास भेजा गया। इस डेपुटेशन ने डाइरेक्टर से प्रार्थना की, कि बरख़ास्त किए हुए मजदूर पुनः बहाल कर दिए जावें। परन्तु डेपुटेशन की प्रार्थना स्वीकार नहीं की गई। गपन ने डाइरेक्टर तथा पुलिस के प्रधान से बार-बार प्रार्थना की, पर उसका कुछ भी परिणाम न हुआ। इसलिए लाचार होकर गपन-सङ्घ के मजदूरों ने हड़ताल करने का विचार किया।

पहिली जनवरी को सङ्घ ने पुटीलन के कारख़ाने में हड़ताल करने का निश्चय किया। निकाले हुए मजदूर यहीं काम करते थे। तीसरी जनवरी को हड़ताल हो गई। मजदूरों की मुख्य माँगें ये थीं :— (१) प्रतिदिन आठ घण्टे से अधिक काम न करना, (२) पुरुषों के वेतन में ६६ फ़ी सदी तथा औरतों के वेतन में १०० फ़ी सदी तरक्क़ी, और (३) कारख़ानों में स्वास्थ्य-वर्धक प्रबन्ध। देखते-देखते इस हड़ताल ने विशाल रूप धारण कर लिया। बात की बात में अनेक और कारख़ानों में हड़तालें हो गईं। यहाँ तक कि पिटर्सबर्ग के तमाम मजदूरों ने, जिनकी संख्या

१ लाख ५० हजार थी, हड़ताल कर दी। इन हड़ताल करने वालों में प्रेस के कर्मचारी तक शामिल थे, इसलिए इस हड़ताल के कारण पिटर्सबर्ग से अखबार तक न निकल सकते थे।

गपन के प्रस्ताव के अनुसार मजदूरों ने जार के भवन तक जुलूस ले जाने का निश्चय किया। गपन ने एक ओजस्वी भाषण द्वारा मजदूरों को उत्साहित करते हुए उन्हें खूब ही सब्ज-बाग दिखलाया। उसने यहाँ तक कह डाला कि यदि जार हमारी प्रार्थना न सुनेंगे, तो हम लोग जार से कोई सरोकार न रक्खेंगे।

९वीं जनवरी को मजदूरों का जुलूस नर्व से रवाना हुआ। गपन उसका सञ्चालक था। जुलूस में लाल झण्डा एक भी न था। गिरजाघरों के झण्डे और सब से आगे थी जार की तस्वीर। जुलूस धीरे-धीरे अपने मार्ग में बढ़ रहा था। सरकार की तरफ से भी काफी प्रबन्ध था। ८वीं जनवरी की रात को जार ने ९वीं जनवरी के लिए ग्राण्ड ड्यूक व्लाडीमियर को डिक्टेटर नियुक्त कर उसे निरङ्कुश अधिकार दे दिया। जनता को शान्त रखने का उसे आदेश दे दिया गया था। वह जनता के विरुद्ध अपनी तमाम सेना का प्रयोग कर सकता था। पिटर्सबर्ग में इतनी सेना इकट्ठी की गई थी कि तमाम शहर में सेना ही सेना दिखाई पड़ती थी।

जब जुलूस कुछ दूर जा चुका, तो उसे सामने सेना खड़ी हुई दिखाई दी। किसी ने जुलूस को नहीं रोका और जुलूस बढ़ता गया। परन्तु जब वह सेना के नजदीक पहुँचा तो एकाएक

घुड़सवारों ने उस पर हमला कर दिया। जब घुड़सवार जनता को पीटते हुए जुलूस के उस पार पहुँच गए, तब इस पार जनता पर गोलियाँ चलाई गईं। इसके बाद फिर घुड़सवारों ने हमला किया। भागते हुओं के सिर धड़ से अलग कर दिए गए। जो घायल थे, मौत के घाट उतार दिए गए। गपन ने येन-केन-प्रकारेण अपनी रक्षा की। यह क़त्लेआम कुछ समय तक जारी रहा। स्चलसेलबर्ग में भी मजदूरों पर गोली चलाई गई। मजदूर छाती खोल कर खड़े हो गए और कहने लगे—"हम लोग जान दे देंगे, पर एक इञ्च भी पीछे न हटेंगे।"

अब जरा ट्राट्ज के पुल का भी हाल सुन लीजिए। जब जुलूस सेना के बिल्कुल पास पहुँच गया, तब सेनापति ने हुक्म दिया—'फ़ायर!' उसके मुँह से आज्ञा निकलते ही घुड़सवारों ने कार्य आरम्भ कर दिया। मजदूर औरतें, बच्चे तथा बूढ़े जमीन पर पड़े दिखाई देने लगे।

वासीलिवस्की द्वीप में मजदूरों ने दूसरा ही ढङ्ग अख्तियार किया। उन्होंने सरकारी स्थानों को तोड़-फोड़ डाला और घुड़सवारों पर ईंटें, पत्थर तथा गोलियाँ चलाईं।

९ वीं जनवरी के हत्याकाण्ड के विरोध में समस्त रूस के मजदूरों ने हड़ताल कर दी। अनेक स्थानों पर मजदूरों और पुलिस तथा सेना में सङ्घर्ष हुआ।

अब तक रूस के किसानों तथा मजदूरों का जार पर बहुत कुछ विश्वास था। वे जार को निर्दोष समझते थे और समझते थे कि

इन सारे अत्याचारों के उत्तरदायी जार के अफसर ही हैं। उनका यह भी विश्वास था कि जार को उनके कष्टों का पता नहीं है। अन्यथा वे अवश्य ही उनके कष्ट दूर कर देते। परन्तु ९ वीं जनवरी की घटना ने उनकी आँखें खोल दीं। उनकी अज्ञानता, विश्वास तथा आशा पर पानी फिर गया। जार पर से सदा के लिए उनका विश्वास उठ गया और उन्होंने अपने पाँव पर खड़ा होना सीख लिया। ९ वीं जनवरी के पश्चात् रूस की जनता ने जारशाही का अन्त करने का निश्चय कर लिया। रोजा लक्जमबर्ग ने ठीक ही कहा था कि ९ जनवरी वाले मजदूरों के प्रदर्शन के चारों तरफ कार्ल मार्क्स की आत्मा मँडरा रही थी, यद्यपि उसके आगे-आगे गिरजाघर के झण्डे तथा जार की तस्वीर थी।

मजदूरों के आन्दोलन ने ९ जनवरी के पश्चात् विशाल रूप धारण कर लिया। जनवरी से लेकर अक्टूबर तक के महीने आन्दोलन के लिये बहुत महत्वपूर्ण थे। इन महीनों में प्रत्येक दिवस तथा प्रत्येक सप्ताह आन्दोलन बढ़ रहा था। प्रतिदिन सैकड़ों की संख्या में मजदूर शामिल होते रहे। यहाँ तक कि सन् १९०५ के मध्य तक रूस के तमाम मजदूर आन्दोलन में भाग लेने लगे। इस आन्दोलन के दो रूप थे। पहिला रूप राजनैतिक था और जारशाही का अन्त करना चाहता था तथा दूसरा रूप आर्थिक था और मिल-मालिकों को ठिकाने लगाना चाहता था। मजदूरों की सब से बड़ी राजनैतिक माँग यह थी कि विधान-विधायिनी

सभा शीघ्र बुलाई जावे। प्रतिदिन आठ घण्टे से अधिक काम न लेने की उनकी सब से बड़ी आर्थिक माँग थी।

रूस के अनेक जिलों—विशेषतः पोलैण्ड में—मजदूरों ने जार-शाही के विरुद्ध हथियार उठा लिए। गर्मियों में इवानबवसनेसेंस्क में हड़ताल हुई। ५०,००० मजदूर इस हड़ताल में शरीक हुए थे। हड़ताल एक सप्ताह तक जारी रही। शहर में मजदूरों को सभा करने की आज्ञा न थी। अतएव उन्होंने टल्का नदी के किनारे अपनी सभा की। पूँजीपति उनके साथ कुछ रिआयत करने को तैयार थे; परन्तु मजदूरों की मुख्य माँगों को वे अनसुनी कर रहे थे। इधर मजदूरों को दानों के लाले पड़ने लगे और उनके बाल-बच्चे भूखों मरने लगे, अतः मजदूर अपने कामों पर वापस चले गए। परन्तु उन्होंने पूँजीपतियों से साफ़ कह दिया, कि यद्यपि हम वापस आ रहे हैं,परन्तु हम अपने को पराजित नहीं समझते।

इस बढ़ते हुए आन्दोलन से सहम कर तथा उसे शान्त करने के लिए जार ने कुछ रियायतें कीं; परन्तु ये रियायतें नितान्त निस्सार थीं, इसलिए मजदूरों ने उनकी पूरी अवहेलना की। जार ने 'सिनेटर शिदलोवस्की कमीशन' नियुक्त किया। इसका काम था, मजदूरों की नाराजगी के कारणों को मालूम करना। जार ने एक और 'बलिजिन कमीशन' नियुक्त किया। इस कमीशन का कार्य था, स्टेट ड्यूमा बुलाने के लिये एक योजना तैयार करना। इस ड्यूमा को केवल बहस करने का अधिकार था, क़ानून बनाने का नहीं।

मजदूर इन रिआयतों से बिल्कुल सन्तुष्ट न हुए। उन्होंने उनकी फिर अवहेलना की। अब मजदूरों ने अपने आन्दोलन को किसानों में फैलाना आरम्भ किया। दो महीने के अन्दर ही केन्द्रीय रूस, पोलैण्ड, पश्चिमीय सूबों, बाल्टिक तथा कॉकेशस के किसानों में आन्दोलन फैल गया। अमीर-ग़रीब—सभी किसान—आन्दोलन में भाग लेने लगे। ३१ जुलाई को मॉस्को में 'अखिल रूसी-किसान-सङ्घ' की प्रथम गुप्त कॉङ्ग्रेस हुई। किसानों के आन्दोलन के भी, मजदूर-आन्दोलन की भाँति दो रूप थे—(१) आर्थिक और (२) राजनैतिक। किसान आन्दोलन के अगुआ वे किसान थे, जो किसी समय सेना में काम कर चुके थे। जिन किसानों ने रूस की सेना में भरती होकर, रूस-जापान युद्ध में भाग लिया था, वे पराजित होकर अपने-अपने घर लौट आए थे। वे ही इस आन्दोलन में सब से अधिक दिलचस्पी ले रहे थे।

सन् १९०५ की गर्मियों में काले सागर में एक रूसी बेड़ा पड़ा था। इसी बेड़े के 'पोटेम्किन' नाम के एक 'क्रूजर' ने आर्थिक सङ्कटों के कारण १४ जून को विद्रोह कर दिया। क्रूजर के खेने वालों ने अपने अफ़सरों को पकड़ लिया, अपनी राजनैतिक माँगें पेश की और ओडेसा के हड़तालियों के साथ अपनी सहानुभूति दिखलाई। 'पोटेम्किन' का एक मल्लाह एक अफ़सर द्वारा मार डाला गया। उसको गाड़ने के लिए वे लोग किनारे आए। अपना कार्य समाप्त कर वे पुनः समुद्र में चले

गए। इस विद्रोह को दबाने के लिए सरकार ने एक बेड़ा भेजा। १७ जून को क्रूजर की इस बेड़े से भेंट हुई। 'पोटेम्किन' बेड़े तक खेता चला गया और दूसरे जहाजों के मल्लाहों से विद्रोह में शामिल होने के लिए कहा। उस बेड़े के एक बड़े जङ्गी जहाज ने 'पोटेम्किन' का साथ दिया; पर वह अधिक काल तक विद्रोह न कर सका और बहुत शीघ्र विद्रोह से विमुख होना पड़ा। कुछ दिनों बाद 'पोटेम्किन' ने भी आत्म-समर्पण कर दिया! कुछ लोग गिरफ़ार कर लिए गए और कुछ भाग गए और उनका पता न चला।

उपर्युक्त घटना अपने ढङ्ग की पहिली घटना थी। यद्यपि यह विद्रोह असफल रहा, तथापि यह बड़ा ही महत्वपूर्ण था।

सन् १९०५ की सब से महत्वपूर्ण घटना अक्टूबर की हड़ताल थी। इस हड़ताल का श्रीगणेश मॉस्को से हुआ था, जहाँ के मजदूर हड़ताल करने में सब से आगे थे। सितम्बर के अन्त में मॉस्को के प्रेस-कर्मचारियों ने हड़ताल कर दी। प्रतिदिन हड़ताल फैलने लगी और कर्मचारियों के नए-नए समुदाय हड़ताल में आने लगे। ब्रेस्टर रेलवे में हड़ताल हुई। २० सितम्बर को स्टेट रेलवे के कर्मचारियों की कॉङ्ग्रेस पिटर्सबर्ग में हुई। रूस की सरकार इस कॉङ्ग्रेस से बहुत भयभीत थी और उसके कार्यों को पसन्द नहीं करती थी। उसने कॉङ्ग्रेस के डेलीगेटों को गिरफ़ार कर लिया। जब मॉस्को में इस गिरफ़ारी की खबर पहुँची, तो रेलवे के तमाम मजदूरों ने हड़ताल कर दी और विद्रोह की तैयारी करने लगे।

सातवीं अक्टूबर, १९०५ को कज़न रेलवे का चलना बन्द हो गया और कुछ दिनों के अन्दर मॉस्को की तमाम रेलों का काम एकदम रुक गया। अन्त में जब डाक और तार के कर्मचारियों ने भी हड़ताल कर दी, तो वह और भी भीषण हो गया। धीरे-धीरे मॉस्को से पिटर्सबर्ग तक रेलवे की हड़ताल फैल गई। कुछ ही दिनों के बाद यह इतनी विस्तृत हो गई की रूस में कोई भी ऐसा औद्योगिक केन्द्र अथवा कारख़ाना न था, जहाँ के मजदूर इस हड़ताल में शामिल न हों। रेलगाड़ियों का आना-जाना बन्द था। तार भी रुक गए। अख़बार बन्द हो गए। रोशनी का कोई प्रबन्ध नहीं रहा। प्रतिदिन प्रदर्शन होता था, जिसमें जनता हज़ारों की तादाद में शरीक होती थी। प्रति-दिन स्थान-स्थान पर सभाएँ होती थीं। प्रदर्शनों तथा सभाओं की मानो रूस में आँधी-सी आ गई थी। प्रदर्शन या सभा के पश्चात् बहुधा जनता तथा पुलिस या सैनिकों में सशस्त्र सङ्घर्ष भी हो जाते थे। सड़कों पर, स्थान-स्थान पर सरकार की तरफ़ से मार्ग बन्द कर दिए गए थे कि जुलूस न निकल सके। कई स्थानों में, जहाँ रास्ता बन्द कर दिया गया था, जनता तथा पुलिस में लड़ाई हो गई। १० अक्टूबर को खारकोव में, ११ अक्टूबर को यकटिरिनोस्लो और १६ अक्टूबर को ओडेसा में यही हुआ।

१३ अक्टूबर को 'सोवियट ऑफ़ वर्कर्स डिपुटीज़' की प्रथम बैठक पिटर्सबर्ग में हुई और बहुत शीघ्र यह सोवियट केवल पिटर्सबर्ग ही नहीं, बल्कि तमाम रूस का नेता बन गया। इस

हड़ताल-आन्दोलन को देख कर सरकार के होश उड़ गए। वह प्रतिदिन भीषण होता जाता था। सरकार ने उसे दबाने के अनेक उपाय किए, परन्तु सफलता उससे कोसों दूर थी। अतः उसे झुकना पड़ा। १७ अक्टूबर को जार ने एक मैनिफ़ेस्टो निकाल कर जनता को राजनैतिक स्वतंत्रता देने का आश्वासन दिया और लेजिस्लेटिव एसेम्बली या स्टेट ड्यूमा बुलाने की घोषणा की।

परन्तु रूस के हड़तालियों ने इस जाल में फँसने से इन्कार कर दिया और अपना कार्य जारी रक्खा। "वर्कर्स डिफ़रीज सोवियट न्यूज़" ने अपने २० अक्टूबर के अङ्क में उपर्युक्त मैनिफ़ेस्टो की चर्चा करते हुए लिखा था—"अन्त में हम लोगों को विधान दे दिया गया है! हम लोगों को वैध स्वतन्त्रता है, पर एसेम्बली सैनिकों से घिरी रहेगी। हम लोगों को बोलने की स्वतन्त्रता है, पर सेन्सर जैसा का तैसा बना है। हम लोगों को शिक्षा की स्वतन्त्रता है, पर विश्वविद्यालयों में अब भी सैनिक मौजूद हैं। हम लोगों को व्यक्तिगत स्वतन्त्रता है, पर जेलखाने क़ैदियों से खचाखच भरे हैं। हम लोग विधान पा गए हैं, पर निरङ्कुश शासन भी मौजूद है। हम लोगों को सब कुछ दिया गया है और कुछ भी नहीं।"

क्रान्ति के नेता चाहते थे कि आन्दोलन बन्द न किया जावे। जब लेनिन ने मैनिफ़ेस्टो का हाल सुना तो उसने लिखा—"नरम-विचार के धनी लोगों को यह समझ लेना चाहिए कि मैनिफ़ेस्टो

में केवल शब्द तथा वादे हैं; पर अब केवल वचनों में कौन विश्वास करता है ? जार के वादे को कौन पूरा करेगा ?...... क्या जनता ने स्वतन्त्रता के युद्ध में अपना रक्त बहाया है, अपने को ब्यूरोक्रेसी के हाथों में सौंप देने के लिए और केवल शब्दों और वादों में बदल जाने के लिए ? नहीं, जारशाही घुटने टेकने से अभी बहुत दूर है। निरङ्कुश शासन अभी अटल है। क्रान्ति के कार्यकर्ताओं को अभी अनेक लड़ाइयाँ लड़नी हैं। उनकी प्रथम विजय उनकी शक्ति को बढ़ाएगी और युद्ध के लिए नए साथी तैयार करेगी।"

उपर्युक्त विचारों से प्रभावित होकर मजदूरों ने १७ अक्टूबर के बाद भी हड़ताल जारी रक्खी। परन्तु भावी युद्ध की तैयारी करने के लिए अवकाश की आवश्यकता थी। अतः पिटर्सबर्ग के मजदूरों की कौन्सिल ने २१ अक्टूबर को हड़ताल-आन्दोलन बन्द करने का निश्चय किया और कुछ दिनों के अन्दर ही हड़तालों का अन्त हो गया।

१७ अक्टूबर के मैनिफेस्टो के बाद नरम दल के धनी लोग सरकार की तरफ़ हो गए और मजदूरों के विरोधी बन गए। वे अधिक आर्थिक हानि सहने को तैयार न थे।

अक्टूबर की हड़ताल के बाद किसानों में भी आन्दोलन शुरू हुआ। वे अपनी स्थिति से पहिले से ही असन्तुष्ट थे। उन्होंने उसे सुधारने के लिए आन्दोलन आरम्भ किया। इस आन्दोलन ने भी शीघ्र ही अत्यन्त भीषण रूप धारण कर लिया। केन्द्रीय

रूस, बाल्टिक, पोलैण्ड और काकासस के गाँवों में तहलका मच गया। किसानों ने जमींदारों की सम्पत्ति लूट ली। उनकी जायदादें नष्ट-भ्रष्ट कर दीं, जमींदार लोग अपने-अपने गाँव छोड़ कर प्राण लेकर भाग गए। इस आन्दोलन में जमींदारों के लगभग २,००० मकान आदि नष्ट कर दिए गए थे। काकासस प्रदेश में किसान आन्दोलन ने राजनैतिक जामा पहन लिया था। अनेक स्थानों में किसानों और मजदूरों में घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित हो गया था। १९०७ की ७ वीं नवम्बर को अखिल रूस किसान-सङ्घ की दूसरी कांग्रेस हुई। इसने मुख्य-मुख्य आर्थिक समस्याओं को हल किया और आवश्यक राजनैतिक माँगें पेश कीं।

क्रान्ति की लहर सेना में भी जा पहुँची। नवम्बर के मध्य में पिटर्सबर्ग की सेना की कई टुकड़ियों में उत्पात मचने लगा। जनवरी के मध्य में काले सागर के एक बेड़े ने विद्रोह का झण्डा ऊँचा कर दिया। "ओट्स्चकव" नाम के एक क्रूजर ने १५ नवम्बर को विद्रोह किया। इस विद्रोह का नेता स्चमिड्ट था। बलवाइयों ने क्रूजर पर लाल झण्डा खड़ा कर दिया। और भी अनेक जहाजों ने "ओट्स्चकव" का अनुकरण किया। स्चमिड्ट ने ज़ार के पास तार भेज कर विधान-विधायिनी सभा की माँग पेश की। पर यह विद्रोह भी शीघ्र दबा दिया गया।

मजदूरों की माँगें और भी अधिक हो गईं। उन्होंने अपना जबरदस्त सङ्गठन किया। नवम्बर के महीने में कई नगरों में

मजदूर-सोवियटों की स्थापनाएँ की गई। २२ नवम्बर को मॉस्को के मजदूरों की सोवियट की पहली बैठक हुई। इसमें ८०,००० मजदूरों के १८० प्रतिनिधि शरीक हुए थे। पिटर्सबर्ग के मजदूरों की सोवियट सब से आगे थी। यही सोवियट रूस के तमाम मजदूरों की पथ-प्रदर्शिका और सन् १९०५ की क्रान्ति की अगुआ थी। जनवरी के अन्त तक पिटसबर्ग के मजदूरों ने क्रान्ति में सब से अधिक भाग लिया था। अक्टूबर और नवम्बर के महीनों में पूँजीपतियों तथा जार के विरुद्ध पिटर्सबर्ग के मज़दूरों ने घोर युद्ध किया। वे दो बातें चाहते थे। प्रथम तो दिन में आठ घण्टे से अधिक काम न करना और द्वितीय, दूसरी राजनैतिक आम हड़ताल।

३१ अक्टूबर को सोवियट ने काम करने का समय प्रतिदिन आठ घण्टे कर देने के लिए युद्ध करना निश्चय किया। मजदूरों ने पूँजीपतियों के सामने अपनी माँगें रक्खीं और आठ घण्टे काम कर चुकने के बाद वे काम करने से इन्कार करने लगे। जिन मिलों और कारखानों के मालिकों ने उनका विरोध किया, वहाँ उन्होंने हड़ताल कर दी। मजदूरों के इस रुख को पूँजीपति सहन न कर सके। उन्होंने बदला लेना आरम्भ कर दिया। अपनी मिलें और कारखाने बन्द कर दिए और झुण्ड के झुण्ड मजदूरों को निकाल दिया। यही नहीं, उन्होंने मजदूरों की तनख्वाहें भी दबा लीं।

पूँजीपतियों के इस विकराल दमन ने मजदूरों की हिम्मत को

पस्त कर दिया। अनेक स्थानों पर उन्होंने घुटने टेक दिए और काम पर लौट गए। अतः सोवियट ने भी आन्दोलन स्थगित कर दिया। इस आन्दोलन के असफल होने का सब से बड़ा कारण यह था कि इसका सारा बोझ केवल पिटर्सबर्ग के मजदूरों पर था, देश के और मजदूर हाथ खींचे बैठे थे।

पिटर्सबर्ग के मजदूरों की सोवियट का दूसरा काम था, आम हड़ताल! यह हड़ताल पहली से सातवीं नवम्बर तक रही। इस हड़ताल के दो राजनैतिक कारण थे। २६ अक्टूबर को क्रान्स-टाड्ट की सेना ने विद्रोह कर दिया। इस विद्रोह के नेता सैकड़ों सैनिक तथा मल्लाह थे। उन सब पर कोर्ट-मार्शल में मुक़दमा चलाया गया। २९ अक्टूबर को पोलैण्ड में सरकार ने मार्शल-लॉ की घोषणा की। उपर्युक्त दोनों घटनाएँ ही हड़ताल की जन्म-दात्री थीं। इस हड़ताल में मजदूरों ने अपूर्व एकता दिखलाई। लाखों मजदूरों ने इसमें भाग लिया था।

५ नवम्बर को सोवियट के आदेशानुसार डाक और तार के कर्मचारियों ने भी हड़ताल कर दी।

पर रूस की जारशाही अभी मजबूत थी। मजदूरों का सामना करने को मुस्तैद थी। सरकार ने सोवियट को कुचलने का निश्चय किया। वह सोवियट को ही सब अनर्थों की जड़ समझती थी। सोवियट में इतनी शक्ति थी कि हड़ताल के समय स्टेट-रेलवे जार की सरकार का कहना न मान कर, सोवियट की आज्ञा का पालन करती थी। प्रेस, जिनमें तमाम अखबार तथा सरकारी पत्र

आदि छपते थे, सोवियट के कहने पर ही चलते थे। सोवियट के कहने पर ही फैक्टरियों ने अपना काम बन्द कर दिया। नगर को पानी मिलना सोवियट की इच्छा पर निर्भर था। ट्राम्वे तक उस की आज्ञा बिना नहीं चल सकती थीं। सेनाएँ भी जार के विरुद्ध होती जाती थीं और सोवियट से सहानुभूति रखती थीं। क्या सोवियट ज़ार की सरकार के विरुद्ध एक नवीन सरकार की नींव रख रही थी?

अतः ज़ार की सरकार ने सोवियट को मटियामेट करने की ठान ली। घोर दमन से काम लेना आरम्भ किया। मज़दूरों की सभाएँ भङ्ग कर दी जाती थीं। क्रान्ति के जितने नेता थे, सब के सब गिरफ़्तार कर लिए गए। पुलिस अंधाधुन्ध अत्याचार करने लगी। परन्तु सरकार के इस दमन को देख कर भी पिटर्सबर्ग की सोवियट विचलित नहीं हुई। उसने सरकार को और भी तङ्ग करना आरम्भ किया। २२ नवम्बर को उसने सरकार का आर्थिक बायकॉट करने का निश्चय किया। उसने मज़दूरों को बैङ्कों से अपने-अपने रुपए वापस ले लेने को कहा और आदेश दिया कि मज़दूर अपनी तनख़्वाहें सोने के रूप में माँगें। सरकार ने इस नवीन आक्रमण के उत्तर में सोवियट के चेयरमैन को पकड़ लिया। फलतः २७ नवम्बर को सोवियट ने सशस्त्र विद्रोह करने का निश्चय किया।

ज़ार की सरकार ने भी आन्दोलन को दबाने के लिए अनेक उपायों से काम लिया। ३री दिसम्बर को सोवियट की बैठक हो रही

थी। सरकार ने, जितने मेम्बर बैठक में भाग ले रहे थे, सब को गिरफ़्तार कर लिया। इधर मजदूरों की सोवियटों ने राजनैतिक आम हड़ताल करवाने का निश्चय कर लिया। ८ दिसम्बर को पिटर्सबर्ग की सोवियट ने हड़ताल करवाई। मॉस्को की सोवियट ने ७ दिसम्बर को हड़ताल कर दी। अब तक पिटर्सबर्ग के मजदूर ही हड़तालों का सञ्चालन करते आए थे, पर अब उनमें पुरानी शक्ति न रह गई थी, अतः वे हड़ताल को सफल बनाने में सफल नहीं हुए। अब मॉस्को के मजदूर आगे आए और उन्होंने जोरों की हड़ताल की। ६ दिसम्बर को १,५०,००० मजदूर मॉस्को की हड़ताल में शामिल थे। वहाँ का गवर्नर जनरल स्थिति की गम्भीरता को समझ रहा था। उस समय मॉस्को में सेना नहीं थी और जो थी, वह विश्वसनीय नहीं थी। सरकार आन्दोलन को शीघ्र ही दबा देना चाहती थी, ताकि वह अधिक बढ़ न सके। ८ दिसम्बर को स्थान-स्थान पर मजदूरों की सभाएँ हो रही थीं। सरकारी सेनाओं ने इन सभाओं को जा घेरा। ऐसी एक सभा फ़्लीडर इण्डस्ट्रियल सेकेण्डरी स्कूल में हो रही थी। पुलिस और सेना ने सभा-स्थल पर धावा किया। सभा-भङ्ग की आज्ञा देकर लोगों को वह स्थान ख़ाली कर देने को कहा। सभा में जो डेलीगेट उपस्थित थे, उन्हें पुलिस ने पौन घण्टे का समय दिया। इसके बाद उन्हें सभा-स्थल से चले जाने को कहा गया। डेलीगेट आपस में सलाह करते रहे। तत्पश्चात् एक मत से पुलिस कमाण्डर—रचमनिनोव—से स्पष्ट कह

दिया कि वे पुलिस की आज्ञा मानने को तैयार नहीं हैं। रचमनिनोव ने उन्हें पुनः विचार करने के लिए दस मिनट का समय दिया और उसके पश्चात् सभा-भवन पर गोली चलाने की धमकी दी। दस मिनट भी समाप्त हो गए और सभा-भवन खाली नहीं हुआ। उसके बाद का हाल एक ऐसे सज्जन के शब्दों में, जो वहाँ उस समय उपस्थित थे, यों है :—

"अन्तिम बिगुल की प्रतिध्वनि अभी विलीन भी न हो पाई थी कि आज्ञा दी गई—"कम्पनी एटेन्शन!" दूसरी मञ्जिल की खिड़कियों पर निशाना लगाओ—एक लहमे की खामोशी—फ़ायर। गोलियों की एक बौछार! शीशों का टूटना और उत्तर के खिड़कियों से गोलियों की वर्षा। यद्यपि मैंने तब तक युद्ध में भाग नहीं लिया था; पर मैं समझ गया कि लड़ाई में भाग लेने का मौक़ा आ गया है। मेरे चारों तरफ़ गोलियाँ सनसन कर रही थीं। रचमनिनोव ने तोपखाने को आज्ञा दी। शब्दों में यह नहीं बताया जा सकता कि हम लोगों पर, ऊँची इमारतों के बीच में घिरे हुए इन तोपखाने की गोलियों का क्या असर हुआ।.........इमारतों से गोलियों की भीषण वर्षा, घायल सैनिकों और पुलिस का कराहना, सर्वत्र रक्त का बहना, अपने साथियों को घायल देख कर सैनिकों का अपार क्रोध!

"एकाएक एक खिड़की खुली और एक वस्तु बाहर आती हुई दिखाई दी। प्रत्येक पुरुष चिल्ला उठा—'बम-बम!'.............तत्पश्चात् शीघ्र ही कोई भीतर से चिल्ला उठा—'हम लोग

आत्म-समर्पण करते हैं।'........तब गोली चलनी बन्द हुई और हारे हुओं ने इमारत छोड़ दी।"

अक्टूबर के मैनिफ़ेस्टो के बाद यह पहला ही अवसर था, कि राजनैतिक प्रश्नों पर विचार करने के लिए इकट्ठे हुए शान्तिमय नागरिकों पर गोली चलाई गई थी। इस घटना से ही सशस्त्र विद्रोह का श्रीगणेश हुआ। १० दिसम्बर को मॉस्को की सड़कों पर बमबार्जी की गई। शान्तिमय सभाएँ राइफ़ल की गोलियों से भङ्ग कर दी गईं। मशीनगनों ने गोलियों की वर्षा की और तोपों ने गोलों की। मॉस्को का विद्रोह जनता का प्रथम सशस्त्र विद्रोह था। शस्त्र उठाने वालों की संख्या अधिक न थी और न उनके शस्त्र-अस्त्र ही उत्तम थे; पर उसने सहानुभूति रखने वालों की संख्या अधिक थी। कुछ दिनों तक बराबर मॉस्को की सड़कों पर युद्ध होता रहा। कभी क्रान्तिवादियों की विजय होती और कभी उनकी हार। मॉस्को की सड़कें स्थान-स्थान पर बन्द कर दी गई थीं। क्रान्ति को दबाने के लिए जो सेना आती, उससे क्रान्तिकारी सरकारी पक्ष छोड़ कर क्रान्ति की तरफ़ आने की अपील करते। बहुधा उन्हें इस अपील में सफलता भी मिलती। अतः सरकार अपनी सेनाओं पर बहुत अधिक निर्भर नहीं करती थी। ८ दिसम्बर को एक सरकारी सेना को जनता ने राजी कर के मैदान से हटा दिया। १० दिसम्बर को एक स्थान पर एक सेना खड़ी थी। दो लड़कियाँ लाल झण्डा लिए उनके पास तक दौड़ी चली गईं और उनके पास पहुँच कर

उनसे कहा—"हमें मार डालो, क्योंकि जीते जी हम झण्डा नहीं छोड़ेंगी।" उनकी यह बात सुन कर सैनिकों को शर्म लगी और उन्होंने अपने घोड़ों का मुँह मोड़ दिया। सेना की जनता के साथ इतनी सहानुभूति थी कि जनरल दूबसव का कहना था कि मॉस्को की सेना के १५,००० सैनिकों में से केवल ५,००० पर विश्वास किया जा सकता था।

सरकार और क्रान्तिकारियों में सब से जबरदस्त मुठभेड़ मॉस्को जिले के प्रेसनिया स्थान पर हुई। प्राहोरोव फ़ैक्टरी के मजदूरों ने अपनी एक सेना खड़ी कर ली, वहाँ पर सरकारी सेना बहुत ही थोड़ी थी। मजदूरों की कौंसिल सशस्त्र विद्रोह का केन्द्र बन गई। प्रेसनिया और शाबका के दो जिले विद्रोहियों के हाथों में चले गए। इन जिलों में सरकारी खबरें पहुँच ही न पाती थीं। वहाँ के लोगों का विश्वास था कि नई सरकार की स्थापना हो गई है। विद्रोहियों की आज्ञा सर्वत्र मानी जाती थी। पर इन सब बातों के होते हुए भी उनकी सेना में २०० से अधिक सैनिक न थे। १६ दिसम्बर को सरकारी सेना ने जिले को घेर लिया और विद्रोहियों को कुचलना आरम्भ किया। १८ दिसम्बर को विद्रोही अच्छी तरह कुचल दिए गए। १९ दिसम्बर को मॉस्को के मजदूरों की सोवियट ने हड़ताल का अन्त कर दिया।

पाठक यह न समझ लें कि यह सशस्त्र विद्रोह केवल मॉस्को में ही था। रूस के अनेक नगरों में यही हालत थी। रोडरोव-

आन-डान का विद्रोह विशेषतः मॉस्को-विद्रोह से मिलता-जुलता था। जैसे ही मॉस्को से राजनैतिक आम हड़ताल की खबर वहाँ पहुँची तो वहाँ के मजदूरों ने भी हड़ताल कर दी। सैकड़ों नौजवानों की एक सेना खड़ी कर ली गई। टमरनिक स्थान इस विद्रोह का केन्द्र था। १५ दिसम्बर से २० दिसम्बर तक टमरनिक पर बराबर बमबाजी होती रही। सरकार की तरफ से जिले पर अधिकार करने के लिए बहुत प्रयत्न किए गए, पर वे सब असफल हुए। क्रान्तिकारियों ने पूरा शासन-विभाग खड़ा कर लिया। जनता की ओर से एक जेलखाना बनाया गया, जिसमें पुलिस के जासूस आदि बन्द किए जाते थे; परन्तु यह विद्रोह शीघ्र दबा दिया गया। ऐसे विद्रोह को कुचलने के लिए सरकार के पास साधनों की कमी न थी। जनता का एक दल प्रारम्भ से ही इस विद्रोह का विरोध कर रहा था। मेनशेविक सशस्त्र विद्रोह करने के विरोधी थे। वे केवल जनता में प्रचार करना चाहते थे। मेनशेविकों के नेता जॉर्ज प्लेहनोव ने स्पष्ट शब्दों में इस विद्रोह की निन्दा की। उसका कहना था कि जनता अभी इन सब बातों के लिए तैयार नहीं है।

यद्यपि विद्रोह शान्त कर दिया गया था, पर इस विद्रोह में जनता को जो अनुभव प्राप्त हुए थे, उन्होंने उसे भविष्य के लिए और मजबूत बना दिया। क्रान्ति की इस असफलता से लेनिन बिल्कुल हताश नहीं हुआ। जैसा कि इस लेख के प्रारम्भ में कह चुके हैं, वह इस क्रान्ति को भावी क्रान्ति की भूमिका-मात्र

समझता था। उसने लोगों को इस अनुभव से लाभ उठा कर जोरों से कार्य करने की सलाह दी। खैर! फ़िलहाल क्रान्ति के दब जाने के अगले कुछ वर्षों के लिए आन्दोलन बहुत-कुछ ठण्डा हो गया और प्रतिक्रियावादियों की बन आई।

१९१७ की क्रान्ति



न् १९०५ की क्रान्ति सन् १९०७ तक पूर्णतया कुचल डाली गई थी। रूस में ऐसे बहुत से लोग थे, जो क्रान्ति की असफलता के लिए प्रतिदिन ईश्वर से प्रार्थना किया करते थे। प्रतिदिन पानी पी-पीकर इसे कोसा करते थे। अभी तक ये लोग चुप बैठे थे। क्रान्ति के असफल होते ही इन लोगों ने अपना कार्य आरम्भ कर दिया। ज़ारशाही का इन लोगों ने पूर्ण समर्थन किया और उसकी शक्ति बढ़ाने के लिए खूब चेष्टाएँ कीं। इनमें अधिकतर ज़मींदार और पादरी थे।

इन लोगों ने मिल कर एक सङ्घ की स्थापना की और उसका नाम रक्खा 'रूसी-प्रजा-सङ्घ' (Union of the Russian People) मोशिए पुरिशकेविच और मोशिए मारकोव इस सङ्घ के प्राण थे। पुलिस के एजेण्ट तक इस सङ्घ में शामिल थे। इसके सिवा कुछ ऐसे व्यापारी तथा धनी किसान थे, जो अपने व्यक्तिगत लाभ के लिए सरकार का साथ देना आवश्यक समझते थे। इन अन्तिम लोगों का काम था जनता को भुलावा देने के लिए प्रदर्शन करना, मज़दूरों की सभाओं तथा प्रदर्शनों में भाग

लेना और खूब सरगर्मी दिखलाना तथा अन्त में अवसर प्राप्त होते ही सभाओं तथा प्रदर्शनों की शान्ति भङ्ग कर अशान्ति पैदा कर देना, ताकि इन सभाओं और प्रदर्शनों में हस्तक्षेप करने का पुलिस को मौक़ा मिले। इस तरह इन लोगों ने पुलिस को हस्तक्षेप करने को अनेक अवसर दिए और पुलिस ने भी इन अवसरों से खूब लाभ उठाया।

जनता के प्रदर्शनों को पुलिस भङ्ग कर दिया करती थी। कई बार गोलियाँ चलाई गईं। दमन-चक्र तेज़ी से चल रहा था और सहस्रों मजदूर तथा किसान जेलों में बन्द कर दिए गए थे। बहुतों को आजीवन देश-निकाला दिया गया। बहुत से मजदूर तथा किसान साइबेरिया के सुदूर प्रान्त की जेलों में बन्द कर दिए गए। यही नहीं, सैकड़ों मनुष्य फाँसी के तख़्तों पर भी लटका दिए गए। सन् १९०७ में १,६९२ आदमियों को फाँसियाँ दी गईं। सन् १९०८ में १,९५९ देशभक्त मौत की घाट उतार दिए गए और सन् १९०९ में १,४३५ माता के लाल संसार से सदा के लिए विदा कर दिए गए !!

ज़ार की पुलिस अपनी इस क्षणिक सफलता पर फूली नहीं समाती थी। उसे अपने कार्यों पर बड़ा गर्व था। देश भर में पुलिस ने विजयोत्सव मनाया। ज़ार की शक्ति प्रतिदिन बढ़ रही थी। क्रान्ति के नए-नए विरोधी पैदा हो रहे थे। ज़मींदार और पूँजीपति, दोनों एक दूसरे की सहायता कर रहे थे। इस अमानुषिक दमन तथा क्रान्ति-विरोधी सङ्गठन का विशेष श्रेय

स्टोलिपिन नाम के एक मनुष्य को था। वह क्रान्ति का घोर शत्रु था और राष्ट्रीय आन्दोलन के पीछे हाथ धोकर पड़ा था। उसने आन्दोलन को कुचलने में कोई बात उठा नहीं रक्खी। अपनी इस घृणित नीति के कारण वह देश भर में शैतान की तरह प्रसिद्ध था। प्रत्येक गाँव में उसने कुछ ऐसे किसान चुन रक्खे थे, जो सरकार का साथ देने को तैयार थे। ऐसे किसानों की वह सहायता करता था और उनसे आन्दोलन का विरोध करवाता था।

भूमि का प्रश्न अब तक ज्यों का त्यों बना था। ज़ारशाही इस प्रश्न को हल करने में पूर्णतया असमर्थ थी। क्योंकि वह बड़े-बड़े ज़मींदारों को अप्रसन्न नहीं करना चाहती थी, साथ ही प्रश्न की अवहेलना भी नहीं की जा सकती थी। क्योंकि जनता में इस प्रश्न पर घोर असन्तोष फैल रहा था। दिन-प्रति-दिन ज़मींदार लोग अपनी भूमि छोड़ रहे थे और छोड़ी हुई भूमि किसानों के हाथों में चली जा रही थी। सन् १९०५ से लेकर सन् १९०९ तक के चार वर्षों में बड़े-बड़े ज़मींदारों ने अपनी भूमि का दसवाँ हिस्सा किसानों के हाथों बेच दिया था। धनी किसान प्रतिदिन नई-नई भूमि ख़रीद रहे थे।

इन किसानों की सहानुभूति प्राप्त करने के लिए सरकार ने अनेक प्रयत्न किए। इसी के लिए स्टोलिपिन ने कई सुधार भी किए। सन् १९०६ की ९ वीं नवम्बर को एक क़ानून पास किया गया और धनी किसानों को गाँवों के मुखिया

के शासन से अलग होने की अनुमति दे दी गई। सन् १९०५ तक संयुक्त भूमि का ४/५ हिस्सा गाँवों के मुखियों के अधिकार में और केवल १/५ हिस्सा अन्य किसानों के हाथों में था। इन मुखियों में से ७५ फी सदी अपनी भूमि किसानों को मालगुजारी पर दे दिया करते थे। सरकार बहुत दिनों तक इन मुखियों का समर्थन करती रही। क्योंकि इनके कारण उसे राजस्व वसूल करने में बड़ी आसानी होती थी। बड़े-बड़े जमींदार भी इन मुखियों के पक्षपाती थे। क्योंकि इन्हीं के बल पर वे किसानों पर मनमाना अत्याचार कर सकते थे। परन्तु स्टॉलिपिन के कृषि-सम्बन्धी सुधारों के परिणाम-स्वरूप गाँवों पर से मुखियों का पुराना आधिपत्य जाता रहा और उनका अन्त निकटतर आ गया। स्टॉलिपिन के सुधारों के प्रचलित होते ही २२ लाख किसान मुखियों के चङ्गुल से अलग हो गए। इनमें से ९ लाख किसानों के पास निजी सम्पत्ति की तौर से भूमि हो गई। फलतः ये सभी जारशाही के समर्थक बन गए।

इन दिनों मजदूरों का सङ्गठन भी कमजोर हो चला था। उनमें अब वह पुरानी शक्ति न रह गई थी। सन् १९०५ की क्रान्ति में तथा हड़ताल–आन्दोलन में मजदूर सब से आगे थे। अपने सङ्गठन के बल पर उन्होंने जारशाही को परेशान कर रक्खा था। उन दिनों दनादन हड़तालें होती थीं। रूस के मजदूर अपनी शक्ति से तमाम संसार को चकित कर रहे थे। पर 'सब दिन जात न एक समान'—अन्त में उनका सङ्गठन

शिथिल हो गया और हड़तालों की संख्या भी पहिले से बहुत कम हो गई। जो हड़तालें होती भी थीं, तो उनमें बहुत कम मजदूर भाग लेते थे।

सन् १९०९ में तो यह संख्या और भी कम हो गई थी और मजदूरों का सङ्गठन यहाँ तक कमजोर हो गया था कि वे हड़तालों से लाभ न उठा सकते थे। वे हड़तालें करते थे, कुछ दिनों तक वे जारी रहती थीं, पर अन्त में जब ग़रीब मजदूरों के पास खाने-पीने को कुछ न रह जाता तो वे काम पर वापस चले जाते। पूँजीपतियों की बन आती और वह इस स्थिति से पूरा लाभ उठाते थे। सन् १९०८ में जितनी हड़तालें हुई, उनमें से ६९ फ़ी सदी का अन्त पूँजीपतियों के लाभ में हुआ। सन् १९०९ में ८० फ़ी सदी हड़तालों ने अन्त में मजदूरों को हानि पहुँचाई। चौबे जाते छब्बे होने, पर दुबे ही रह जाते। मजदूरों की इस कमजोरी का बहुत बड़ा कारण सोशल-डिमोक्रैटिक पार्टी की कमजोरी थी।

इस पार्टी पर जारशाही का पूरा कोप था। उसने इस पार्टी के लीडरों को चुन-चुन कर पकड़ लिया था और बहुतों को देश-निकाला दिया गया था। ग़ैर-क़ानूनी प्रेस भी बन्द कर दिए गए। अतएव पार्टी की जनता तक पहुँच न रह गई थी। उसके सदस्यों की संख्या भी पहिले से अब बहुत कम थी। पढ़े-लिखे लोग विशेषतः पार्टी से अलग हो गए थे। क्योंकि उनमें सरकार का दमन सहने की जुर्रत न थी। एक समय था कि पार्टी में १,५०,००० सदस्य थे। पर अब उसमें बहुत थोड़े सदस्य रह गए

थे। जो थे, उनमें भी आपस में फूट थी। मेनशेविकों में तो न जाने कितनी ही दलबन्दियाँ हो गई थीं। कई दलों के पास अपने अख़बार भी थे। सभी अपने-अपने ढङ्ग से काम करना चाहते थे। कोई वैध आन्दोलन का पक्षपाती था, तो कोई क्रान्ति का पुजारी, और कोई दोनों उपायों से काम लेना चाहता था। 'अपनी-अपनी डफ़ली और अपना-अपना राग' की कहावत पूर्णतया चरितार्थ हो रही थी।

बोल्शेविकों ने मजदूरों के सामने तीन माँगें रक्खी थीं। उनकी पहली माँग थी—लोकतन्त्रीय प्रजातन्त्र, और पुराने ढर्रे के जमींदारों का अन्त करना उनकी दूसरी माँग थी। तीसरी और अन्तिम माँग थी, प्रत्येक दिन ८ घण्टे से अधिक काम न करना। बोल्शेविकों का नेता लेनिन था। वह वैध तथा अवैध, दोनों उपायों से काम लेना चाहता था। बोल्शेविकों ने अपनी प्रत्येक काँङ्ग्रेस तथा कॉन्फ़्रेन्स में लेनिन की नीति का समर्थन किया।

सन् १९१० में हड़ताल-आन्दोलन ने पुनः जोर पकड़ा। मजदूरों में फिर एक बार पुरानी जागृति पैदा हो गई। सन् १९१० से लेकर सन् १९१४ तक हड़तालों की संख्या बीस गुनी हो गई। सन् १९१२ में हड़तालों की जो लहर वह रही थी, उसमें कम से कम १० लाख मजदूर शामिल थे। सन् १९१३ में १५ लाख मजदूरों ने हड़ताल कर दी। और सन् १९१४ के पहिले ६ महीनों में २० लाख मजदूर हड़ताल में भाग ले रहे थे। दिन-प्रति-दिन राजनैतिक हड़तालों का महत्व बढ़ता जा रहा था। सन् १९१२ के

अप्रैल के 'लेना के खूनी स्नान' (Lena Blood-bath) ने मजदूरों में रूह फूँक दी और आम हड़ताल आन्दोलन की धूम मच गई। साइबेरिया में एक स्थान है, जिसे 'लेना' कहते हैं। यह स्थान रेलवे-स्टेशन तथा बड़े-बड़े नगरों से बहुत दूर है। इस स्थान पर सोने की बड़ी-बड़ी खानें हैं और इन खानों में हजारों मजदूर काम करते हैं। ये बेचारे अपनी आर्थिक स्थिति से बहुत असन्तुष्ट थे। उन्हें बड़ी कड़ी मेहनत करनी पड़ती थी और कष्टमय जीवन बिताना पड़ता था। अपनी स्थिति को सुधारने के लिए इन्होंने अधिकारियों के सामने कुछ आर्थिक माँगें पेश कीं। माँगें साधारण थीं, परन्तु तो भी पूँजीपतियों ने उनकी अवहेलना कर दी। इस पर मजदूरों ने एक प्रदर्शन करके अपनी माँगों का समर्थन करना चाहा। वे एक जुलूस बना कर निकल रहे थे कि उन पर गोलियाँ चलाई गईं और वे तितर-बितर कर दिए गए। सैकड़ों मजदूर सदा के लिए पृथ्वी पर सो गए और वहाँ की जमीन खून से लाल हो गई। जनता ने इस घटना का नाम 'खूनी-स्नान' (Blood-bath) रक्खा।

रूस के मजदूर इस अपमान को चुपचाप सहने वाले न थे। उनके खून में काफी गरमी थी। उन्होंने 'खूनी-स्नान' के उत्तर में हड़ताल कर दी। सन् १९१४ की पहली मई को दस लाख से अधिक मजदूर हड़ताल में शामिल थे। दिन-प्रति-दिन इन हड़तालों को राजनैतिक रूप दिया जा रहा था। मजदूरों में राजनैतिक आन्दोलन उत्तरोत्तर बढ़ रहा था और ऐतिहासिक दिवसों

(२२ वीं जनवरी, मई-दिवस आदि) पर विशेष ध्यान दिया जा रहा था।

गत यूरोपीय महायुद्ध के कुछ दिन पहले रूस के मजदूरों ने भीषण स्थिति उत्पन्न कर दी। पिटर्सबर्ग की सड़कें रोक दी गई थीं और जनता तथा पुलिस में सशस्त्र सङ्घर्ष हो रहे थे। बोल्शेविकों की केन्द्रीय कमिटी ने युद्ध पर एक मेनीफ़िस्टो निकाला। इसमें कहा गया था कि पिछले कुछ वर्षों में जारशाही के विरुद्ध क्रान्तिकारी आन्दोलन ने एक बार फिर विशाल आकार धारण कर लिया है। रूस के मज़दूर इस आन्दोलन में आगे रहे हैं। युद्ध के प्रारम्भ होने से पहिले फ्रान्स की प्रजातन्त्र के प्रेजिडेण्ट पोआङ्कोर, जब जार द्वितीय निकोलस से मिलने आए थे, तो उन्होंने देखा था कि पिट्रोग्राड की सड़कों पर रूस के मजदूरों ने रुकावटें लगा रक्खी थीं।

उस समय रूस के उद्योग-धन्धे विदेशी पूँजी पर निर्भर करते थे। यूरोप के कई देशों की करोड़ों की पूँजी रूस में लगी थी। इसी पूँजी के बल रूस उद्योग-धन्धे में इतनी उन्नति कर रहा था। मित्र-राष्ट्रों की पूँजी का—विशेषकर फ्रान्स की पूँजी का—इस उन्नति में विशेष भाग था। जर्मनी की पूँजी केवल बिजली के धन्धे में लगी थी। इस विदेशी पूँजी का अन्दाजा इसी से लगा लीजिए कि युद्ध का अन्त होने पर रूस के कुल बैङ्कों का ¾ हिस्सा यूरोपीय पूँजीपतियों के हाथों में था। पेरिस के बैङ्कों का रूस के कोयले के धन्धों पर पूरा राज था। फ्रान्स और इङ्गलैण्ड के बैङ्क

मिल कर तेल के धन्धों को अपने हाथों में किए बैठे थे। बाकू में जितना तेल पैदा होता था, उसका ४० फ़ी सदी इनके हाथों में था। इन्हीं कारणों से बाध्य होकर महायुद्ध में रूस को भाग लेना पड़ा। रूस के आर्थिक तथा राजनैतिक जीवन पर मित्र-राष्ट्रों के बैङ्कों का विशेष प्रभाव था। इसलिए रूस, इङ्गलैण्ड और फ्रान्स के पूँजीपतियों की इच्छा की अवहेलना नहीं कर सकता था। इसके सिवा रूस बालकान देशों को अपनी पैदावार की खपत के लिए बाजार बनाना चाहता था। इङ्गलैण्ड और फ्रान्स ने रूस को इस इच्छा-पूर्ति का आश्वासन भी दिया। इसी प्रलोभन ने रूस को युद्ध में मित्र-राष्ट्रों की ओर से भाग लेने को मजबूर कर दिया। इसके सिवा एक और भी बात थी, जिसने रूस को जर्मनी का विरोधी बना दिया। अर्थात् रूस और जर्मनी में कृषि-सम्बन्धी प्रतियोगिता थी, और जर्मनी ने रूस के गल्ले पर बहुत कर लगा रक्खा था। अस्तु।

इस युद्ध ने रूस के द्वितीय अन्तर्राष्ट्रीय (Second International) कॉङ्ग्रेस का अन्त कर दिया। युद्ध के पहिले तक तो साम्यवादी युद्ध का विरोध करते रहे और द्वितीय अन्तर्राष्ट्रीय कॉङ्ग्रेस में उन्होंने इसके विरुद्ध प्रस्ताव भी पास किए थे। पर जैसे ही युद्ध का श्रीगणेश हुआ, उन्होंने अपना रङ्ग बदल दिया और उसका समर्थन करने लगे। जर्मनी, फ्रान्स और इङ्गलैण्ड के साम्यवादियों ने युद्ध के सम्बन्ध में अपनी-अपनी सरकारों का समर्थन किया। उस पर तुर्रा यह कि उनमें से प्रत्येक

यही कहता था कि उसकी सरकार अपनी रक्षा के लिये युद्ध कर रही थी। प्रत्येक अपने को शान्ति का सब से बड़ा पुजारी कहता था और कहता था कि अटल शान्ति की स्थापना के लिये युद्ध अत्यावश्यक है।

परन्तु बोल्शेविक युद्ध के विरोधी थे। इनके नेता लेनिन और जिनोवीव ने युद्ध का खुल्लमखुल्ला विरोध किया और उन साम्यवादियों की भी कड़ी निन्दा की, जो युद्ध का समर्थन कर रहे थे। उन्होंने प्रत्येक देश के मजदूरों से अपने देश के पूँजीपतियों से विरुद्ध युद्ध करने को कहा। उन्होंने यह भी कहा कि प्रत्येक देशभक्त को चाहिए कि वह इस साम्राज्यवादी युद्ध में अपने देश की हार की इच्छा करे।

जब महायुद्ध हो रहा था, बोल्शेविक लोग निम्नलिखित तीन बातों का प्रयत्न कर रहे थे :—(१) साम्राज्यवादी युद्ध को गृह-युद्ध में परिवर्तित करना, (२) साम्राज्यवादी युद्ध में अपने देश की सरकार की हार और (३) अन्तर्राष्ट्रीयता की स्थापना।

रूस की स्टेट-ड्यूमा में बोल्शेविक प्रतिनिधियों ने युद्ध के विरुद्ध वोट दिए। इसके लिए पाँच बोल्शेविक प्रतिनिधियों को आजीवन साइबेरिया में देश-निकाला दिया गया। परन्तु बोल्शेविक बराबर जारशाही के पतन का प्रयत्न करते रहे। मजदूरों तथा सेना में उन्होंने युद्ध के विरुद्ध जोरों का प्रचार किया और जनता को भी जारशाही के विरुद्ध खूब भड़काया। उनसे साम्राज्यवादी युद्ध में किसी प्रकार का सहयोग न देने की प्रार्थना की।

पेट्रोग्राड के मजदूर फरवरी की क्रान्ति के नेता थे। युद्ध के शुरू से लेकर अन्त तक हड़तालों की धूम थी। मजदूरों का आन्दोलन दिन-प्रति-दिन भीषण रूप धारण कर रहा था। सन् १९१७ के प्रारम्भ में ही जनता में घोर असन्तोष फैल गया था। २२वीं जनवरी को पेट्रोग्राड में हड़तालियों की संख्या ३,००,००० थी। तमाम फैक्टरियों में सभाएँ हुई थीं। मॉस्को में एक तिहाई मजदूरों ने हड़ताल कर दी। उन्होंने दो प्रदर्शन किए, जिनमें हजारों मजदूर शामिल हुए थे। खारकोव में भी हड़तालें हुईं। फैक्टरियों के अन्दर ही मजदूरों ने सभाएँ कीं। अनेक स्थानों पर मजदूरों में क्रान्तिकारी पर्चे बाँटे गए। सरकार ने २५ जनवरी को ड्यूमा (Duma) की बैठक करने का निश्चय किया था, पर जनता के असन्तोष को देख कर बैठक करने की हिम्मत न पड़ी। परन्तु इसका असर उलटा पड़ा। क्योंकि जनता ने समझा कि बैठक इसलिए मुल्तवी कर दी गई है कि सरकार जनता की बातें नहीं सुनना चाहती।

युद्ध-सहायक कमिटी (War Industrial Committee) में ११ मजदूर मेम्बर थे। सरकार ने उनको गिरफ्तार कर लिया और मजदूरों से लोहा लेने की तैयारी करने लगी। सेना से मैशीनगनें लेकर पुलिस को दे दी गईं।

२७वीं फरवरी को ड्यूमा की बैठक हो रही थी। मेनशेविकों ने मजदूरों से सभा-भवन तक एक जुलूस ले जाने को कहा। परन्तु बोल्शेविक इसके विरुद्ध थे। वे ड्यूमा को क्रान्ति से

अलग रखना चाहते थे। पर मेनशेविक न माने, वे जुलूस ले ही गए। यद्यपि उसमें केवल ५०० ही मजदूर शामिल थे। चौथी मार्च को सड़कों पर उत्पात मच गया। लोग रोटी माँग रहे थे। इस उत्पात में औरतें भी शामिल थीं। ६ठी मार्च को जनता ने रोटी की दूकानें लूट लीं। जगह-जगह पुलिस और जनता में में मुठभेड़ें होने लगीं। फैक्टरियों के मालिकों ने मजदूरों को बरखास्त करना तथा फैक्टरियाँ बन्द करना आरम्भ कर दिया। ८ मार्च महिला-दिवस था और यह क्रान्ति का पहला दिवस था। उस दिन ५० फैक्टरियों में, जिनमें ९०,००० मजदूर काम करते थे, हड़तालें थीं। फैक्टरियों में काम करने वाली औरतों तथा अन्य मजदूरों की स्त्रियों ने एक जुलूस निकाला। वे टाउन हॉल तक गईं और रोटियों का तक़ाजा किया। अनेक स्थानों पर मजदूरों ने ट्रामों का चलना बन्द कर दिया। सड़कें पुलिस से भरी थीं। घुड़सवार पुलिस सड़क की पटरियों पर चल रही थी और भीड़ पर कोड़ों की वर्षा हो रही थी। ९वीं मार्च को पेट्रोग्राड में हड़तालियों की संख्या २,२०,००० थी। सड़कों पर गोलियाँ चल रही थीं। जगह-जगह पर पुलिस और जनता में मुठभेड़ें हो जाती थीं। एक स्थान पर तो जनता ने पुलिस को खदेड़ दिया था। सरकारी सेना में भी असन्तोष फैल रहा था। सरकारी घुड़सवारों का एक हिस्सा जनता से सहानुभूति रखता था।

९वीं मार्च का प्रातःकाल था। एरिक्सन फैक्टरी के मजदूरों

ने काम करने से इन्कार कर दिया। उन्होंने अपनी एक सभा की और जुलूस बना कर सड़कों पर निकल पड़े। उनका जुलूस लिटोनिया पुल की तरफ़ जा रहा था, परन्तु अभी थोड़ी ही दूर गया था कि घुड़सवारों (Cossacks) ने उसे रोक लिया। जिस स्थान पर जुलूस को रोका गया था, वह एक अत्यन्त तङ्ग गली थी। उस गली में इतनी अधिक भीड़ थी कि अगर जुलूस लौटना चाहता, तो लौट न सकता था। उस पर तुर्रा यह कि चारों तरफ़ से नए-नए जुलूस आकर उस बड़े जुलूस में शामिल हो रहे थे। अगर घुड़सवारों ने जुलूस पर हमला किया तो भागने तक की जगह न थी।

घुड़सवारों के अफ़सर ने आज्ञा दी और घुड़सवार तलवारें निकाल कर निःशस्त्र जुलूस की तरफ़ दौड़ पड़े। सब से आगे घुड़सवारों के अफ़सर थे। वे जुलूस को चीड़ते-फाड़ते आगे बढ़ रहे थे। पर यह क्या? घुड़सवारों के हाथों में नङ्गी तलवारें थीं, पर किसी ने भी जनता पर हाथ नहीं उठाया। वे अपने अफ़सरों के पीछे हँसते हुए जा रहे थे। तलवार चलाने की कौन कहे, वे किसी को डाटते तक भी न थे। घुड़सवारों के भाव देख कर जनता के आनन्द का ठिकाना न रहा। एक ही दफ़े नहीं, चार दफ़े अफ़सरों ने आज्ञा दी और स्वयं आगे बढ़े, पर घुड़सवार अपनी बात पर डटे रहे और जनता पर हाथ नहीं उठाया।

इसके बाद घुड़सवार पुनः जुलूस के आगे आकर खड़े हो गए और मित्रतापूर्वक जुलूस के लोगों से बातें करने लगे।

जुलूस आगे बढ़ने लगा। अफ़सरों ने जुलूस को रोकने की आज्ञा दी, परन्तु घुड़सवार अपनी जगह से टस से मस नहीं हुए। जुलूस घुड़सवारों के बीच से होता हुआ आगे बढ़ गया।

१२ मार्च को पेट्रोग्राड की हालत एक ऐसे नगर की भाँति थी, जो चारों तरफ़ से दुश्मनों से घिरा हो। पेट्रोग्राड में कोई ऐसी जगह न थी, जहाँ गोलियों की आवाज न सुनाई देती हो या मैशीनगनें न दिखाई देती हों। न्यायालयों तथा पुलिस-स्टेशनों में आग लगी हुई थी। बैरकों में आग लगाई जा रही थी। सशस्त्र क्रान्तिकारी लॉरियों में घूम रहे थे। एक स्थान पर कुछ सरकारी अफ़सर तथा मोटर-साइकिलिस्टस् घेरा डाले पड़े थे। जनता उन्हें घेरे खड़ी थी। कुछ काल तक दोनों तरफ़ से गोलियाँ चलीं। तत्पश्चात् अफ़सरों ने आत्म-समर्पण कर दिया। सारा शहर मानों समर-भूमि बना हुआ था।

एक स्थान पर पुराने सिपाहियों की दो कम्पनियाँ खड़ी थीं। उनका कमाण्डर कुछ अन्य अफ़सरों के साथ वहाँ आया और सिपाहियों को लक्ष्य कर कहना आरम्भ किया—"भाइयो, अपनी खुश-क़िस्मती पर मैं आप को बधाई देता हूँ। सरकार का, जिससे सभी लोग घृणा करते थे, पतन हो गया। एक अस्थायी सरकार का निर्माण हो गया है। प्रिन्स लोव (Prince Loov), जिसकी इज्जत ड्यूमा के सभी साथी करते हैं, इस सरकार का प्रधान है। अब केवल बाहरी शत्रु को नष्ट करना

है। अस्थायी सरकार आप से प्रार्थना करती है कि आप शान्ति से रहें, अपने बैरकों को वापस चले जाएँ और पहिले की तरह अपने अफ़सरों का कहना मानें।"

कमाण्डर के इस उपदेश से सिपाहियों में घबड़ाहट-सी फैल गई। भीड़ में से एक व्यक्ति ने पूछा—"कमाण्डर, क्या मैं एक बात कह सकता हूँ?" कमाण्डर ने आज्ञा दे दी और उसने कहना शुरू किया—"कॉमरेड सिपाहियों, आपने अभी अपने कमाण्डर की सलाह सुनी है, कि आप लोग बैरकों में लौट जाएँ, अपने अफ़सरों की मातहती में रहें और शान्ति-पूर्वक नवीन अस्थायी सरकार के निर्णय की प्रतीक्षा करें—उस अस्थायी सरकार के, जिसके प्रधान लोव और राजीआङ्को ऐसे जमींदार हैं। कॉमरेडों, क्या पिछले तीन दिनों में मजदूरों ने अपना खून इसी लिए बहाया है कि एक जमींदार का स्थान दूसरा जमींदार ले ले? क्या इसी ध्येय के लिए हजारों ग़रीबों ने अपनी जानें दी हैं? नहीं, पेट्रोग्राड के मजदूर उस समय तक फैक्टरियों में वापस नहीं जायेंगे, जब तक जमींदारों का सदा के लिए अन्त करने का हमें अधिकार न मिल जायगा। हम उसी समय शान्ति ग्रहण करेंगे, जब सरकार में मजदूरों और किसानों का हाथ होगा। अफ़सरों से मुझे यह कहना है कि यदि आप वास्तव में जनता की भलाई चाहते हैं, तो हमारा साथ दीजिए। बोलिए, हाँ या नहीं? कॉमरेड सिपाहियो, तुम्हारे अफ़सर ख़ामोश हैं। इसके मानी यह हैं कि उनका कुछ और ही ध्येय है। इसलिए मैं प्रस्ताव

करता हूँ कि अफ़सर गिरफ़्तार कर लिए जाएँ और उनकी जगह पर आप नए अफ़सर चुन लें।"

इस प्रस्ताव के समर्थन में जोरों से तालियाँ बजीं और फ़ौरन कम्पनी के नए अफ़सर चुने गए। सिपाही सैनिक ढङ्ग से क्रान्तिकारी गाने गाते हुए अपने अफ़सरों को ले चले।

१० वीं मार्च को रूस की सोशल-डिमॉक्रैटिक लेबर पार्टी (बोल्शेविकों) ने निम्न-लिखित आशय की अपील प्रकाशित की थी :—

"तमाम देश के ग़रीबों को एक हो जाना चाहिए। क्योंकि उनका जीवन असम्भव हो गया है। उनके पास न खाना है, न कपड़ा। सरहद पर रक्तपात, कष्ट और मौत का ताण्डव हो रहा है, एक के बाद दूसरी सेनाएँ युद्धक्षेत्र में भेजी जा रही हैं। जानवरों की तरह हमारे भाई मनुष्यों के बूचड़खाने में भेजे जा रहे हैं। इसलिए अब चुप रहना सम्भव नहीं है। भाइयों और लड़कों को बूचड़खाने में चले जाने देना, ठण्ड और भूख से अपने को नष्ट होने देना कायरता होगी। आप अपने बचने की कोशिश व्यर्थ ही करते हैं। यदि जेल न मिलेगा तो बीमारी से या भूखों मरना होगा। अपना मुँह छिपाना आप को शोभा नहीं देता। देश पर आफ़त है। रोटी नहीं है, अकाल पड़ने वाला है। इससे भी बदतर हालत होने को है। घातक बीमारियों की पूरी सम्भावना है। जब हम रोटी माँगते हैं, तो हमें डण्डे मिलते हैं। यह सब किसका क़सूर है? ज़ार की सरकार तथा धनी

लोग ही इसके उत्तरदायी हैं। वे घर और बाहर जनता को लूटते हैं। युद्ध से जमींदार तथा पूँजीपति लाभ उठा रहे हैं। उन्हें इतना लाभ होता है कि वे उसका अन्दाजा भी नहीं लगा सकते। वे युद्ध को सर्वदा के लिए जारी रखना चाहते हैं। आर्थिक लाभ उठाने के लिए, क़ुस्तुन्तुनिया, अरमीनिया तथा पोलैण्ड को जीतने के लिए वे जनता का बलिदान कर रहे हैं। उनके लोभ का कोई ठिकाना नहीं है। वे अपने आर्थिक लाभों का अन्त करने को राजी नहीं हैं। प्रतिक्रियावादी धनिकों को हाथ में लाने का यही अवसर है। लिबरल, प्रतिक्रियावादी, सरकार और ड्यूमा, सब मिल कर खून के प्यासे हो रहे हैं। जार का दरबार, साहूकार तथा पादड़ी लोग सोना इकट्ठा कर हैं। एक सुस्त लुटेरों का दल जनता की हड्डियाँ चबा रहा है, उनका खून पी रहा है। हम लोगों को भुगतना ही पड़ता है। हम लोग काम करते-करते मरे जाते हैं। खाइयों में हमको मरना पड़ता है। अब हम चुप नहीं रह सकते। जर्मनी, ऑस्ट्रिया और बलगेरिया के मजदूर सिर ऊँचा कर रहे हैं। वे लोग शान्ति और स्वतन्त्रता के लिए खून के प्यासे धनियों से लड़ रहे हैं। अपने अत्याचारियों से लड़ कर हमें उन मजदूरों की सहायता करनी चाहिए। अब खुल्लमखुल्ला युद्ध का समय आ गया है। हड़तालें, सभाएँ तथा प्रदर्शन संस्थाओं को कमजोर नहीं, बल्कि उन्हें मजबूत करते हैं। कोई भी अवसर या दिन मत खोइए। हमेशा और प्रत्येक स्थान पर अपने क्रान्तिकारी

नारों-सहित जनता के साथ रहिए। प्रत्येक व्यक्ति को लड़ाई का सन्देश दीजिए। पूँजीपतियों के लाभ के लिए युद्ध-क्षेत्र में मरने से, भूख से या अधिक काम करने से मरने की अपेक्षा मजदूरों के लिए मरना अच्छा है। जुदा-जुदा कामों से तमाम रूस में क्रान्ति फैल सकती है और रूस की यह क्रान्ति दूसरे देशों में क्रान्ति पैदा कर सकती है। घोर युद्ध हमारे सामने है, पर विजय हमारे साथ है। प्रत्येक पुरुष को क्रान्ति के लाल झण्डे के नीचे आ जाना चाहिए। बस, जारशाही का अन्त हो। डिमॉक्रैटिक रिपब्लिक चिरजीवी हो! आठ घण्टे का दिन चिरजीवी हो! बड़े-बड़े लोगों की सारी भूमि जनता के लिए हो। युद्ध का अन्त हो। तमाम संसार के मजदूरों का भाई-चारा चिरजीवी हो। साम्यवादी अन्तर्राष्ट्र चिरजीवी हो!!!"

इस अपील का जनता पर खूब प्रभाव पड़ा। ११ वीं मार्च को सारी फैक्टरियाँ बन्द हो गईं। शहर भर में मजदूर ही मजदूर दिखाई पड़ते थे। सरकारी अफ़सर रह-रह कर गोलियाँ चला रहे थे, यहाँ तक कि अन्त में मैशीनगनों का सहारा लेना पड़ा। पुलिस की शक्ति बढ़ाने के लिए फ़ौजी सिपाहियों को पुलिस की वर्दी पहनाई गई। परन्तु इससे सिपाहियों में घोर असन्तोष फैल गया और वे जनता की तरफ़ हो गए।

स्टेट-ड्यूमा के प्रेजिडेण्ट ने उसी दिन जार को निम्नलिखित तार दिया कि—"स्थिति गम्भीर है। राजधानी में अराजकता फैली हुई है। सरकार असहाय है, भोजन और रोशनी का

प्रबन्ध पूर्णतया असङ्गठित है। जनता का असन्तोष बढ़ रहा है। सड़कों पर गोलियाँ चल रही हैं। किसी ऐसे पुरुष को नई सरकार बनाने का अधिकार दिया जाना चाहिए, जिसमें जनता का विश्वास हो। हिचकिचाइए नहीं, देरी करना अधिक ख़तरनाक होगा।"

दूसरे दिन राजीआङ्को ने ज़ार को एक दूसरा तार भेजा कि—"स्थिति ख़राब हो रही है, फ़ौरन प्रबन्ध होना चाहिए। कल तक समय बीत जायगा। देश और राजवंश के लिए निश्चय करने का यह अन्तिम अवसर है।"

परन्तु ज़ार ने उपर्युक्त तार पाकर अपने मन्त्री से कहा—"बौड़म राजीआङ्को ने अपनी दूसरी बेवक़ूफ़ी का प्रमाण भेजा है। मैं इसका उत्तर तक देने का कष्ट न उठाऊँगा।"

ख़ैर, अन्त में पेट्रोग्राड की सेना जनता से मिल गई। विद्रोही सिपाहियों तथा मजदूरों ने मिल कर पेट्रोग्राड के मध्य में बसे हुए पिटर-पाल क़िले को अपने अधिकार में कर लिया। और वहाँ जितने राजनैतिक क़ैदी क़ैद थे, सब को छुड़ा दिया। सन् १९१७ की क्रान्ति सफल हो गई। ज़ारशाही का अन्त तो हो ही चुका था, केवल उसे दफ़नाना बाक़ी था।

अस्थायी सरकार



ट-ड्यूमा के डिप्टियों ने अपनी बैठक १२ मार्च से आरम्भ की। एडजिआङ्को से उन्हें पता मिला कि स्टेट-ड्यूमा और स्टेट कौन्सिल की बैठकें रोक दी गई थीं। उन लोगों ने एक पास के मकान में जाकर अपनी एक कॉन्फ्रेन्स की। इस कॉन्फ्रेन्स का उद्घाटन किया था, स्वयं एडजिआङ्को ने। उसने लोगों से कुछ न कुछ तय कर डालने को कहा। एडजिआङ्को के पश्चात् नेक्रासाव ने बोलना आरम्भ किया। उसने कहा—"इस समय रूस में कोई भी सरकार नहीं है। अतएव एक सरकार का निर्माण करना अत्यावश्यक है। मैं समझता हूँ कि एक ऐसे आदमी को यह काम सौंप देना चाहिए जिस पर सब का विश्वास हो।" इसके लिए उसने जनरल मनिकोयस्की का नाम पेश किया। शेवस्की नाम के वक्ता ने कहा—"हिचकिचाहट की आवश्यकता नहीं है। जनता आसरा देख रही है। जिले के न्यायालय पर जनता का अधिकार है। फौरन काम करना चाहिए।" एक कमिटी बनाई जाने का उसने प्रस्ताव किया। इस कमिटी का काम होगा, जनता

तथा सेना में निरन्तर सम्बन्ध बनाए रखना। एक महाशय ने प्रस्ताव किया कि ड्यूमा की कौन्सिल ऑफ दि एल्डर्स (Council of the Elders) को सारे अधिकार सौंप दिए जावें। केरेन्स्की ने यह अधिकार चाहा कि वह जाकर जनता से कह दे कि ड्यूमा जनता के साथ है और सब तरह से उनकी सहायता करेगी। कुछ लोगों ने चाहा कि ड्यूमा ही विधान-विधायक सभा घोषित कर दी जावे। प्रतिक्रियावादियों ने इसका घोर विरोध किया। अन्त में कॉन्फ्रेन्स ने निश्चय किया कि (१) स्टेट-ड्यूमा के मेम्बर पेट्रोग्रेड से बाहर न जावें, (२) कौन्सिल ऑफ एल्डर्स एक अस्थायी कमिटी का निर्माण करे और स्टेट-ड्यूमा का भविष्य निश्चित करे। कौन्सिल ऑफ एल्डर्स ने एक अस्थायी कमिटी का निर्माण किया, जिसमें निम्न-लिखित मेम्बर थे—एडजिआन्को, शलगिन, लोव, शिडलोव्स्की, काएलोव, कोनोवालोव, केरेन्स्की, शेवस्की, मिलिकोव, नेक्रासाव तथा श्रीद्जे।

इधर यह सब हो रहा था और उधर क्रान्तिकारियों को सफलता पर सफलता मिल रही थी। विद्रोही सिपाहियों तथा मजदूरों ने जेल पर धावा बोल कर तमाम साम्यवादी क़ैदियों को जेल से बाहर कर दिया। जो क़ैदी छुड़ा दिए गए थे, उनमें केन्द्रीय युद्ध सहायक कमिटी का मजदूर-दल भी था। इन लोगों ने मजदूरों के सोवियट की अस्थायी कार्यकारिणी कमिटी का निर्माण किया। इस कमिटी का मुख्य कार्य था, पेट्रोग्राड सोवियट को बुलाना।

कमिटी ने एक अपील निकाल कर पेट्रोग्रेड के मज़दूरों से उसी दिन शाम को सात बजे टारिड-भवन में इकट्ठा होने को कहा। कमिटी ने विद्रोहियों को भोजन पहुँचाने का कार्य भी अपने हाथ में लिया। इसी कार्य के लिए एक अस्थायी भोजन-कमीशन नियुक्त किया गया। यही नहीं, विद्रोहियों की रक्षा के लिए उसी टारिड-भवन में मिलिटरी हेड-कार्टर्स् स्थापित किए गए, ताकि ज़ार के सैनिकों से विद्रोहियों की रक्षा की जा सके।

टारिड-भवन में ठीक नौ बजे मज़दूरों के सोवियट की बैठक आरम्भ हुई। विद्रोही सेना तथा विद्रोही मजदूरों का एक में सङ्गठन करने का सब ने निश्चय किया। इस सङ्गठन का नाम रक्खा गया, सोवियट ऑफ़ वर्कर्स एण्ड सोलजर्स डिपुटीज़ (Soviet of Workers and Soldiers Deputies)। उसी बैठक में यह भी घोषणा की गई कि क्रान्स्टट (Kranstadt) भी विद्रोह में शामिल हो गया है। एक भोजन-कमीशन का चुनाव किया गया। उसे उचित अधिकार दिए गए। और उसने फ़ौरन अपना कार्य आरम्भ कर दिया। इस कमीशन का चेयरमैन ग्रोमन था।

अब नगर की रक्षा का प्रश्न उठा। किसी ने प्रस्ताव किया कि प्रत्येक फ़ैक्टरी में एक-एक सेना (Militia) का सङ्गठन किया जावे। नगर की रक्षा के लिए जनता के नाम सोवियट की तरफ़ से एक अपील की गई।

अर्थ-कमीशन (Finance Commission) की सिफ़ारिश पर सोवियट ने निम्नलिखित बातें तय कीं :—

(१) रूस के तमाम आर्थिक साधन पुरानी सरकार से छीन लिए जावें। स्टेट बैङ्क, आर्थिक भवन, टकसाल तथा बैङ्क-नोटों के छापेखाने पर विद्रोही सिपाहियों का अधिकार हो।

(२) उपरोक्त निश्चय को कार्यान्वित करने के लिए ड्यूमा की अस्थायी कमिटी को आदेश दिया जावे।

(३) जब तक अस्थायी सरकार के नवीन अर्थ-सचिव का चुनाव न हो जावे तब तक जब्त-शुदा धन तत्कालीन अफ़सरों के हाथों में रहे। पर उनकी निगरानी विद्रोही सिपाही करते रहें।

(४) मजदूरों तथा सैनिकों की सोवियट तथा स्टेट ड्यूमा की अस्थायी कमिटी मिल कर अर्थ-कमिटी का चुनाव करें।

(५) सोवियट का तमाम रेवेन्यू अर्थ-कमीशन को दे दिया जाया करे।

१२वीं मार्च की शाम को ड्यूमा की कार्यकारिणी कमिटी ने पेट्रोग्रेड की सेना के नाम दो अपीलें तथा एक आज्ञा-पत्र जारी किया। उसी दिन जार का एक मन्त्री गिरफ़्तार कर लिया गया। शाम के ६ बजे मन्त्रियों की कौन्सिल ने एक तार भेज कर जार से कैबिनेट को भङ्ग करने की आज्ञा माँगी और कैबिनेट को निर्माण करने के लिए एक ऐसे आदमी को चुनने की प्रार्थना की, जिस पर सब का विश्वास हो। जार ने उत्तर दिया—"वर्तमान हालत में कैबिनेट के निर्माण में मैं कोई भी परिवर्तन करने को तैयार नहीं हूँ।"

१२ वीं मार्च को मॉस्को के मजदूरों ने हड़ताल कर दी। उसी दिन रात को अस्थायी क्रान्तिकारी कमिटी का चुनाव किया गया। पेट्रोग्रेड में जार के तमाम मन्त्री एक-एक करके गिरफ़्तार कर लिए गए।

१४वीं मार्च को ड्यूमा की अस्थायी कमिटी नवीन सरकार के निर्माण पर विचार कर रही थी। कमिटी ने तय किया कि जार निकोलस अपने पुत्र के लिए सिंहासन छोड़ दे। जार का भाई माइकेल रिजेण्ट (Regent) का काम करे। जार को अपनी बात पर राजी करने के लिये कमिटी ने उसके पास एक डेपूटेशन भेजा। उसी दिन शाम को जार ने तार भेज कर यह सूचना दी कि एडजिआञ्ची के प्रधान मन्त्रित्व में वह नवीन कैबिनेट बनाने देने को तैयार है।

१५ वीं मार्च रूस के इतिहास में विशेष महत्व रखती है। यह वही तारीख़ है, जिस दिन ज़ार ने—ज़ार निकोलाई रोमनोव ने—अपना सिंहासन छोड़ा था। पर उसने अपना सिंहासन पुत्र के लिए न छोड़ कर, भाई के लिए छोड़ा था। जार ने सिंहासन छोड़ते हुए लिखा था :—

"बाहरी शत्रु से युद्ध करने के दिनों में—वह बाहरी शत्रु, जो पिछले तीन वर्षों से हमारे प्यारे देश को कुचलने में लगा है—ईश्वर ने रूस को अग्निपरीक्षा पर चढ़ा दिया है। भीतरी अशान्ति ने युद्ध का जारी रखना मुहाल कर दिया है। रूस की क़िस्मत, हमारी बहादुर सेना की इज्जत, राष्ट्र की सलामती तथा अपने

प्यारे देश के भविष्य का यह तक़ाज़ा है कि युद्ध जारी रक्खा जावे, जब तक कि विजय न मिल जाय।

"हमारा निर्दयी शत्रु अपनी आखिरी शक्ति इकट्ठा कर रहा है और वह घड़ी दूर नहीं है, जब हमारी बहादुर सेना शत्रु की शक्ति को दबाने में कामयाब होगी। रूस के जीवन से इस कठिन समय में हम इसे अपना महान कर्तव्य समझते हैं कि युद्ध में उद्योग करने के लिए जनता का कार्य सरल कर दिया जाय। स्टेट ड्यूमा की सम्मति से रूस का सिंहासन छोड़ देना हम उचित समझते हैं।

"चूँकि हम अपने प्यारे पुत्र से अलग नहीं होना चाहते, अतएव हम अपना सिंहासन अपने प्यारे भाई ग्रैण्ड ड्यूक माइकेल एलेक्जण्ड्रोविच को देते हैं और उसे सिंहासन पाने पर आशीर्वाद देते हैं।

"हम अपने भाई से सिफ़ारिश करते हैं कि वह देश का शासन देश के लेजिस्लेटिव संस्थाओं के प्रतिनिधियों की पूरी रज़ामन्दी से करे और प्यारे देश के नाम पर इस बात की प्रतिज्ञा करे।

"देश के सपूतों से हमारा यह अनुरोध है कि देश की इस सङ्कट की घड़ी में वे ज़ार के आगे सर झुका कर अपने कर्तव्य का पालन करें और जनता के प्रतिनिधियों के सहयोग से रूस को विजय तथा उन्नति के मार्ग में ले जाने में उसकी सहायता करें। ईश्वर रूस की सहायता करे।

—निकोलाई"

उसी दिन अस्थायी सरकार की स्थापना की गई। केरेन्स्की (Kerensky) भी इसमें शरीक था। १६ वीं मार्च को अस्थायी सरकार ने एक घोषणा निकाल कर अपनी नीति की व्याख्या की। उस घोषणा के अनुसार अस्थायी सरकार की कैबिनेट ने निम्नलिखित सिद्धान्त अपने सामने रक्खे थे:—

(१) जिन लोगों को राजनीतिक तथा धार्मिक जुर्मों में सज़ाएँ दी गई हैं वे सब छोड़ दिए जावेंगे।

(२) जनता को बोलने, प्रेस को सङ्घ बनाने तथा सभा और हड़ताल करने की पूरी स्वतन्त्रता रहेगी।

(३) जाति, धर्म तथा राष्ट्रीयता की सब अयोग्यताएँ मिटा दी जावेंगी।

(४) विधान-विधायिनी सभा बुलाने की फ़ौरन तैयारी की जावेगी। इस सभा के सदस्य-निर्वाचन में प्रजा को सार्वजनिक मताधिकार होगा तथा इसके वोट गुप्त तौर से पड़ेंगे। यही सभा शासन-विधान तैयार करेगी।

(५) पुलीस के स्थान पर मिलीटिया (Militia) रहेगी। इसके तमाम अफ़सर निर्वाचित होंगे। यह मिलीटिया स्वाधीन म्युनिसिपैलिटियों के अधीन रहेगी।

(६) म्यूनिसिपैलिटियों के चुनाओं में सभी वोट दे सकेंगे तथा वोट गुप्त होंगे।

(७) जिन सेनाओं ने क्रान्ति में भाग लिया था, वे पेट्रोग्रेड में रक्खी जावेंगी और उनके हथियार नहीं छीने जावेंगे।

(८) सिपाहियों को एक नागरिक के सारे अधिकार दिए जावेंगे। पर जब वे काम पर होंगे, उन्हें सारे सैनिक नियम मानने होंगे।

उपर्युक्त घोषणा द्वारा अस्थायी सरकार ने यह भी वादा किया कि सुधारों को जारी करने में युद्ध के कारण कुछ भी देरी न होगी।

मज़दूरों तथा सिपाहियों के सोवियट की कार्यकारिणी कमिटी ने भी एक घोषणा निकाली जो इस प्रकार थी :—

"कॉमरेडो और नागरिको,

नवीन सरकार की तरफ़ से, जिसमें देश के मॉडरेट शामिल हैं, आज एक घोषणा निकली है, जिसमें उन तमाम सुधारों का हवाला दिया गया है, जो नवीन सरकार पुरानी सरकार से युद्ध करते समय या युद्ध के पश्चात् करना चाहती है। राजनीतिक क़ैदियों का छोड़ा जाना, विधान-विधायिका सभा की तैयारी करना, नागरिक स्वतन्त्रताएँ देना तथा जातीय क़ानूनी अयोग्यताओं को मिटाना आदि सुधारों का तमाम लोकतन्त्रीय जनता स्वागत करेगी। जब तक नवीन सरकार उन सुधारों को कार्यान्वित करने का यत्न करती रहेगी तथा जब तक पुरानी सरकार से घोर युद्ध करती रहेगी तब तक जनता को इसका समर्थन करना चाहिए।"

उसी दिन रूस की सोशल डिमोक्रैटिक लेबर पार्टी (बोलशेविक) की केन्द्रीय कमिटी ने भी एक घोषणा निकाली। इस घोषणा द्वारा बोलशेविकों ने जनता से अपील की कि यदि

किसी भी रूप में जारशाही ढङ्ग की सरकार स्थापित करने का प्रयत्न किया जावे तो वे उसका घोर विरोध करें।

एक स्थान पर रेलवे के मजदूरों की एक सभा हो रही थी। उस सभा में गुट्शकोव (Gutshkov) नाम[1] के एक व्यक्ति ने नवीन जार माइकेल के पक्ष में व्याख्यान देना चाहा। अभी वह जार के पक्ष में दो-चार शब्द भी न कहने पाया था, कि जनता क्रुद्ध हो उठी और वह बलपूर्वक सभा से निकाल दिया गया, कुछ लोग उसे गिरफ़ार करने तथा मारने पर तुल गए। बड़ी मुश्किल से वह अपने को बचा सका।

उसी दिन जार के महल में एक सभा हुई। उस सभा में नवीन अस्थायी सरकार के सभी मेम्बर शामिल थे और शामिल थे ड्यूमा के मुख्य-मुख्य सदस्य। नवीन जार के भविष्य के प्रश्न पर विचार हो रहा था। प्रश्न यह था, कि नवीन जार माइकेल सिंहासन पर बैठा रहे या सिंहासन छोड़ दे? दो मेम्बरों को छोड़ कर, बाक़ी सब सदस्य चाहते थे कि जार सिंहासन छोड़ दे। स्वयं माइकेल भी सिंहासन छोड़ने के पक्ष में था, क्योंकि वह समझता था कि राजतन्त्र के दिन बीत चुके हैं। अन्त में माइकेल ने सिंहासन छोड़ दिया। उस समय जनता के नाम जो घोषणा-पत्र उसने निकाला था, उसमें लिखा था :—

"अपने भाई की इच्छा से, जिसने अद्वितीय युद्ध तथा जनता में घोर असन्तोष के समय मुझे जार का सिंहासन दिया था, मेरे कन्धों पर एक भारी बोझ आ पड़ा है। मैं जनता के इस

विचार से सहमत हूँ कि देश की भलाई का प्रश्न सब से पहले आना चाहिए और मेरा यह दृढ़ निश्चय है कि जब तक समस्त देश की इच्छा न होगी, मैं शासन की बागडोर अपने हाथ में न लूँगा। रूसी साम्राज्य के विधान पर तथा देश की भावी सरकार के प्रश्न पर विचार करना जनता का ही काम है। जनता इस प्रश्न पर सार्वजनिक मताधिकार (Universal Suffrage) द्वारा चुने हुए प्रतिनिधियों की विधान-विधायनी सभा (Constituent Assembly) में विचार करे।"

अपने उपरोक्त पत्र के अन्त में ज़ार माइकेल ने जनता से प्रार्थना की थी कि जब तक विधान-विधायिनी सभा की बैठक न हो जाय, तब तक जनता ड्यूमा द्वारा स्थापित नवीन अस्थायी सरकार को ही अपनी सरकार माने।

मज़दूरों की अनेक सभाओं में अस्थायी सरकार पर कड़ी निगरानी रखने के प्रस्ताव पास हुए।

अस्थायी सरकार की नींव अभी दृढ़ भी न होने पाई थी कि तीसरी अप्रैल आ पहुँची। उस दिन पेट्रोग्रेड स्टेशन पर बहुत बड़ी भीड़ इकट्ठी थी। मज़दूरों का एक बहुत बड़ा जमघट गाड़ी की प्रतीक्षा कर रहा था। कई वर्ष पहिले रूस के एक 'लाल' को रूस छोड़ना पड़ा था और वह स्वीटज़रलैण्ड में रहता था। आज वह कई वर्षों बाद, अपनी जन्मभूमि को लौट रहा था। उसके आने की ख़बर लोगों को मिल गई थी। सब लोग ईश्वर से प्रार्थना कर रहे थे कि वह सकुशल पहुँच

जावे। वह महापुरुष था—रूस का भाग्य-विधाता लेनिन। यथा-समय ट्रेन आई। लेनिन ट्रेन से उतरा। जन-समूह द्वारा उसका जोरों से स्वागत किया गया। सभी पुराने साथी उससे मिले। जब लेनिन सब से मिल चुका तो उसने एक व्याख्यान दिया। पाठकों को स्मरण होगा, मजदूरों तथा सिपाहियों की सोवियट की कार्यकारिणी ने एक घोषणा निकाल कर अस्थायी सरकार का समर्थन किया था, लेनिन ने उन लोगों को इस कार्य के लिए बड़ी फटकार बताई और अस्थायी सरकार का खुल्लमखुल्ला विरोध करने को कहा।

युद्ध के प्रश्न पर अस्थायी सरकार तथा बोलशेविकों में मतभेद पैदा हो गया, सरकार युद्ध को जारी रखना चाहती थी, पर बोलशेविक युद्ध का अन्त करना चाहते थे। बोलशेविक दल सरकार की नीति से इतना असन्तुष्ट था कि उस दल की केन्द्रीय कमिटी ने निम्नलिखित प्रस्ताव पास किये—

"अस्थायी सरकार के नोट ने पेट्रोग्रेड टाउन कॉन्फ्रेन्स की निम्नलिखित राय को सही साबित कर दिया है—

(१) अस्थायी सरकार पूर्णतया एक साम्राज्यवादी सरकार है। फ्रान्स, इङ्गलैण्ड तथा रूस के पूँजीवाद से इसके हाथ-पाँव एकदम बँधे हैं।

(२) इस सरकार द्वारा दिए गए तथा दिए जाने वाले कोई भी वादे सच नहीं हो सकते।

(३) अस्थायी सरकार के मेम्बरों के व्यक्तिगत विचार चाहे जो हों, यह सरकार जीती हुई भूमि कभी भी नहीं लौटाएगी इत्यादि ।

इसलिए इन बातों से बचने का केवल एक ही उपाय है कि देश का तमाम शासनाधिकार सोवियट के हाथों में आ जावे और वही देश पर शासन करे ।

११वीं अप्रैल को मेरिना नामक भवन के सामने सैनिकों का एक झुण्ड खड़ा था । "मिलिअक्कोव को दूर करो", "मिलिअक्कोव का अन्त हो", "अस्थायी सरकार का अन्त हो" आदि उनकी माँगें थीं । सैनिक लोग वहाँ से हटने को तैयार न थे । उन्होंने अपनी एक सभा की, जिसमें अपनी माँगें पेश कीं । उस दिन जनता ने भी अनेक प्रदर्शन किए । दूसरी तरफ दूसरे ढङ्ग के प्रदर्शन हो रहे थे । जिसमें "अस्थायी सरकार में विश्वास", "लेनिन का अन्त हो" आदि नारे लगाए जा रहे थे । एक स्थान पर दोनों प्रदर्शनों में मुठभेड़ हो गई । दोनों दलों में खूब मार-पीट हो गई । सरकारी पक्ष का दल कमजोर साबित हुआ और उनका जुलूस तितर-बितर हो गया । दूसरे दिन भी पेट्रोग्रेड में दिन भर सभा-जुलूस आदि की धूम मची रही ।

अस्थायी सरकार के विरोधी दल ने अपना प्रदर्शन दोपहर से आरम्भ किया । अनेक स्थानों पर दोनों दलों में सङ्घर्ष हुए । गोलियाँ चलीं, लोग घायल हुए तथा मारे गए । रात के आठ बजे १५,००० मजदूरों का एक जुलूस निकला । पर वह अभी थोड़ी

ही दूर गया था कि एक मकान से उन पर गोलियाँ चलाई गईं। जनता ने भी गोलियों का जवाब गोलियों से दिया। बहुत से मनुष्य मरे तथा घायल हुए। पेट्रोग्रेड डिफ़ेन्स एरिया (Patrograd Defence Area) के कमाण्डर-इन-चीफ़ ने सड़क पर दो मैशीनगनें घुमाने का हुक्म दिया। परन्तु उसके अधीनस्थ अफ़सरों तथा सिपाहियों ने उसकी आज्ञा मानने से इन्कार कर दिया।

मॉस्को में भी अस्थायी सरकार के विरुद्ध प्रदर्शन हो रहे थे। क्रान्तिकारी गाने गाते हुए मजदूरों के झुण्ड के झुण्ड फ़ैक्टरियों से चल पड़े। नगर के मध्य में आकर उन्होंने अपनी सभाएँ कीं जिसमें उन्होंने अस्थायी सरकार से लोहा लेने का निश्चय किया।

इस बढ़ते हुए विरोध को देख कर अस्थायी सरकार सहम गई। उसने साम्यवादियों से मिल कर शासन करना चाहा। १३ वीं मई को गुट्शकोव (Gutshkov) ने युद्ध-मन्त्री के पद से स्तीफ़ा दे दिया। मिलिअङ्कोव भी अपने पद से अलग हो गया। केरेन्स्की युद्ध-मन्त्री बनाया गया। पाँच स्थानों पर साम्यवादी मन्त्री रक्खे गए। इस सरकार की कैबिनेट में साम्यवादियों का अल्प-मत था।

अप्रैल के महीने में अखिल रूसी बोलशेविक कॉन्फ़्रेन्स हुई। इस कॉन्फ़्रेन्स ने बोलशेविक पार्टी को सुसङ्गठित कर दिया। कॉन्फ़्रेन्स में लेनिन की तूती बोलती थी यद्यपि कमनेव (Kamnev) आदि दो-एक ऐसे भी मनुष्य थे, जो लेनिन का विरोध कर रहे थे। परन्तु इसका कोई फल नहीं हुआ। इस

कॉन्फ्रेन्स ने कई महत्वपूर्ण प्रस्ताव पास किए। पहिले प्रस्ताव द्वारा युद्ध की निन्दा की गई तथा उसे पूँजीपतियों का युद्ध क़रार दिया गया। दूसरे प्रस्ताव द्वारा अस्थायी सरकार की निन्दा की गई तथा उसकी नीयत पर हमला किया गया। किसान तथा भूमि के सम्बन्ध में एक और महत्वपूर्ण प्रस्ताव पास किया गया। लेनिन के चौथी अप्रैल वाले प्रसिद्ध सिद्धान्त पूरी तरह मान लिए गए और तृतीय अन्तर्राष्ट्रीय कॉङ्ग्रेस की स्थापना की तैयारी की गई। इस कॉन्फ्रेन्स द्वारा लेनिन के सिद्धान्तों पर बोलशेविक पार्टी में एका हो गया।

१६ वीं जून को मजदूरों तथा सैनिकों के सोवियट की पहली कॉङ्ग्रेस की बैठक हुई। इस कॉङ्ग्रेस में १०९० डेलीगेट शामिल हुए थे। इनमें से ८२२ डेलीगेटों को वोट देने का अधिकार था। सामाजिक क्रान्तिवादी (Social Revolutionaries), मेनशेविक (Menshevik), बोलशेविक (Bolshevik), अन्तर्राष्ट्रीय (Internationalists) तथा स्वतन्त्र साम्यवादी (Independent Socialists) पार्टियों के मेम्बर इस कॉङ्ग्रेस में शामिल थे। मजदूरों तथा सैनिकों ने रविवार का दिन प्रदर्शन के लिए निश्चित किया। इस प्रदर्शन के लिए बोलशेविकों ने जो नारे निश्चित किए थे, उनमें से कुछ ये हैं— "चौथी स्टेट ड्यूमा तथा स्टेट कौन्सिल का अन्त हो!", "दस पूँजीपति मन्त्रियों का नाश हो!", "जनता की सेना तथा मजदूर चिरञ्जीवी हों।"

इस भावी प्रदर्शन से कॉङ्ग्रेस इतनी भयभीत हो उठी कि उसने प्रदर्शन को रोकने का निश्चय किया। बोलशेविकों की केन्द्रीय कमिटी ने कॉङ्ग्रेस के निश्चय को मान लिया और प्रदर्शन बन्द कर दिया। पर मजदूरों और सैनिकों को रोक रखना कठिन था। तमाम फ़ैक्टरियों में सभाएँ की गईं। इन सभाओं में जो कॉङ्ग्रेस के लोग बोले थे, वे 'विश्वासघाती' आदि नाम से सम्बोधित किए गए थे।

अब कॉङ्ग्रेस की तरफ से पेट्रोग्रेड में प्रदर्शन किया गया। इस प्रदर्शन में ५ लाख जनता शामिल थी। कॉङ्ग्रेस की बैठक ७ जुलाई तक होती रही। लेनिन ने इस कॉङ्ग्रेस के सामने एक कठिन प्रश्न उपस्थित कर दिया था। वह यह था कि या तो सोवियट छोड़ दी जावे या देश का सम्पूर्ण शासन-भार सोवियट के अधिकार में लाया जावे। कॉङ्ग्रेस में मेनशेविक तथा सामाजिक क्रान्तिवादियों का बहुमत था। ये पार्टियाँ नरम विचार की थीं अतएव कॉङ्ग्रेस की नीति भी नरम थी। कॉङ्ग्रेस धनिकों से समझौता करना चाहती थी और चाहती थी युद्ध को जारी रखना, बोलशेविकों तथा मजदूरों की बातों से कॉङ्ग्रेस दूर रहना चाहती थी। इस कॉङ्ग्रेस की सब से महत्वपूर्ण बात लेनिन का भाषण था। लेनिन ने अपने भाषण में देश का शासनाधिकार अपने हाथ में लेने को सोवियट को आह्वान किया।

पैट्रोग्रेड फ़ैक्टरी कमिटी की पहिली कॉन्फ़्रेन्स १२ जून को प्रसिद्ध टारिड-भवन में हुई। पैट्रोग्रेड के मजदूरों के स्वातन्त्र्य-

संग्राम के इतिहास में इस कॉन्फ्रेन्स का विशेष स्थान है। इस कॉन्फ्रेन्स में ५९८ डेलीगेट शामिल थे, जिनमें से तीन चौथाई बोलशेविक थे और यही कॉन्फ्रेन्स की विशेषता थी। नाविक, फ़ैक्टरियों तथा उनके सङ्घों में मेनशेविकों तथा सामाजिक क्रान्तिवादियों का बहुमत था। हाँ, आर्टलरी फ़ैक्टरी कमिटियों तथा उनके सङ्घों में बोलशेविकों का बहुमत था।

जुलाई के महीने में जनता शासन अपने हाथ में लेने को पागल हो उठी। वह किसी की भी बात सुनने को तैयार न थी।

तीसरी जुलाई को एक कॉन्फ्रेन्स हो रही थी। एकाएक मैशीनगन-रेजीमेण्ट के दो डेलीगेट वहाँ आ पहुँचे। वे बहुत उत्तेजित थे तथा लोहा लेने को तैयार बैठे थे। कॉन्फ्रेन्स के प्रेज़िडेण्ट ने बड़ी मुश्किल से उन्हें शान्त किया। पर जनता को अब शान्त रखना नेताओं के क़ाबू के बाहर की बात थी। शाम को सैनिकों तथा मजदूरों ने अपना जुलूस निकाला। जुलूस के आगे बड़े-बड़े भरण्डे थे, जिनमें लिखा था—"तमाम अधिकार सोवियट को।"

टारिड-भवन में मजदूरों ने एक सभा की। आन्दोलन का सञ्चालन करने के लिए १५ मेम्बरों की एक अस्थायी कमिटी का चुनाव किया गया। पैट्रोग्रेड कमिटी तथा केन्द्रीय कमिटी ने चौथी जुलाई को प्रदर्शन करना निश्चित किया। इस प्रदर्शन में ५,००,००० मनुष्य शामिल थे। शहर में तरह-तरह की अफ़वाहें उड़ रही थीं। कोई कहता था कि मन्त्री गिरफ़्तार कर लिए जावेंगे, कोई कहता था कि सरकारी भवन लूट लिया जाएगा।

जब जुलूस जा रहा था, उस पर एक स्थान पर गोली चलाई गई। जनता में यह भी जोरों से खबर उड़ाई गई कि लेनिन जर्मनी का जासूस है। पाँचवीं जुलाई की रात को मेनशेविकों तथा सामाजिक क्रान्तिवादियों ने डिक्टेटरशिप की घोषणा करने का निश्चय किया, और निश्चय किया सैनिकों तथा मजदूरों से हथियार छीनने का। अनेक स्थानों पर खून-खराबियाँ हुई। बोलशेविक नेता गिरफ़ार कर लिए गए। 'प्रवदा' (Pravda) पत्र बन्द कर दिया गया तथा उसका सम्पादकीय विभाग नष्ट कर दिया गया। सरकार बोलशेविक पार्टी पर, जर्मनी से मिल कर रूस के साथ विश्वासघात करने का दोष लगा रही थी। युद्ध को जारी रखने के लिए सरकार ने क़र्ज लेना चाहा। बोलशेविकों ने जनता से सरकार को क़र्ज न देने की अपील की। इस समय रूस में दो दल हो गए। एक दल वह था, जो तत्कालीन सरकार का समर्थन कर रहा था और सरकार से बड़ी-बड़ी आशाएँ करता था। इस दल में मेनशेविक तथा सामाजिक क्रान्तिवादी भी शामिल थे। दूसरा दल वह था, जो सरकार का घोर विरोधी था तथा उस सरकार को नष्ट कर सोवियट-सरकार की स्थापना करना चाहता था। इस दल में बोलशेविकों का विशेष हाथ था।

इसी के बाद रूस की विख्यात तीसरी क्रान्ति हुई।

तीसरी राज्य-क्रान्ति



स की तीसरी भीषण राज्य-क्रान्ति सन् १९१७ में हुई थी। २१वीं जुलाई को अस्थायी सरकार ने प्रिन्स लोव (Lov) का स्तीफ़ा स्वीकार कर लिया। केरेन्स्की को नवीन सरकार निर्माण करने का कार्य सौंपा गया। इस तीसरी अस्थायी सरकार की सूचना जनता को ७वीं अगस्त को दी गई। केरेन्स्की इस सरकार का प्रेज़िडेण्ट तथा युद्ध-मन्त्री नियुक्त हुआ।

"द्वितीय रूसी-क्रान्ति का इतिहास" नामक प्रसिद्ध पुस्तक में मिलिऑक्तोव ने इस तीसरी अस्थायी सरकार की आलोचना करते हुए लिखा है कि साम्यवादियों का नाम-मात्र का बहुमत होते हुए भी, इस कैबिनेट में धनियों के लोकतन्त्र के मानने वालों का अधिक ज़ोर था। इस कैबिनेट की यही एक विशेषता थी और इसी से तीसरी क्रान्ति का सूत्रपात भी हुआ।

जुलाई का महीना क्रान्ति को कुचलने में व्यय किया गया। बोलशेविक पार्टी को बदनाम करने में कोई बात उठा न रक्खी गई। लेनिन को जर्मनी का जासूस बताया गया। बोलशेविक नेता गिरफ़ार कर लिए गए। बोलशेविक प्रेसों को नष्ट कर दिया

गया। सेना को बोलशेविकों की बातें पढ़ने की मनाही कर दी गई। फलतः बोलशेविकों ने भी ग़ैर-क़ानूनी उपायों से काम लेना शुरू कर दिया। लेनिन और जिनोवीव को सरकार पकड़ना चाहती थी। इतने में एक दिन वे ग़ायब हो गए। उन्होंने अपने बाल कटा डाले। मजदूरों का भेष धारण कर लिया और सरकारी अफ़सरों की आँखों में धूल झोंकते हुए फ़िनलैण्ड जा पहुँचे और वहाँ छिप कर अपना काम करने लगे।

बोलशेविक-पार्टी की छठीं कॉङ्ग्रेस की बैठक २६वीं जुलाई से तीसरी अगस्त तक हुई। परन्तु लेनिन इस कॉङ्ग्रेस में उपस्थित न हो सका था, क्योंकि वह छिपा हुआ था। इस कॉङ्ग्रेस में १८७ प्रतिनिधि उपस्थित थे, जिन्हें वोट देने का पूरा अधिकार था। इनके अलावा १०७ ऐसे प्रतिनिधि थे, जो केवल सलाह दे सकते थे। बोलशेविकों ने अपनी इस कॉङ्ग्रेस में क्रान्ति के विरोधियों को दबाने तथा क्रान्ति को सुदृढ़ करने के प्रस्ताव पास किए।

२१वीं जुलाई को अस्थायी सरकार ने जनता के नाम एक अपील निकाली। इस अपील का उद्देश्य था, क्रान्तिकारियों से लोहा लेने के लिए जनता को तैयार करना। यह अपील बहुत लम्बी-चौड़ी थी। सब से पहली बात जो इस अपील में कही गई थी, वह यह थी कि अगस्त में मित्र राष्ट्रों की एक कॉन्फ्रेन्स बुलाई जाय। कॉन्फ्रेन्स का काम होगा, मित्र-राष्ट्रों की वैदेशिक-नीति को निश्चित करना और रूसी-क्रान्ति के सिद्धान्तों को कार्यान्वित करना। इस अपील द्वारा अस्थायी सरकार ने वादा किया था

कि विधान-विधायक-सभा (Constituent Assembly) का चुनाव नियत समय पर—यानी १७ वीं सितम्बर को होगा। सरकार ने म्युनिसिपैलिटियों को जारी करने का भी वादा किया था। राष्ट्रीय आर्थिक कौन्सिल तथा केन्द्रीय आर्थिक कमिटी आर्थिक समस्याओं को हल करेंगी तथा मजदूरों की रक्षा करेंगी। भूमि के प्रश्न के सम्बन्ध में एक बिल तैयार करके विधान-विधायक सभा में पेश किया जावेगा। अपील के अन्त में सरकार ने जनता से प्रार्थना की थी, कि वह उसकी सहायता करने में कोई बात उठा न रक्खे।

क्रान्ति के विरोधियों का केन्द्र-स्थान मॉस्को की जन-सेवक सभा (Conference of the publicmen of Moscow) थी। इस संस्था के नेता थे, रॉड्जिआङ्को ऐसे करोड़पति। देश के चुने-चुने प्रतिक्रियावादी यहाँ जमा थे। इन लोगों ने अपना सङ्गठन दृढ़ करके क्रान्तिवादियों पर धावा करना चाहा और इसी ध्येय को प्राप्त करने के लिए मॉस्को स्टेट कॉन्फ्रेन्स बुलाई गई। परन्तु केरेन्स्की से काम निकलता न दिखाई पड़ता था। उसके दिन अब बीत चुके थे, पर उसकी जगह की पूर्ति का प्रश्न अब जरा टेढ़ा था। इसके लिए जनरल कार्नीलोव (General kornilov) का नाम लिया जा रहा था और मॉस्को कॉन्फ्रेन्स उसे डिक्टेटर बनाने वाली थी।

इस समय क्रान्तिवादियों का दल एक बार पुनः कमजोर हो गया था। यद्यपि सोवियट संस्थाएँ जीवित थीं और उनकी

केन्द्रीय कार्यकारिणी भी मौजूद थी, पर उनमें पारस्परिक विद्रोह फैला था, इसलिए वे निकम्मी हो रही थीं। उन्होंने अपनी रक्षा के लिए एक कॉन्फ्रेन्स भी बुलाई, परन्तु कोई परिणाम नहीं निकला।

मजदूर-दल बड़ी सावधानी से इस परिस्थिति का अध्ययन कर रहा था तथा अपनी तैयारी भी कर रहा था।

मॉस्को स्टेट कॉन्फ्रेन्स के लिए २५ वीं अगस्त नियत हुई। इस कॉन्फ्रेन्स में क्रान्ति के विरोधियों का बहुमत था। यह इसी से साबित होता है, कि सोवियट की केन्द्रीय समिति के प्रत्येक आदमी पीछे स्टेट ड्यूमा के, जिसका अब कहीं नाम-निशान भी न था, तीन आदमी थे। क्रान्ति-विरोधी संस्थाओं के आदमियों की धूम थी। कॉर्नीलोव तथा कलेडिन ऐसे प्रतिक्रियावादियों का इस कॉन्फ्रेन्स में जोरों से स्वागत किया गया। यह देख कर मॉस्को स्टेट कॉन्फ्रेन्स के विरोध में मॉस्को के मजदूरों ने हड़ताल कर दी। ४१ व्यापारिक सङ्घों ने बहुमत से हड़ताल करने का निश्चय किया। चार लाख मजदूर इसमें शामिल थे। एक तरफ़ तो ड्यूमा के प्रेजिडेण्ट रॉड्ज़िआङ्को के पास स्टॉक एक्सचेञ्ज कमिटियों (Stock Exchange Committees) आदि की तरफ़ से बधाई के तार आ रहे थे और दूसरी तरफ़ उसी के पास चारों तरफ़ से मजदूरों के जुलूस तथा हड़तालों की खबरें आ रही थीं। धनी लोग चिल्ला रहे थे—"सैनिक डिक्टेटरशिप चिरञ्जीव हो।" मजदूर कह रहे थे—"क्रान्ति के विरोधियों का अन्त हो।"

क्रान्ति के विरोधी दो उपायों से काम लेना चाहते थे। उनका पहला उपाय था, स्टेट कॉन्फ्रेन्स में पार्लामेण्टरी तरीक़ा। कार्नीलोव के आधिपत्य में सैनिक डिक्टेटरशिप उनका दूसरा उपाय था। क्रान्ति का दमन करने के लिए क़ज़ाक़ी घुड़सवारों की रेजिमेण्ट बुलाई गई। क्रान्ति का नाम सदा के लिए मिटा देने के लिए कई षड्यन्त्र रचे जाने लगे।

कार्नीलोव ने बोलशेविकों को कुचलने की एक नई चाल सोची। बोलशेविक सेना को उसने युद्ध-क्षेत्र के उस भाग में भेजना शुरू किया, जहाँ जर्मनी-सेना बहुत जबरदस्त पड़ती थी। यदि सेना आज्ञा मानने से इन्कार करती, तो उसे प्राण-दण्ड दिया जाता। यदि वहाँ लड़ती तो अवश्य ही जर्मनी की गोलियों से मारी जाती। बोलशेविक सेना ने गोलियों से भुनना पसन्द किया, पर बदनामी लेना पसन्द नहीं किया। पर कार्नीलोव ने उन्हें बदनाम करने में कुछ उठा न रक्खा। उन पर आज्ञा न मानने का, अपने स्थान से हट जाने का तथा इसी प्रकार के और भी अनेक दोषारोपण किए गए। बोलशेविक सेना के विरुद्ध, उसे बदनाम करने के लिए, देश भर में जान-बूझ कर झूठी बातें फैलाई गईं। धनिकों के पत्रों ने बोलशेविक सेना को कायर और ग़ैर-ज़िम्मेदार आदि विशेषणों से सम्बोधित किया। यही नहीं, तमाम यूरोप में सेना को पूरी तरह से बदनाम किया गया।

प्रतिक्रियावादियों ने युद्ध-क्षेत्र में तथा देश भर के प्रधान-प्रधान शहरों तथा ज़िलों में सैनिक-केन्द्रों की स्थापना की। वे गृह-युद्ध

की तैयारी करने लगे, परन्तु उन्होंने संसार भर में प्रचार यह किया कि रूस के मजदूर गृह-युद्ध की तैयारी कर रहे हैं, उनके पत्र प्रत्येक दिन यही लिखा करते थे कि कल से बोलशेविक लोग गृह-युद्ध छेड़ने वाले हैं।

क्रान्ति के विरोधियों के षड्यन्त्र के तीन मुख्य दल थे। सब से पहला दल केरेन्स्की का था, दूसरा कार्नीलोव का तथा तीसरा अन्तिम दल उन लोगों का था, जो जारशाही शासन चाहते थे। इस गुट्ट में जार निकोलस के समय के कुछ मुसाहब आदि शामिल थे। अस्तु।

कार्नीलोव की सेना ने पेट्रोग्रेड की तरफ़ बढ़ना शुरू किया। सरकार जर्मनी से सन्धि करने को उत्सुक थी, ताकि सेना युद्ध-क्षेत्र से छुट्टी पा जावे और मजदूरों को कुचलने में लग जावे।

देश भर में बिजली दौड़ गई। मजदूरों का खून उबलने लगा। उन्होंने हथियार संग्रह करके अपने को सशस्त्र बनाना आरम्भ किया। देखते-देखते पेट्रोग्रेड में उनकी एक लाल सेना (Red Guard) खड़ी हो गई। बोलशेविकों ने भी उनके नाम निम्न-लिखित अपील निकाली—"लड़िए, जब तक खून का एक बूँद भी बाक़ी रहे! लड़िए, केरेन्स्की के लिए नहीं, बल्कि क्रान्ति के लिए।" मजदूरों की प्रत्येक संस्था में मानों आग ही लग गई। सोवियटों ने भी युद्ध की तैयारी आरम्भ कर दी। सब स्थानों पर बड़े शहरों से लेकर छोटे शहरों तक में क्रान्तिकारी संस्थाओं की

स्थापनाएँ की गईं। पेट्रोग्रेड और मॉस्को में पुनः पुराने दृश्य दिखाई देने लगे।

जनरल कार्नीलोव के अरमान दिल ही में रह गए। उसकी सेना, जो पेट्रोग्रेड पर चढ़ाई करने जा रही थी, भगा दी गई। जनरल कलेडिन दक्षिण से उत्तर की ओर बढ़ रहा था और पेट्रोग्रेड में अन्न की पहुँच रोक देना चाहता था, परन्तु वह भी असफल ही रहा। प्रतिक्रियावादियों की सारी योजनाएँ खाक में मिल गईं। उन्होंने अपने को अत्यन्त अधिक शक्तिशाली समझ रक्खा था तथा क्रान्तिकारियों को शक्तिहीन समझते थे। परन्तु अन्त में उनकी आँखों का परदा हट गया। कार्नीलोव की बेवकूफ़ी ने मजदूरों, किसानों तथा सैनिकों को और भी उत्साहित कर दिया।

मॉनशेविक पार्टी का अस्तित्व तो राजनैतिक क्षेत्र से पहले ही मिट चुका था। सामाजिक क्रान्तिवादियों (Social Revolutionaries) में भी बेढब फूट पड़ गई। फलतः सरकार को एक साथ ही अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा।

इसी समय डिमॉक्रैटिक कॉन्फ्रेन्स की बैठक हुई। यह कॉन्फ्रेन्स भी 'मॉस्को स्टेट कॉन्फ्रेन्स' की भाँति केवल दिखावा थी। सोवियटों को इस कॉन्फ्रेन्स में तीसरी जगह दी गई। इस कॉन्फ्रेन्स की कार्यवाही से बोलशेविक इतने असन्तुष्ट हो गए कि वे अपने नेता ट्रॉट्स्की (Trotsky) के साथ कॉन्फ्रेन्स से उठ कर चले गए। उस कॉन्फ्रेन्स में बोलशेविकों की तरफ से

जो विज्ञप्ति पढ़ी गई थी, उसमें उन्होंने देश के सामने निम्न-लिखित बातें रक्खी थीं :—

(१) भूमि किसी की निजी सम्पत्ति न रह सकेगी। सारी भूमि किसान-कमिटियों (Peasant Committees) को दे दी जावेगी, जब तक कि विधान-विधायक सभा कोई निर्णय न करे। (२) पैदावार (Production) तथा बटवारे (Distribution) पर, राष्ट्रीय पैमाने पर मजदूरों का अधिकार होगा। (३) तमाम गुप्त सन्धियाँ रद्द कर दी जावेंगी, और (४) रूस में जितनी जातियाँ रहती हैं, उन सबको स्वतन्त्रता दी जावे। फ़िनलैण्ड और उकरेन को दबाने के लिए जो-जो उपाय काम में लाए जा रहे हैं, वे सब त्याग दिए जायँ।

उपर्युक्त बातों के अलावा बोलशेविकों ने निम्नलिखित कई बातें और भी पेश की थीं, जिन्हें वे फ़ौरन कार्यान्वित करना चाहते थे :—

(१) मजदूरों तथा उनके सङ्गठनों के विरुद्ध जो-जो क़ानून बनाए गए हैं, वे सब फ़ौरन हटा लिए जावें। युद्ध-क्षेत्र में मौत की सजा न दी जाए। सेना में जितने लोकतन्त्रीय सङ्गठन हैं, उन्हें आन्दोलन करने की पूरी स्वतन्त्रता रहे। सेना में जितने क्रान्ति के विरोधी हैं, वे सब अलग कर दिए जावें। (२) कमिश्नर तथा अन्य दूसरे अफ़सर निर्वाचन द्वारा नियुक्त किए जावें। (३) मजदूरों की एक सेना बनाई जावे। (४) स्टेट ड्यूमा तथा स्टेट कौन्सिल तोड़ दी जावे और विधान-विधायनी सभा शीघ्र बुलाई

जावे। (५) सब नागरिकों को बराबर अधिकार हों। किसी भी पुरुष को कोई विशेष अधिकार न हो। और (६) मजदूरों को आठ घण्टे से अधिक काम न करना पड़े।

इसके सिवा बोलशेविकों ने एक जाँच-कमीशन की भी माँग पेश की तथा जितने क्रान्तिकारी क़ैद थे, उन्हें छोड़ देने को कहा। और उन पर जो मुक़दमे चल रहे थे, उन्हें खुली अदालतों में चलाने को कहा।

अक्टूबर का महीना आरम्भ होते-होते रूस की हालत बदतर हो गई। जमींदारों ने अपनी भूमि किसानों के हाथ बेचनी शुरू कर दी। किसानों ने जमींदारों से जबरदस्ती भूमि छीननी शुरू कर दी। धनिकों के मकान आदि जला दिए गए। किसानों का धैर्य जाता रहा। वे विधान-विधायिनी सभा तक ठहर न सकते थे। शहरों की सड़कों पर सैनिक लोग अपना जुलूस निकालने लगे। प्रत्येक जुलूस में बहुत से झण्डे होते थे, जिन पर लिखा होता था—"गाँवों में मजदूर नहीं हैं"; "हमारी भूमि जोती नहीं जाती;" "गाँवों में हमारे बाल-बच्चे भूखों मर रहे हैं।"

मजदूरों में भी हड़ताल-आन्दोलन फैलने लगा। कई स्थानों में कई हफ्तों तक हड़तालें जारी रहीं। रेलवे के मजदूर भी आम हड़ताल करने को तुले हुए थे। पूँजीपतियों ने फ़ैक्टरियाँ बन्द कर दीं। दूकानदारों ने अपनी दूकानें बन्द कर दीं। उन्होंने सोचा, यदि हम कुछ दिनों तक काम बन्द कर देंगे, तो मजदूर खायँगे क्या?

१९ वीं मार्च को, अस्थायी सरकार ने एक घोषणा निकाल कर किसानों को उस समय तक ठहरने की सलाह दी थी, जब तक कि विधान-विधायिनी सभा भूमि के प्रश्न को हल न कर दे। एक भूमि-कमिटी बनाई गई, जिसका काम था, विधान-विधायिनी सभा में पेश करने के लिए प्रस्ताव तैयार करना।

परन्तु किसान इससे सन्तुष्ट न हुए। फलतः देश भर में किसान-विद्रोह शुरू हो गया। जगह-जगह लूट-मार होने लगी। असमन्स्क जिले में प्रिन्स व्याजेन्स्की (Prince Vyazensky) नाम के एक रईस की एक मिल तथा कई बगीचे थे। पाँच हज़ार किसानों ने धावा बोल कर उसे तहस-नहस कर दिया और प्रिन्स को गिरफ़्तार कर लिया। अन्त में उसे ग्राजी नामक स्थान पर ले गए, जहाँ सैनिकों ने उसे बड़ी बेरहमी से मार डाला। जहाँ देखिए, वहीं बेचारे जमींदारों की जायदादें बेरहमी से लूटी जा रही थीं। किसानों ने शासन-कार्य को असम्भव कर दिया। फलतः सरकार भी कमर कस कर किसानों से मोर्चा लेने लगी। किसान-आन्दोलन को कुचलने के लिए विशेष कमिटियाँ बनाई गईं। गिरफ़्तारियों की धूम मच गई। अस्तु।

२४वीं अक्टूबर की रात्रि को अस्थायी सरकार ने पेट्रोग्रेड में काम करना शुरू कर दिया। 'ऑफ़िसर्स ट्रेनिङ्ग कोर' (Officers' Training Corps) के सब मेम्बर लड़ाई के लिए तैयार हो गए। उसी रात को 'अरोरा' नामक क्रूज़र जहाज को, जिसके मल्लाह बोलशेविकों से सहानुभूति रखते थे, समुद्र पर

चले जाने की आज्ञा मिली। न्याय-मन्त्री मलएटोविच ने अपने अफ़सरों को आदेश दिया कि वे मजदूरों और सैनिकों के सोवियट की सैनिक क्रान्तिकारी कमिटी (Military Revolutionary Committee) के कामों की छान-बीन करें। सरकार ने बहुत से सरकारी अख़बारों का प्रकाशन बन्द कर दिया। एक अख़बार के छापेख़ाने को चारों तरफ़ घेर लिया गया और अधिकारी को सरकारी आज्ञा-पत्र दिखाया गया कि जितने पत्र छप चुके हैं, वे सब सरकार को सौंप दिए जावें और भविष्य में कोई भी पत्र न छापा जावे। छापेख़ाने के अधिकारी ने उत्तर दिया कि वह किसी की भी आज्ञा मानने को तैयार नहीं है, जब तक कि उस पर सोवियट की सैनिक क्रान्तिकारी कमिटी की सही न हो। यह सुन कर सरकारी आदमियों ने सारा प्रेस नष्ट-भ्रष्ट कर डाला।

होम सेक्रेटरी ने तमाम सूबे की सरकारों को आज्ञा भेजी कि यदि लोग शासन अपने हाथ में लेने का प्रयत्न करें, तो उनके प्रयत्न निष्फल कर दिए जावें। सरकारी भवनों, स्टेशनों तथा पुलों पर सरकारी सेना खड़ी कर दी गई। मुख्य मुख्य चौराहों पर खड़ी सेना मोटरकारों पर अपना अधिकार कर रही थी। परन्तु क्रान्तिकारी कमिटी ने पत्रों के जब्ती के बारे में सरकारी आज्ञा मानने से इन्कार कर दिया। क्रान्तिकारी सेना छापेख़ानों तथा उनके सम्पादकीय विभागों की रक्षा करने लगी। सड़कों पर जब्त-शुदा पत्रों की कॉपियाँ बेची जाने लगीं। शाम को तमाम

सड़कों पर सभाएँ हुईं। इन सभाओं में सैनिक क्रान्तिकारी कमिटी के समर्थन में प्रस्ताव पास किए गए!

मोटर साइकलों की एक सेना सरकार के 'शीत-महल' (Winter Palace) की रक्षा कर रही थी। परन्तु अविश्वास के कारण वह वहाँ से हटा ली गई। इसी सेना की एक बटेलियन को अस्थायी सरकार ने युद्ध-क्षेत्र से बुलाया था। परन्तु वह परेडलास्कया नामक स्टेशन पर आकर रुक गई और उसने तार देकर पेट्रोग्रेड सोवियट से पूछा कि वह क्यों बुलाई गई है? सोवियट ने तार भेज कर उसका स्वागत किया और उससे जहाँ थी, वहीं रहने को कहा और उसके प्रतिनिधियों को पेट्रोग्रेड बुला भेजा, उत्तरीय युद्ध-क्षेत्र से सेना की एक टोली को अस्थायी सरकार ने बुला भेजा, पर उसने आने से इन्कार कर दिया। इसी तरह कई सेनाएँ भी बाग़ी हो गईं।

२५वीं अक्टूबर की रात से सैनिक क्रान्तिकारी कमिटी ने अपना काम आरम्भ कर दिया। रात को शीत-महल पर धावा करने का निश्चय किया गया। पर यह काम दूसरे दिन सुबह ६ या ७ बजे के पहिले न हो सका। उसी दिन रात को, सैनिक क्रान्तिकारी कमिटी की सेना ने निकोलस तथा बालटिक स्टेशनों पर, कई मोटर के कारख़ानों पर तथा अनेक पुलों पर अधिकार कर लिया। उपरोक्त 'अरोरा' क्रूज़र भी निकोलस पुल के पास आकर ठहर गया। बाग़ी सेना की एक टुकड़ी ने बड़ी आसानी से स्टेट बैङ्क पर भी अधिकार कर लिया। वारसा का विशाल

रेलवे स्टेशन भी बागियों के अधिकार में आगया। अन्त में सैनिक क्रान्तिकारी कमिटी ने रूस के नागरिकों के नाम एक घोषणा-पत्र निकाला, जिसका आशय इस प्रकार था :—

"अस्थायी सरकार का अन्त हो चुका है। शासन की बागडोर सैनिक क्रान्तिकारी कमिटी के हाथों में आ गई है। जिन बातों के लिए जनता लड़ रही थी—लोकतन्त्रीय शासन, भूमि पर जमींदारों के अधिकारों का अन्त, पैदावार पर मजदूरों का अधिकार तथा सोवियट सरकार की स्थापना—ये सब बातें निश्चित हैं। मजदूरों, सैनिकों तथा किसानों की क्रान्ति चिरञ्जीवी हो।"

अन्त में क्रान्तिकारी सेना ने विख्यात मेरियन भवन (Marian Palace) पर भी अधिकार कर लिया और पेट्रोग्रेड सोवियट की एक विशेष बैठक हुई। इस सभा का सभापति स्वयं ट्रॉटस्की था। अपने व्याख्यान के सिलसिले में उसने कहा :—

"सैनिक क्रान्तिकारी कमिटी के नाम पर मैं यह घोषणा करता हूँ कि अस्थायी सरकार का अन्त हो जाय। कुछ मन्त्री गिरफ़्तार हो चुके हैं, और बाक़ी कुछ ही दिनों या घण्टों में गिरफ़्तार हो जावेंगे। इतिहास में मुझे कोई ऐसी दूसरी क्रान्ति नहीं दिखाई पड़ती, जिसमें इतने अधिक लोगों ने भाग लिया हो और साथ ही, जिसमें इतना कम खून बहा हो। स्टेशनों डाक-घरों और तार-घरों, पेट्रोग्रेड टेलीफ़ोन एक्सचेञ्ज तथा स्टेट बैङ्क पर हमारा अधिकार हो चुका है। अभी तक शीत-भवन पर

क़ब्ज़ा नहीं हुआ है, पर इस क़िस्मत का फ़ैसला भी चन्द मिनटों में ही हो जावेगा। अब हमें एक ऐसी सरकार की स्थापना करना है जिसका एकमात्र लक्ष्य होगा—मज़दूरों, सैनिकों तथा किसानों की आवश्यकताओं की पूर्त्ति करना।"

ट्रॉट्स्की के बाद लेनिन खड़ा हुआ। बहुत दिनों के पश्चात् लेनिन का यह पहिला भाषण था। जब वह खड़ा हुआ, तब तालियों की गड़गड़ाहट से आसमान गूँज उठा। उसने कहा :—

"कॉमरेडों, मज़दूरों तथा किसानों की इस क्रान्ति का सब से बड़ा फल यह है कि अब हमें सोवियट सरकार मिल जावेगी। रूस के इतिहास में एक नवीन अध्याय का श्रीगणेश होगा। इस क्रान्ति का अन्तिम परिणाम होगा, साम्यवाद की विजय। बस, युद्ध का शीघ्र ही अन्त होना चाहिए। परन्तु इस युद्ध का अन्त करने के लिए हमें पूँजीवाद से युद्ध करना होगा। इस लड़ाई में संसार का प्रत्येक मज़दूर हमारी सहायता करेगा। इटली, इङ्गलैण्ड और जर्मनी में अशान्ति साफ़ दिखाई पड़ रही है। ग़रीबों का विश्वास-पात्र बनने के लिए यह आवश्यक है कि तमाम गुप्त सन्धियाँ प्रकाशित कर दी जाएँ।"

इसी समय शहर भर में यह अफ़वाह ज़ोरों से फैल गई कि केरेन्स्की की मातहती में सरकारी सेना पेट्रोग्रेड पर हमला करने आ रही है। परन्तु इस अफ़वाह में कोई सत्यता न थी।

जो सरकारी सेना शीत-महल की रक्षा कर रही थी, उसके पास भोजन-सामग्री न थी। रोटियों से भरी हुई एक मोटर-लॉरी

उन्हें खाना पहुँचाने जा रही थी, पर क्रान्तिकारी सेना ने उसे रास्ते में ही रोक लिया। इसका परिणाम यह हुआ कि सेना की कई टोलियाँ क्रान्तिकारियों से आ मिलीं। उसी दिन शाम को अस्थायी सरकार को सैनिक क्रान्तिकारी कमिटी की ओर से अल्टीमेटम दिया गया कि सरकार हथियार रख दे और अपनी सेना को निःशस्त्र कर दे। यदि वह न मानेगी तो शीत-महल पर गोलाबारी की जावेगी। सरकार को अल्टीमेटम पर विचार करने के लिए २० मिनट का समय दिया गया। जब २० मिनट समाप्त हो गए तो १० मिनट और दिए गए और इन १० मिनटों के समाप्त होते ही लाल-सेना ने 'हेडक्वार्टर्स' में प्रवेश करके उस पर क़ब्ज़ा कर लिया। शीत-महल बाक़ी था।

रात के नौ बजे तक अस्थायी सरकार की तरफ़ से अल्टीमेटम का कोई उत्तर न आया तो पिटर-पॉल क़िले से तथा अरोरा क्रूज़र से हवाई गोलियाँ दागी गईं। शीत-महल के चारों तरफ़ जो सेना खड़ी थी, उसने मैशीनगनों तथा राइफ़लों से भवन पर गोलियाँ चलाना प्रारम्भ कर दिया। एक घण्टे तक दोनों तरफ़ से गोलियाँ चलती रहीं, अन्त में जो सरकारी सेना भवन की रक्षा कर रही थी, उसने भवन छोड़ना शुरू कर दिया। औरतों की बटैलियन, जो भवन की रक्षा कर रही थी, गोलियों की बौछार के सामने न ठहर सकी और उसने हथियार रख दिए। तत्पश्चात् कुछ देर के लिए गोलाबारी बन्द कर दी गई।

रात के ग्यारह बजे भवन पर पुनः धावा किया गया। यौशीनगनों तथा पिटर-पॉल क़िले की तोपों ने गोले बरसाने शुरू किये। गोलाबारी बन्द होने पर क्रान्तिकारी सेना भवन के अन्दर घुस गई और सरकारी सेना से हथियार छीन लिए। थोड़ी देर में तमाम भवन पर क्रान्तिकारी सेना का अधिकार हो गया। अस्थायी सरकार गिरफ़ार कर ली गई।

जब सोवियट कॉङ्ग्रेस की बैठक पुनः बैठी तो लोगों को बताया गया कि शीत-भवन पर अधिकार हो गया है। अस्थायी सरकार गिरफ़ार कर ली गई है। कॉङ्ग्रेस ने मजदूरों, सैनिकों तथा किसानों के नाम एक घोषणा निकाली। इसमें कहा गया था कि अस्थायी सरकार गिरफ़ार कर ली गई है और शासन की बागडोर कॉङ्ग्रेस के हाथों में आ गई है। घोषणा में यह भी कहा गया था कि सूबों की सोवियटें अपने-अपने सूबों का शासन अपने हाथों में ले लें। घोषणा के अन्त में सोवियट शासन का प्रोग्राम भी निश्चित किया गया था।

यह तो पेट्रोग्रेड का हाल था, अब जरा मॉस्को का हाल भी सुन लीजिए। मॉस्को वाली मजदूरों और सैनिकों की सोवियट में बोलशेविकों की बातें खूब सुनी जाती थीं। क्योंकि उसमें सैनिकों की अपेक्षा मजदूर ही अधिक थे। सैनिकों की अपनी निजी सोवियट भी थी, जिसमें क्रान्ति के विरोधियों का बहुमत था।

'सोशल डिमोक्रैट' नामक साम्यवादी पत्र ने पेट्रोग्रेड का हाल छापा। अपने अग्रलेख में पत्र ने पेट्रोग्रेड के सैनिकों और

८

मजदूरों की प्रशंसा करते हुए मॉस्को के मजदूरों और सैनिकों से उनका अनुकरण करने की सलाह दी। २५ अक्टूबर को मजदूरों और सैनिकों की सोवियटों ने मिल कर एक सैनिक क्रान्तिकारी कमिटी की स्थापना की। ३९४ प्रतिनिधि इस संस्थापना के पक्ष में और १०६ प्रतिनिधि खिलाफ़ थे।

२७ वीं अक्टूबर को 'इसवेस्टिया' (Isvestia) पत्र में सैनिक क्रान्तिकारी कमिटी की निम्नलिखित अपील प्रकाशित हुई:—

"पेट्रोग्रेड के क्रान्तिकारी सैनिकों और मजदूरों ने पेट्रोग्रेड के सैनिकों और मजदूरों की सोवियट की मातहती में क्रान्ति के साथ दगा करने वाली अस्थायी सरकार से लड़ाई छेड़ दी है। मॉस्को के सैनिकों और मजदूरों का यह कर्तव्य है कि वे पेट्रोग्रेड के कॉमरेडों की इस लड़ाई में सहायता करें। इस लड़ाई को चलाने के लिए मॉस्को के सैनिकों और मजदूरों की सोवियट ने एक सैनिक क्रान्तिकारी कमिटी की स्थापना की है और इस कमिटी ने काम भी शुरू कर दिया है। सैनिक क्रान्तिकारी कमिटी निम्न-लिखित आज्ञाएँ देती है:—

(१) तमाम मॉस्को गारीसन युद्ध की तैयारी करे। प्रत्येक कम्पनी को सैनिक क्रान्तिकारी कमिटी की पहिली आज्ञा पाते ही काम पर जाने को तैयार रहना चाहिए। (२) सैनिक क्रान्तिकारी कमिटी की आज्ञा के अलावा कोई भी आज्ञा, जब तक कि उस पर सैनिक क्रान्तिकारी कमिटी की सही न हो, न मानी जावे।

इसके बाद मॉस्को गैरिसन के तमाम कम्पनियों के प्रतिनिधियों की एक कॉन्फ्रेन्स बुलाई गई। इस कॉन्फ्रेन्स ने सैनिक क्रान्तिकारी कमिटी की सहायता करने का निश्चय किया। इस प्रस्ताव के पक्ष में ११६ वोट थे और विरोध में केवल १८। मॉस्को व्यापार-सङ्घों की केन्द्रीय ब्यूरो, रेलवे-मैन की अखिल रूसी-सङ्घ की केन्द्रीय कार्यकारिणी तथा सामाजिक क्रान्तिकारी अन्तर्राष्ट्रीयों ने कमिटी में अपने-अपने प्रतिनिधि भेजे। सैनिक क्रान्तिकारी कमिटी कुछ विशेष काम न कर सकती थी, क्योंकि इसमें मेनशेविक भी शामिल थे। कर्नल रयाबत्सेव ने कमिटी को झट से एक अल्टीमेटम दे दिया कि कमिटी तोड़ दी जावे। क्रेमलिन से बोलशेविक गार्ड हटा लिए जावें और आर्सेनल से लिए हुए शस्त्र लौटाल दिए जावें।

अल्टीमेटम के उत्तर में कमिटी ने किसानों की सोवियट से और स्टेट ड्यूमा आदि से नए प्रतिनिधियों के लेने का प्रस्ताव किया; पर सामाजिक क्रान्तिकारियों ने—जिन्होंने अपनी एक अलग कमिटी बना ली थी—उस समय तक बातचीत करने से एक दम इन्कार कर दिया,जब तक कि अल्टीमेटम का सीधा-साधा उत्तर न मिल जावे।

क्रान्ति के विरोधियों का कमिटी से बातचीत करने से इन्कार करने का हाल दूसरे दिन मेनशेविक-पत्र में छपा। इसी पत्र में मेनशेविकों की अपील भी छपी। खून-खराबी का सारा दोष बोलशेविकों के मत्थे मढ़ा गया। उसी पत्र में मेनशेविकों ने यह

भी घोषणा की, कि उन्होंने सैनिक क्रान्तिकारी कमिटी से सम्बन्ध तोड़ दिया है। मेनशेविकों के अलग हो जाने से क्रान्तिकारी कमिटी का कार्य सरल हो गया। कमिटी विरोधियों से बातचीत करने में लगी थी। मॉस्को लड़ाई के लिए तैयार हो रहा था।

रयाबजेव ने चुपचाप शहर के बीच में जङ्करों (Junkers) और कोजकों (Kossacks) को इकट्ठा कर लिया। बहुत शीघ्र कोजकों ने काम करने से इन्कार कर दिया और अलेक्जण्ड्रेव स्कूल के आँगन में बन्द कर दिए गए। सफेद गार्ड, जिसमें अधिकतर हाई स्कूल के लड़के थे और ब्लैक हण्ड्रेड (Black Hundred) के अफसर भी जङ्करों के साथ हो गए। केवल एक जङ्कर स्कूल ने लड़ने से इन्कार किया।

यद्यपि क्रेमलिन बोलशेविक सैनिकों के हाथों में था, किन्तु सैनिकों को विश्वास दिलाया गया कि सैनिक क्रान्तिकारी कमिटी ने अब लड़ाई से हाथ खींच लिया है। सैनिक धोखे में आ गए और बिना एक भी गोली चलाए उन्होंने हार मान ली। क्रान्तिकारी कमिटी और जिलों के बीच का सम्बन्ध तोड़ दिया गया। जिलों को लड़ाई का सारा बोझ उठाना पड़ा, यद्यपि वे एक-दूसरे से अलग थे और न उन्हें पता ही लगता था, कि नगर के बीच में क्या हो रहा है।

पहिले तो क्रान्तिकारी कमिटी कमजोर पड़ती थी। मजदूरों और सैनिकों में अधिक उत्साह न दिखाई पड़ता था। एक समय तो हालत यहाँ तक खराब हो गई थी, कि क्रान्तिकारी कमिटी

रिआयतें तथा सन्धि तक करने को तैयार थी। पर हालत धीरे-धीरे सुधरने लगी। फ़ैक्टरियों तथा कारखानों में आग फैलने लगी। मजदूरों में जीवन-सञ्चार होने लगा। जङ्कर नगर के केन्द्र में खदेड़ दिए गए और विजय के चिन्ह दिखाई पड़ने लगे।

२९वीं अक्टूबर की शाम को २४ घण्टे के लिए लड़ाई बन्द कर दी गई। एक तटस्थ स्थान तय किया गया, जहाँ दूसरे दिन प्रातःकाल सब ठीक-ठाक करने को एक कमीशन आने को था। क्रान्ति के विरोधियों ने सोचा कि उन्हें अपनी शक्ति बढ़ाने का समय मिल जाएगा। वे दक्षिण से कोज़क सेना के आने की उम्मीद कर रहे थे।

कुछ घण्टों बाद क्रान्ति के विरोधियों की सहायता करने के लिए एक सेना आई। इसलिए उनकी हिम्मत बढ़ गई और उन्होंने निकॅटस्की फाटकों पर धावा कर दिया। लड़ाई पुनः शुरू हो गई। सैनिकों और मजदूरों को चारों तरफ़ से सहायता मिलने लगी। क्रान्ति के विरोधी हारने लगे।

बहुत ही शीघ्र जङ्करों को क्रेमलिन की शरण लेनी पड़ी। उन्होंने चारों तरफ़ गोलियाँ चलानी शुरू कर दीं। मॉस्को का तमाम तोपखाना क्रान्तिकारी कमिटी के अधिकार में था। पर वह शहर को व्यर्थ ही नष्ट करना नहीं चाहती थी, इसीलिए उसने अभी तक उसका प्रयोग न किया था। पर अब, जब जीवन-मरण का प्रश्न उसके सामने आ गया, तो उसने तोपखाने से काम लेने का निश्चय किया और क्रेमलिन की इमारतों पर गोलाबारी शुरू कर दी। क्रान्ति के विरोधियों को अपनी हार छिपाने को

अच्छा-सा मौक़ा मिल गया। उन्होंने क्रान्तिकारी कमिटी से पूछा कि वह किन शर्तों पर लड़ाई बन्द करेगी। उन्होंने कहा कि वे अपनी आँखों से ऐतिहासिक इमारतों और धार्मिक स्थानों पर गोलाबारी नहीं देख सकते और वे चाहते हैं कि शान्तिमय नागरिकों का क़त्लेआम बन्द हो जावे।

सैनिक क्रान्तिकारी कमिटी ने उनकी बात मान ली। शर्तें तय हो गईं। और रात के नौ बजे क्रान्तिकारी कमिटी की तरफ़ से सेनाओं के नाम निम्न-लिखित आज्ञा-पत्र भेजा गया :—

"क्रान्तिकारी सेनाएँ विजयी हो गईं। जङ्कर और सफ़ेद गार्ड अपने हथियार रख रहे हैं। धनिकों की शक्तियाँ तितर-बितर कर दी गई हैं और वे हमारी शर्तों पर घुटने टेक रहे हैं। तमाम शक्ति सैनिक क्रान्तिकारी कमिटी के हाथों में है। मॉस्को के मजदूरों और सैनिकों ने बहुत हानि उठा कर मॉस्को में विजय पाई है। मजदूरों, सैनिकों तथा किसानों की नवीन विजित शक्ति की रक्षा के लिए प्रत्येक पुरुष को आगे आना चाहिए। शत्रु ने घुटने टेक दिए हैं। सैनिक क्रान्तिकारी कमिटी तमाम लड़ाई बन्द करने की आज्ञा देती है। लड़ाई बन्द होने के बाद सोवियट की सेनाएँ अपनी-अपनी जगहों पर बनी रहें, जब तक कि जङ्करों और सफ़ेद गार्डों के शस्त्र हम लोगों को न दे दिए जावें। सेनाएँ उस समय तक न तोड़ी जावें, जब तक कि सैनिक क्रान्तिकारी कमिटी की तरफ़ से नवीन आज्ञाएँ न मिलें।"

इस सन्धि की खबर से मजदूर-जिलों को सन्तोष नहीं हुआ। वे इस सन्धि से नाराज़ थे। चौथी नवम्बर के 'सोशल डेमॉक्रैट' पत्र में नीचे लिखा लाल गार्डों का विरोध छपा :—

"जङ्करों को स्वतन्त्र जाने देने से सैनिक क्रान्तिकारी कमिटी ने उन्हें जनता के विरुद्ध दुबारा खड़े होने का अवसर दिया है। हम लोगों की यह माँग है कि तमाम पकड़े गए जङ्कर आदि एक क्रान्तिकारी अदालत के हवाले कर दिए जायँ।"

उनकी उपर्युक्त माँग में बहुत-कुछ सचाई भी थी। क्योंकि जङ्कर लोग जब हथियार रख कर मॉस्को से जा रहे थे, वे कहते गए थे कि "डान पर हम लोग एक महीने के अन्दर मिलेंगे।"

नेता लोग सैनिकों को शान्त करने में कोई कसर बाक़ी न रख रहे थे। जङ्कर तथा अन्य अफ़सरों ने डान पर जमा हुए लाल सेना के सैनिकों तथा मज़दूरों पर—जो-जो उनके हाथों में पड़े—आम तौर से गोलियाँ चलाईं। ऐसी विजय का सारा श्रेय सैनिक क्रान्तिकारी कमिटी ही को था। क्रान्तिकारी कमिटी के होते हुए भी विजय मिलने का सब से बड़ा कारण था मज़दूर-जिलों के नेताओं की सच्ची लगन।

सन् १९१७ की ७ वीं नवम्बर को बोलशेविकों के प्रधान पत्र 'प्रवदा' में लेनिन का एक लेख छपा था। लेख क्या था, क्रान्तिकारियों के नाम लड़ाई का न्योता था। लड़ाई किस ढङ्ग से लड़ी जावे, इस प्रश्न पर लेनिन ने अपने विचार प्रकट किए थे।

तीसरी क्रान्ति सफल हुई। देश के शासन की बागडोर सोवियट के हाथों में आ गई। बीसवीं सदी के प्रथम बीस वर्षों ने रूस की एकदम काया-पलट कर दी। तीन क्रान्तियों ने रूस में ज़मीन-आसमान का अन्तर कर दिया। सन् १९०५ में रूस में प्रथम क्रान्ति हुई। वैसे तो यह क्रान्ति असफल रही, पर इस क्रान्ति ने रूस को रास्ता दिखला दिया और बता दिया, कि क्रान्ति की तैयारी किस ढङ्ग से करनी चाहिए। सन् १९०५ की क्रान्ति को लेनिन ने बहुत महत्वपूर्ण बतलाया है। उसकी राय में यह क्रान्ति आने वाली क्रान्ति की तैयारी मात्र थी।

सन् १९१७ की क्रान्ति ने ज़ारशाही का तख्ता पलट दिया। जिस ज़ार के सामने जाते हुए लोगों के पाँव काँपने लगते थे, वह सिंहासन से उतार दिया गया। ज़ारशाही का सदा के लिए अन्त हो गया। यद्यपि देश में कुछ लोग अब भी ऐसे थे, जो ज़ारशाही की मृत्यु पर आँसू बहा रहे थे, पर उनकी संख्या उँगलियों पर गिनी जा सकती थी। अधिकतर लोग इस ज़ारशाही के पतन से अत्यन्त प्रसन्न थे और उसे बहुत नीची क़ब्र में गाड़ना चाहते थे, जहाँ से वह फिर न निकल सके। ज़ारशाही के अन्त होने पर अस्थायी सरकार की स्थापना हुई, परन्तु अस्थायी सरकार भी जनता को सन्तुष्ट न रख सकी। क्योंकि इसका शासन कुछ ख़ास लोगों का शासन था। जनता स्वयं अपना शासन चाहती थी। इसलिए जनता ने पहले तो अस्थायी सरकार का समर्थन किया, पर धीरे-धीरे उसकी आँखें

खुलने लगीं। वह सचेत हुई। लेनिन ने उसको एक फटकार बतलाई और उनसे अस्थायी सरकार का खुल्लमखुल्ला जोरों से विरोध करने को कहा। फलतः एक और क्रान्ति हुई। यह तीसरी क्रान्ति अन्तिम थी, इस क्रान्ति ने अस्थायी सरकार का अन्त कर दिया और शासन की बागडोर सोवियट को सौंप दी। शासन की लगाम तो सोवियट के हाथों में आ गई, पर अभी सोवियट को अनेक कठिनाइयों का सामना करते हुए, सोवियट सरकार की स्थापना करनी थी।

सोवियट शासन की प्रारम्भिक कठिनाइयाँ





यद्यपि तीसरी रूसी क्रान्ति ने रूस के शासन की बागडोर सोवियट के हाथों में सौंप दी थी। पर देश में अब भी ऐसे लोग थे, जो सोवियट शासन को बिल्कुल पसन्द न करते थे। फलतः क्रान्ति के प्रारम्भ होते ही निकिटिन ने सोवियट को धमकी दी थी। उसने बोलशेविकों को लक्ष्य करते हुए कहा था, कि "तुम्हारे पास काम करने योग्य शक्तियाँ नहीं हैं। यदि तुम शासन को अपने हाथों में लेने में सफल भी हो जाओ तो हम लोग तुम्हारे साथ मिल कर काम न करेंगे। तुम अकेले रहोगे।" उस समय यह केवल धमकी मात्र थी, परन्तु क्रान्ति के सफल होते ही वह काम में लाई जाने लगी।

खुल्लमखुल्ला सोवियट के मार्ग में रोड़े अटकाए जाने लगे। सब से पहिले रोड़ा अटकाया टेलीफोन-विभाग में काम करने वालों ने। तार और डाक-विभागों में काम करने वालों का नम्बर दूसरा था। उसके बाद बैङ्कों और ऑफिसों के क्लर्कों ने भी उनका अनुकरण किया। पेट्रोग्रेड की तार एजन्सी ने काम करने से इन्कार कर दिया। इसके बाद शिक्षकों के 'अखिल रूसी सङ्घ' की तरफ़ से शिक्षकों के नाम एक अपील निकाली गई और उसमें

शिक्षकों से प्रार्थना की गई थी, कि वे स्वतन्त्रता की रक्षा के लिए खड़े हों; सोवियट सरकार का विरोध करें और उसकी आज्ञाएँ मानने से खुल्लमखुल्ला इन्कार कर दें। फलतः राष्ट्रीय स्कूलों के शिक्षकों ने हड़ताल कर दी। इसके बाद अनेक अस्पतालों की नर्सों ने भी हड़ताल कर दी।

पेट्रोग्रेड में धातु की खानों में काम करने वालों की संख्या १,९५, ००० थी, ४,७०० पुरुष तार-विभाग में काम करते थे, भिन्न-भिन्न ऑफ़िसों में काम करने वाले क्लर्कों की तादाद २०,००० थी, ६,००० मनुष्य डाकख़ानों में काम करते थे और बैङ्कों के क्लर्कों की संख्या १०,००० थी। ये सब मिल कर पेट्रोग्रेड की कुल आबादी का पाँचवाँ हिस्सा होते थे। भला जिस शहर की कुल आबादी का पाँचवाँ हिस्सा सरकार से असहयोग कर रहा हो, उस सरकार की कठिनाइयों का क्या ठिकाना हो सकता है। अब प्रश्न यह था कि आख़िर ये लोग सोवियट सरकार का विरोध क्यों कर रहे थे? क्या सोवियट शासन से उन्हें आर्थिक हानि की आशङ्का थी?

सन् १९१७ में मजदूरों के अलावा और लोगों के वेतनों में बहुत बड़ी कमी हो गई थी। उनकी तनख्वाहें पहिले से आधी हो गई थीं। पर मजदूरों की तनख्वाहों में इतनी कमी नहीं हुई थी। इसीलिए इससे पहले ही व्यापार और उद्योग-धन्धों में काम करने वाले केवल १५० रूबल के लिए हड़ताल करने को तैयार थे। और तार-विभागों में काम करने वालों को भी बहुत ही कम वेतन

मिलता था। शिक्षकों की स्थिति तो और भी खराब थी। वस्तुओं का मूल्य तो पाँच गुना से दस गुना तक बढ़ गया था, पर शिक्षकों का वेतन पहिले से केवल ढाई गुना ही बढ़ा था। किसी शिक्षक का वेतन ६५ रूबल से अधिक न था। इससे पहले की अस्थायी सरकार ने शिक्षकों का वेतन बढ़ा कर १०० रूबल कर देने का वादा किया था, पर यह वादा कभी पूरा नहीं हुआ। फलतः उन लोगों ने 'सास का गुस्सा पतोहू के सत्थे' वाली कहावत चरितार्थ की और सोवियट शासन से नाराजी दिखाने लगे।

सिविल सर्वेण्ट आदि जो बड़े-बड़े नौकर थे, उनकी लड़ाई सोवियट से बहुत पुरानी थी। वे जानते थे कि नये शासन में उनकी उतनी क़द्र न होगी। न तो उनके पुराने विशेष अधिकार रहेंगे और न वह दबदबा। वे लोग तो धनिकों के शासन में पले थे, इसलिए स्वप्न में भी यह ख़याल नहीं कर सकते थे, कि ग़रीब लोग भी देश का शासन कर सकेंगे। जो पढ़े-लिखे लोग थे और दिमाग़ से काम करते थे, वे भी जनता के शासन में विश्वास नहीं करते थे। उन्हें मतलब था, अपना आर्थिक जीवन सुधारने से और चैन से रहने से। पेट्रोग्रेड के सिविल सर्वेण्ट तो भला नौकरशाही के पुर्जे ही थे। वे भला सोवियट शासन को कैसे पसन्द कर सकते थे। रेलवे में काम करने वालों की भी वही मनोवृत्ति थी, जो डाक और तार में काम करने वालों की थी।'रेलवेमैन' की अखिल रूसी कार्यकारिणी ने क्रान्ति का पहिले ही विरोध किया था। अक्टूबर की क्रान्ति ने युद्ध का अन्त करके बहुत से लोगों

की रोजी छीन ली थी। क्योंकि युद्ध के समाप्त होते ही बहुत से लोग बेकार हो गए। इसलिए नए शासन का विरोध वे न करते तो कौन करता ?

सोवियट के मार्ग में बाधाएँ खड़ी करने के लिए जिन लोगों ने हड़तालें कीं, उनको धनी लोगों ने धन से सहायता की। एक समय नौ बैङ्कों के क्लर्कों ने हड़ताल की तो 'कैडेट पार्टी' के एक प्रधान मेम्बर कटलर ने हड़तालियों को ५,४०,००० रूबल दिये। दोबारा हड़ताल करने पर ४,८०,००० रूबल दिए गए। बड़े-बड़े फ़र्मों ने भी इन लोगों की पूरी मदद की। इस हड़ताल-कोष में 'प्रथम सोवियट कॉङ्ग्रेस' की अखिल रूसी केन्द्रीय कार्य-कारिणी कमिटी ने भी एक बड़ी रक़म दी थी। पेट्रोग्रेड के हड़ताल-कोष में २० लाख रूबल थे। इसके सिवा हड़तालियों को फ़ान्स से भी बड़ी सहायता मिली। इन सहायताओं का अन्दाज़ा इसी से लगा लीजिए कि हड़ताल करते समय मॉस्को स्टेट बैङ्क में काम करने वालों को अगले दो महीनों की तनख्वाहें पेशगी दे दी गई थीं।

ख़ैर, इन हड़तालों से सोवियट शासन के विरोधियों को थोड़ी-बहुत सफलता तो मिली ही। परन्तु सोवियट शासन को ये असफल नहीं कर सके। देश में थोड़ी सी गड़बड़ी मची, शासन को कठिनाइयों का भी सामना करना पड़ा। परन्तु उसकी जड़ मज़बूत थी। अस्तु—

सरकारी दफ़्तर में काम करने वालों ने हड़ताल करते समय एक 'हड़ताल कमिटी' बनाई और उसका नाम रक्खा "सङ्घों का

सङ्घ" (Union of Unions)। इस सङ्घ ने एक अपील निकाली, जिसमें लिखा कि पेट्रोग्रेड के सरकारी ऑफ़िसों में काम करने वालों के सङ्घों का सङ्घ अपना यह कर्तव्य समझता है कि तमाम सरकारी ऑफ़िसों का काम बन्द कर देने के निश्चय की सूचना जनता को दे दी जावे। बोलशेविकों ने, नङ्गी तलवारों पर भरोसा करते हुए, अपने को सर्वेसर्वा घोषित कर दिया है। अब बोलशेविक राष्ट्रीय शासन के तमाम साधनों पर अपना अधिकार जमाने की बात सोच रहे हैं। अतएव हम लोग सब दलों और सङ्गठनों से, जो स्टेट के शासन के सिद्धान्तों को बचाना चाहते हैं, जोरों से अपील करते हैं कि वह एक सर्व-माननीय सरकार क़ायम करने के लिए इस कठिन लड़ाई में हमारी सहायता करें।

और भी कई संस्थाओं ने इसी तरह की घोषणाएँ निकाल कर इस आन्दोलन को आश्रय दिया। सोवियट सरकार के पक्षपातियों ने भी घोषणाएँ निकालीं और शासन को सफल बनाने की जनता से प्रार्थना की। इन घोषणाओं का सार-मर्म इस प्रकार था :—

"धनी लोग मजदूरों, सैनिकों और किसानों की नवीन सरकार का विरोध कर रहे हैं। उनके अनुयायी राष्ट्रीय और स्थानीय शासन के काम में बाधा डाल रहे हैं। वे बैङ्कों का काम बन्द करने को कह रहे हैं। रेल, डाक और तार का आना-जाना बन्द करने की चेष्टा कर रहे हैं। इसलिए हम उन्हें आगाह करते हैं कि वे आग से खेल रहे हैं। क्योंकि जो कठिनाइयाँ वे पैदा कर रहे हैं, उनका

सब से अधिक कुफल उन्हीं को भोगना पड़ेगा। धनियों और उनके अनुयायियों से भोजन पाने का अधिकार छीन लिया जावेगा। प्रधान अपराधियों की जायदादें जब्त कर ली जायँगी।

"युद्ध-क्षेत्र में अकाल पड़ रहा है। ऊँचे अधिकारीगण रोड़े अटका रहे हैं। इन भूखों मरने वाले अपने भाइयों के प्रति क्रान्ति के विरोधी सिविल सर्वेण्ट बहुत बड़ा अधर्म कर रहे हैं। इसलिए सैनिक क्रान्तिकारी कमिटी उनको अन्तिम चेतावनी देती है कि यदि वे अपनी अड़ङ्गा-नीति से बाज़ न आवेंगे तो उनके विरुद्ध वे कार्रवाइयाँ की जावेंगी; जो उतनी ही सख़्त होंगी, जितनी कि उनके अपराध हैं।"

पर हड़तालियों पर इन घोषणाओं का कुछ भी असर न पड़ा। उन्हें तो अपनी तनख़्वाहों से मतलब था और वह उन्हें मिल रही थी। उनके साथ कोई सख़्ती भी नहीं की जा रही थी। न तो गिरफ़्तारियाँ होती थीं और न गोलियाँ ही चलती थीं। अधिक से अधिक वे बरख़ास्त कर दिए जाते थे और पेन्शन पाने का अधिकार छीन लिया जाता था।

इसी समय कौन्सिल ऑफ़ पीपुल्स कमीसरस ने एक सूचना निकाली कि तमाम कमीसरों और केन्द्रीय कार्यकारिणी कमिटी के मेम्बरों का वेतन ४०० रुबल से अधिक नहीं हो सकता। ऊँची-ऊँची तनख़्वाहों का अन्त हो गया और जिम्मेदार ऊँचे अफ़सरों का भी उतना ही वेतन निश्चित हुआ, जितना कि एक मजदूर का। परन्तु अस्थायी सरकार के पदाधिकारियों को लम्बी-लम्बी

तनख्वाहें मिलती थीं। ग्वोसडेब को २५,००० रूबल सालाना मिलते थे। केरेन्स्की ने सेनापति होते ही ६६,००० रूबल सालाना लेना प्रारम्भ कर दिया था। इसी तरह और ऊँचे राजकर्मचारी भी लम्बी-लम्बी तनख्वाहें पाते थे।

एक व्याख्यान में लेनिन ने कहा—"कॉमरेडो और मजदूरो, याद रक्खो कि देश का शासन तुम स्वयम् करते हो। यदि तुम सब मिल कर देश का शासन अपने हाथों में नहीं लेते तो कोई भी तुम्हारी सहायता नहीं कर सकता। बस, सोवियट का साथ दो। उसकी सहायता करो। नीचे से काम करना तुम स्वयम् शुरू कर दो; किसी का आसरा न देखो।" उपर्युक्त घोषणा से लेनिन की अपील का जनता पर खूब असर पड़ा और जनता ने फौरन काम करना शुरू कर दिया। अस्थायी सरकार के कई मन्त्री अभी तक गिरफ्तार नहीं हुए थे। वे पुराने ढङ्ग से काम करते जा रहे थे। एक महीने तक बराबर अस्थायी सरकार के नाम पर अदालतें अपने निर्णय निकालती रहीं। परन्तु धीरे-धीरे सारी अवस्था बदल गई। 'सरकारी सिनेट' बन्द कर दी गई। कौन्सिल ऑफ स्टेट तोड़ दी गई।

निस्सन्देह पुरानी रूढ़ियों को तोड़ने में सोवियट धीरे-धीरे काम कर रहा था। पर विरोधियों की बाधा-नीति ने उसका काम सरल कर दिया था। शासन के आर्थिक भागों, जैसे—बैङ्कों, डाकघरों और कोऑपरेटिव सोसाइटियों आदि को सोवियट नष्ट नहीं करना चाहती थी। परन्तु उनकी बाधा-नीति के कारण उसे उन्हें नष्ट

कर देना पड़ा। नए-नए लोगों को शासन-कार्य चलाना पड़ा। परन्तु इन लोगों को शासन का अनुभव तो था नहीं, अतएव पहिले कार्य-सञ्चालन में अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। पर धीरे-धीरे अनुभव बदल गया और कार्य-सञ्चालन भी सुगम होता गया।

रेलवेमैन-सङ्घ की अखिल रूसी कार्यकारिणी ही ने सोवियट के मार्ग में सब से अधिक रुकावटें पैदा की थीं। उसने शुरू से ही सोवियट का जोरों से विरोध किया। उसने घोषणा की कि—"देश में इस समय कोई सरकार नहीं है; सरकार बनने के लिए जोरों से आन्दोलन अवश्य चल रहा है। 'कमीसर कौन्सिल' को (क्योंकि केवल एक पार्टी इसके साथ है) तमाम देश मान नहीं सकता और न उसकी सहायता ही कर सकता है। इसलिए एक ऐसी सरकार की स्थापना अत्यावश्यक है, जिस पर तमाम देश का विश्वास हो। रेलवे की केन्द्रीय कमिटी एक ऐसी ही सरकार की स्थापना में देश की भलाई समझती है, जिसमें सब दल के लोग—बोलशेविकों से लेकर राष्ट्रीय साम्यवादियों तक—भाग ले सकें।" इस संस्था ने बोलशेविकों को चुनौती भी दी कि "अगर पैट्रोग्रेड और मॉस्को में युद्ध बन्द नहीं होता तो १२वीं नवम्बर को १२ बजे रात से ट्रान्सपोर्ट-हड़ताल शुरू हो जावेगी। अब जो लोग सशस्त्र युद्ध जारी रखते हैं, उन्हें रेलवे की यह केन्द्रीय कमिटी लोकतन्त्र का शत्रु और देश का विश्वासघाती घोषित करती है।"

इस संस्था के लोग चाहते थे कि उनकी धमकियों में आकर बोलशेविक लोग समझौता करने को तैयार हो जावें। परन्तु उन लोगों में स्वयं ही एकता न थी। रेलवे के बहुत से मजदूर सोवियट का साथ दे रहे थे। कहीं-कहीं के रेलवे-मजदूर सोवियट को सलाह दे रहे थे कि वह इन लोगों को गिरफ्तार कर ले। रेलवे केन्द्रीय कमिटी ने साम्यवादियों से मिल कर एक मीटिङ्ग करनी चाही। उन्होंने बोलशेविकों से उस मीटिङ्ग में आने को कहा। बोलशेविक भी मीटिङ्ग में जाने को राजी हो गए, परन्तु वे चाहते थे कि हड़ताल टल जावे और बोलशेविकों को रेलवे पर अधिकार करने का समय मिल जावे। उनकी चाल काम कर गई। रेलवे केन्द्रीय कमिटी ने हड़ताल मुलतवी कर दी।

खैर, रूस की संस्थाओं की एक सभा बुलाई गई। इस सभा में आठ पार्टियाँ और नौ सङ्गठनों के प्रतिनिधि शामिल थे। यह सभा दस घण्टों तक बराबर होती रही। गरमागरम बहसें हुईं। विरोधियों ने बोलशेविकों को चुन-चुन कर गालियाँ दीं। अन्त में संयुक्त सरकार क़ायम करने का प्रस्ताव किया गया। पर कुछ लोगों ने कहा कि संयुक्त सरकार अवश्य बने, पर बोलशेविक उसमें न रक्खे जावें। ऐसे लोग चाहते थे कि बोलशेविकों को छोड़ कर बाक़ी सब पार्टियाँ मिल कर एक सरकार क़ायम करें। परन्तु दस घण्टे की बहस के बाद भी सभा कुछ निर्णय न कर सकी। हाँ, एक कमीशन अवश्य चुना गया और इसका काम था, सरकार क़ायम करने के बारे में ठीक-ठीक प्रस्ताव बनाना और

गृह-युद्ध बन्द करने का रास्ता बतलाना। परन्तु कमीशन के कार्यों का कोई ठोस परिणाम न निकला। क्योंकि सरकार में बोलशेविकों के भाग लेने का प्रश्न हल न हो सका। तीन दिन की प्रारम्भिक शान्ति का प्रश्न भी हल न हो सका, क्योंकि बोलशेविक लोग इसका विरोध कर रहे थे।

दूसरे दिन प्रातःकाल सभा की बैठक में प्रारम्भिक शान्ति के प्रश्न पर ही विचार होता रहा। सोवियट के विरोधी शान्ति के लिए बहुत उत्सुक थे। वे समझते थे कि तीन दिनों के अन्दर ही केरेन्स्की अपनी सेना लेकर वहाँ आ पहुँचेगा और कालेडिन से समझौता कर लेगा। पर बोलशेविक लोग मानते ही न थे। वे तरह-तरह की माँगें पेश करने लगे और बहसों को खूब बढ़ाना शुरू कर दिया, ताकि समय टलता जावे। घण्टों घूम-फिर कर उसी बात पर बहसें होती रहीं। शाम को फिर बैठक हुई। इसी बीच में सैनिक क्रान्तिकारी कमिटी ने गोट्ज़ (Gotz) और ऑकसेनटी (Auksentie) की गिरफ़्तारी की आज्ञा निकाल दी थी। ये जङ्कर-विद्रोह के नेता थे। जब बोलशेविक बैठक में पहुँचे, तो उनका विरोध किया गया। यद्यपि एक ही दिन पहले मोक्ष कमिटी ने सैनिक क्रान्तिकारी कमिटी के कमीसरों की गिरफ़्तारी का हुक्म निकाला था और तब किसी ने मोक्ष कमिटी की नीति का विरोध नहीं किया था।

एक मेम्बर ने जोरों से कहा कि जब तक कि गोट्ज़ और ऑकसेनटी की गिरफ़्तारी की आज्ञा रद्द न कर दी जावेगी, वह

मीटिङ्ग में किसी प्रकार का भाग न लेगा। मेनशेविक-अन्तर्राष्ट्रीयों के प्रतिनिधि मारटोव ने भी उसका समर्थन किया। सभा के बहुमत ने विशेष अदालतों और भय-नीति के विरोध में एक प्रस्ताव पास किया। फिर वही शान्ति का प्रश्न सामने आया। नवीन सरकार के बारे में अनेक योजनाएँ सामने रक्खी गईं।

तीसरे दिन रेलवेमैन अखिल रूसी केन्द्रीय कार्यकारिणी कमिटी ने एक प्रस्ताव पास किया, जिसमें कहा गया था कि "साम्यवादी पार्टियों के बीच में एकमत अत्यावश्यक समझते हुए, अखिल रूसी केन्द्रीय कार्यकारिणी कमिटी निम्न-लिखित आवश्यक शर्तें पेश करती है:—(१) सोवियट सरकार का प्रोग्राम मान लिया जावे; (२) क्रान्ति के विरोधियों के विरुद्ध लड़ाई जारी रक्खी जावे; तमाम शक्ति द्वितीय कॉङ्ग्रेस की अखिल रूसी केन्द्रीय कार्यकारिणी के हाथों में रहे और वह किसानों से मिल कर काम करे; (३) अखिल रूसी केन्द्रीय कार्यकारिणी के प्रति सरकार ज़िम्मेदार रहे, (४) जिन सङ्गठनों के प्रतिनिधि सोवियट में नहीं हैं, वे सब सङ्गठन केन्द्रीय कार्यकारिणी से अलग रक्खे जावें; (५) केन्द्रीय कार्यकारिणी में कुछ नये प्रतिनिधि बढ़ाए जावें। इनमें उन सोवियटों के प्रतिनिधि होंगे, जिनके प्रतिनिधि अभी तक नहीं हैं। व्यापारिक सङ्घ, डाक और तार-सङ्घ तथा सैनिक सङ्गठनों के भी प्रतिनिधि लिए जावें, पर ये सब प्रतिनिधि नए चुने जाने चाहिएँ। हाँ, तीन महीनों के अन्दर चुनाव हो गए हों तो दूसरी बात है।"

इसके बाद सामाजिक क्रान्तिकारियों की तरफ से एक अपील निकाली गई कि—"अपनी केन्द्रीय कार्यकारिणी की पिछली बैठक में बोलशेविकों ने एक प्रस्ताव पास किया है, जिसका आशय यह है कि सोवियट सरकार की स्थापना से ही साम्य-वादी दलों में एकमत हो सकता है। अतः सामाजिक क्रान्तिकारी पार्टी की केन्द्रीय कमिटी समझौते की बातचीत बन्द करती है और समझौते की जो चर्चा चल रही है, उससे अपने प्रतिनिधियों को वापस बुलाती है।"

इस प्रकार समझौते का प्रयत्न निष्फल रहा। टेलीफोन द्वारा प्रेज़िडेण्ट ने इसकी सूचना मॉस्को ब्यूरो को दे दी। उसने बोलशेविकों को इसके लिए दोषी ठहराया।

समझौते के लिए एक और भी प्रयत्न किया गया। एक बैठक और हुई। इस समय मेनशेविक अन्तर्राष्ट्रीयों ने सोवियट पर हमला किया। शान्ति के लिए जोरों से अपील की गई। भय-नीति को त्यागने को कहा गया; और कहा गया, धनी पत्रों पर से रुकावटें हटा ली जाएँ। पर बोलशेविक अपनी बातों पर अड़े रहे। वे रियायतें करने के लिए तैयार न थे। उनका रुख इतना कड़ा था कि बातचीत जारी रखना भी कठिन हो रहा था। फलतः वह बैठक भी समाप्त हो गई। अन्त में केन्द्रीय कार्यकारिणी ने समझौते के प्रश्न पर एक दूसरा प्रस्ताव पास किया। इस प्रस्ताव में कहा गया था कि "अखिल रूसी केन्द्रीय कार्यकारिणी समझती है कि मजदूरों, सैनिकों और किसानों की सोवियट की

प्रत्येक साम्यवादी पार्टी के प्रतिनिधि सरकार में हों। अतः केन्द्रीय कार्यकारिणी सरकार के बारे में तमाम साम्यवादी दलों से बातचीत करने का निश्चय करती है और समझौते के लिए निम्नलिखित शर्तें रखती है :—

"सरकार केन्द्रीय कार्यकारिणी कमिटी के प्रति उत्तरदायी है। केन्द्रीय कार्यकारिणी कमिटी में अब १५० प्रतिनिधि होंगे। मजदूरों और सैनिकों के सोवियटों के इन १५० प्रतिनिधियों के अलावा सूबे की और किसानों की सोवियटों के ७५ प्रतिनिधि बढ़ाए जावें। इन सबों के अलावा नीचे लिखे प्रतिनिधि और बढ़ाए जावें। स्थल-सेना और जल-सेना के ८० ; अखिल रूसी व्यापारिक सङ्गठनों के ४० ; विकजेल के १० ; डाक और तार सङ्घ के ५ और ५० डेलीगेट पेट्रोग्रेड टाउन कौन्सिल के साम्य-वादी दल से, और सरकार की कम से कम आधी जगहें बोलशेविक पार्टी को दी जावें। रूस के तमाम मजदूरों को सरकार बाक़ायदे सशस्त्र करे।"

केन्द्रीय कार्यकारिणी की बैठक में लेनिन ने प्रस्ताव किया और ट्रॉटस्की ने समर्थन किया कि धनी-पत्रों पर की गई रुकावटें हटाई न जायँ। पत्रों की स्वतन्त्रता को क्रान्ति का विरोधी बताया गया और निजी छापेखानों को जब्त करने का प्रस्ताव किया गया।

समझौते के प्रयत्न निष्फल हो रहे थे। पर लोग थके न थे। विकजेल ने फिर एक मीटिङ्ग बुलाई। बोलशेविक इस सभा में नहीं गए। इस सभा में समझौता और प्रेस के बारे में केन्द्रीय

कार्यकारिणी कमिटी के अन्तिम प्रस्ताव पर विचार किया गया। अन्तिम प्रस्ताव से समझौते का मार्ग सरल होता न दिखाई दिया। निराश होकर उन लोगों ने समझौता करने के प्रयत्नों को बन्द करने का निश्चय किया।

विकजेल-दल मॉस्को लौट आया। पेट्रोग्रेड में केवल एक छोटा सा 'ब्यूरो' रह गया था, जो सोवियट की शक्ति को कम करने का निष्फल-प्रयत्न कर रहा था। कमीसर कौन्सिल ने भी विकजेल पार्टी से सब सम्बन्ध तोड़ लिया।

परन्तु विकजेल दल भी हाथ धोकर सोवियट के पीछे पड़ा था। जनरल क्रॉसनव की सेना पेट्रोग्रेड पर धावा कर रही थी। एक ट्रेन में ८०० लाल सेना जा रही थी। विएडूसर स्टेशन पर, रेल पर काम करने वालों ने ट्रेन आगे ले जाने से नाहीं कर दी। उन्होंने विकजेल के इशारे पर ही नाहीं की थी। बड़ी कोशिश की गई, पर वे तैयार ही न होते थे। ८ बजे सवेरे से लेकर तीन बजे शाम तक वह ट्रेन वहीं खड़ी रही। अन्त में सब से नीचे दर्जे के काम करने वालों ने ट्रेन आगे बढ़ाई। सेना ही नहीं, रेड-क्रॉस की ट्रेनें भी आगे जाने से रोक दी जाती थीं। एक साहब, जो रेड-क्रॉस ट्रेन के साथ जा रहे थे, आप बीती यों लिखते हैं :—

"मुझे याद है कि सैनिक क्रान्तिकारी कमिटी की रेड-क्रॉस ट्रेन को, जिसके साथ मैं जा रहा था, २ अक्टूबर को पास के शारिटङ्ग स्टेशन पर पहुँचने में चार घण्टे लग गए थे और जब हम वहाँ पहुँचे तो स्टेशन-मास्टर ने कहा कि ट्रेन आगे नहीं जा

सकती, क्योंकि बारह बजे रात से ही हड़ताल घोषित कर दी गई है। अन्त में लाल सेना की बन्दूक ने स्टेशन मास्टर को ट्रेन आगे भेजने को मजबूर किया। मैं स्टेशन पर ही रह गया; क्योंकि ३० डिब्बे की एक ट्रेन को पेट्रोग्रेड भेजना था। यद्यपि रेलवे-ऑफिस के लोग मुझे जानते थे, पर उन्होंने ट्रेन भेजने की मेरी प्रार्थना पर ध्यान नहीं दिया। मैं स्टेशन के एक कारखाने में चला गया। जो लोग काम पर थे, उन्होंने औरों को भी इकट्ठा किया। तीस डिब्बे जोड़े गए। मरम्मत के लिए आया हुआ एक इञ्जिन जोड़ा गया। ट्रेन पेट्रोग्रेड के लिए रवाना हुई। कारखाने में काम करने वाले ट्रेन के साथ चल रहे थे।"

जब मॉस्को में युद्ध शुरू हुआ, तब एक दिन मल्लाहों का बड़ा झुण्ड एक स्टेशन पर इकट्ठा हुआ। वे लोग मॉस्को जाना चाहते थे। विकज़ेल के प्रतिनिधियों ने उनसे कहा—"हम लोग आप लोगों को आगे नहीं भेज सकते। हम लोग तटस्थ हैं और हम लोग किसी भी पक्ष की सेना को आगे नहीं भेजते।" उसी समय कारखानों में काम करने वालों का एक झुण्ड स्टेशन पर आ पहुँचा और उस झुण्ड में से किसी ने चिल्ला कर कहा—"इधर आइए, आप लोग जहाँ जाना चाहते हों, हम लोग स्वयम् आपको ले चलेंगे।" विकज़ेल का प्रतिनिधि घबड़ा उठा। वह बेचारा कर ही क्या सकता था?

इन घटनाओं से विकज़ेल तथा रेलवे के अफ़सरों की मनोवृत्ति का पता चलता है। ख़ैर इतनी ही थी, कि रेलवे के

छोटी श्रेणी के काम करने वाले सब के सब बोलशेविकों की तरफ़ थे।

६ दिसम्बर को पेट्रोग्रेड के रेलवे-कर्मचारियों के जिला सोवियट का सङ्गठन किया गया। उसने नीचे लिखा मेनिफ़ेस्टो निकाला :—

"रेलवे-कर्मचारियों की अखिल रूसी सङ्घ, जिसे 'विकज़ेल' कहते हैं, पहिले ही से समझौता-नीति के पक्ष में थी। केरेन्स्की की सरकार की भी यही नीति थी। इस सङ्घ में वे लोग हैं, जो रेलवे के आम कर्मचारियों से बहुत दूर हैं। इसीलिए यह सङ्घ रेलवे-कर्मचारियों का प्रतिनिधि नहीं है और न उनकी माँगों के लिए इसने कोई उद्योग ही किया है। सदा, और विशेषतः जब-जब मज़दूरों, ज़मींदारों और पूँजीपतियों में लड़ाई हुई है, यह मज़दूरों और किसानों के विरुद्ध लड़ा है। जब मज़दूर, सैनिक और किसान, ज़मींदारों, पूँजीपतियों और उनके रक्षकों की ताक़त तोड़ने में कोई कसर उठा न रख रहे थे, तब विकज़ेल ने आम हड़ताल की घोषणा की थी। विकज़ेल का लक्ष्य सदा गोल रहा है। और इसने कभी कुछ नहीं किया और न इसने हमारी स्थिति को ही पहले से अच्छा बनाया है। यह अब मन्त्रियों के स्थानों के लिए सौदा कर रही है, पर कॉमरेडो, ऐसे लोगों में हमारा अब क़तई विश्वास नहीं है। हम लोगों को विकज़ेल की कोई आवश्यकता नहीं है, हम लोगों को आवश्यकता है, एक कॉङ्गरेस की। रेलवे-कर्मचारियों की अखिल रूसी एक

कमिटी की। इस कॉङ्ग्रेस को बुलाने में विकजेल सदैव कठिनाइयाँ पैदा कर रही है......।"

मेनिफ़ेस्टो में यह भी कहा गया था कि कॉङ्ग्रेस २३ वीं दिसम्बर को बुलाई जावे। सोवियट सरकार बराबर तीन महीने तक विकजेल से लड़ती रही। अन्त में ३१वीं दिसम्बर को कॉङ्ग्रेस की बैठक बुलाई गई। यह कॉङ्ग्रेस पूर्णतया बोलशेविकों के अधिकार में थी। पर इसकी बैठक ६ जनवरी के पहले शुरू न हो सकी। सब के सब बेकार मन्त्री उस कॉङ्ग्रेस में आए थे। विधान-विधायिका सभा का प्रश्न जोरों से आगे लाया गया। कॉङ्ग्रेस में दो दल हो गए। दोनों दलों की शक्ति क़रीब-क़रीब बराबर थी। २१३ वोट विधान-विधायिका सभा के लिए थे और २६१ वोट थे सोवियट सरकार के लिए। इस स्थिति के पैदा हो जाने पर गरम दल कॉङ्ग्रेस से अलग हो गया। इस गरम दल में रेलवे के छोटे कर्मचारी अधिक थे। ये लोग सोवियट सरकार के पक्ष में थे। इन लोगों ने अलग रेलवे-कर्मचारियों की विशेष कॉङ्ग्रेस बुलाई। इसी विशेष कॉङ्ग्रेस ने 'विकजेडार' (रेलवे-कर्मचारियों की अखिल रूसी केन्द्रीय कार्यकारिणी कमिटी) को चुना। इस कार्यकारिणी कमिटी में थे २४ बोलशेविक, १२ लेफ़्ट सामाजिक क्रान्तिकारी और तीन मेनशेविक अन्तर्राष्ट्रीय। यानी कुल मिला कर ३९ मेम्बर थे।

सोवियट के दो महत्त्वपूर्ण कार्य



धान-विधायिनी सभा का प्रश्न सोवियट शासन के सम्मुख एक प्रधान प्रश्न था। पाठकों को स्मरण होगा कि जनता को पुनः-पुनः आश्वासन दिया गया था कि विधान-विधायिनी सभा शीघ्र बुलाई जावेगी। सोवियट शासन की प्रारम्भिक कठिनाइयाँ दूर होते ही सभा की प्रतीक्षा की जाने लगी। पर उपर्युक्त सभा के बारे में बोलशेविकों के विचार अब बदल गये थे। वे अब विधान-विधायिनी सभा को व्यर्थ समझते थे और उसे बुला कर समय नष्ट नहीं करना चाहते थे। बोलशेविकों के नेता लेनिन ने सुप्रसिद्ध 'प्रवदा' पत्र में इसी प्रश्न पर अपने विचार प्रगट किए थे। अपने लेख में लेनिन ने लिखा था कि विधान-विधायिनी सभा की अब कोई आवश्यकता नहीं है। क्योंकि अब तो जनता स्वयं शासन कर रही थी। सोवियट-शासन जनता का शासन था। किसी प्रश्न पर सोवियट की राय ही अन्तिम राय थी। अतः सोवियट के सामने विधान-विधायिनी सभा की कोई हस्ती न थी। एक बात और थी। विधान-विधायिनी सभा के मेम्बर पहिले से निश्चित हो चुके थे। जिस

समय मेम्बरों की सूची बनी थी, उस समय नरम दल का बोलबाला था। फलतः उपर्युक्त सूची में नरम दल के लोगों की भरमार थी। उस समय जनता में न तो इतनी जागृति ही थी और न कोई उसके सामने दूसरा चारा ही था। जब जनता निस्सहाय थी, उस समय उसने उन मेम्बरों को स्वीकार कर लिया था। पर अब जनता वह पुरानी जनता न रह गई थी। इतने दिनों में रूस में जमीन-आसमान का अन्तर हो गया था। जनता की मनोवृत्ति अब बदल गई थी। वह बहुत आगे बढ़ चुकी थी। अतः भला दक्रियानूसी विधान-विधायिनी सभा जनता के भाग्य का निर्णय कैसे कर सकती थी?

पर देश में अब भी एक ऐसा दल था, जो विधान-विधायिनी सभा को बुलाना चाहता था। इस दल में नरम विचार के लोग शामिल थे। उनका कहना था कि विधान-विधायिनी सभा ही जनता की सच्ची प्रतिनिधि सभा है। सभा की अवहेलना करके बोलशेविक दल देश पर अपना सिक्का जमाना चाहता था। परन्तु किसी भी एक दल को देश का भाग्य-विधाता बनाना वे पसन्द नहीं करते थे। इसीलिए वे सभा बुलाने को बहुत उत्सुक थे।

नरम दल की एक सभा हो रही थी। सभा में देश की वर्तमान स्थिति पर विचार हो रहा था। एक सदस्य ने कहा—"बोलशेविकों के बिना ही सभा आरम्भ कर दी जावे। हम अधिक आसरा नहीं देख सकते। हमें उनसे आगे बढ़ना

चाहिए।" दूसरे ने कहा—"सब प्रयत्न निष्फल होंगे। वे हमारी बातें सुनते ही नहीं। वे हँसते हैं और कहते हैं, जब लेनिन आज्ञा देंगे, तभी हम सभा आरम्भ करेंगे। तब तक चुपचाप बैठे रहो।" "बड़े शर्म की बात है। कुछ न कुछ करना ही चाहिए।" उसने फिर कहा। उसे उत्तर मिला, "पर हम कर ही क्या सकते हैं?"

येन-केन-प्रकारेण एक दिन विधान-विधायिनी सभा की बैठक प्रारम्भ हुई। लेनिन सभा में एक कोने में चुपचाप बैठा था। सब से पहिले ज़ेरेटली (Tseretelli) बोलने के लिए खड़ा हुआ। उसके उठते ही सभा में शोर-गुल मच गया। और हथियार भी चमकने लगे। इसके बाद एक से एक सुन्दर भाषण हुए। पर कोई भी भाषण ध्यानपूर्वक नहीं सुना गया। सभा का बहुमत नरम विचारों का था। अतः सभा ने जनता के मूल अधिकारों की घोषणा को सभा के कार्य-क्रम में लेने से इन्कार कर दिया। सभा की उपर्युक्त मनोवृत्ति ने स्पष्ट कर दिया कि बोलशेविकों के लिए तथा उनके विचार के अन्य लोगों के लिए, सभा में कोई स्थान नहीं है। जिन लोगों का सभा में बहुमत था, वे सभा के बाहर भी बोलशेविकों के विरुद्ध प्रचार कर रहे थे। उनके पत्र जनता को सोवियट के विरुद्ध भड़का रहे थे। विरोधियों की इस मनोवृत्ति को देख कर बोलशेविक अपने अनुयायियों सहित विधान-विधायिनी सभा से उठ कर चले गए। बोलशेविकों की केन्द्रीय कार्यकारिणी कमिटी ने अपनी एक बैठक में निश्चय किया कि विधान-विधायिनी सभा तोड़ दी जावे। फलतः बोलशेविकों के जाते ही सभा में गड़बड़ी

मच गई। लोग दर्शकों की गैलरी से आ-आ कर बीच सभा में बैठने लगे। प्रतिनिधियों के स्थानों पर बैठ कर उन्होंने हल्ला मचाना प्रारम्भ कर दिया। वे किसी की परवा ही न करते थे। अनेक प्रयत्न करने पर भी सभा में शान्ति स्थापित न की जा सकी। अन्त में स्थिति हाथ से बाहर होते देख, सभापति तथा अन्यान्य सदस्य सभा से उठ कर चल दिए।

दूसरे दिन नगर के अनेक स्थानों पर सभाएँ हुईं। फैक्टरियों, बैरकों और वॉर्डों में सभाओं की धूम मच गई। बोलशेविक नेता इन सभाओं में भाषण देते थे। जनता की अपार भीड़ अपने नेताओं के भाषण ध्यान से सुनती थी। विरोधियों का कहीं पता भी न था। इन सभाओं में विधान-विधायिनी सभा की निन्दा की गई। विधान-विधायिनी सभा के पक्ष में किसी ने एक शब्द तक न कहा।

इस प्रकार विधान-विधायिनी सभा का अन्त हुआ। जिस सभा की चर्चा इतने दिनों से हो रही थी, जिस सभा की बाट उत्सुकता से देखी जा रही थी, बोलशेविकों के विरोध ने उसका अन्त कर दिया।

विधान-विधायिनी सभा का प्रश्न तो सोवियट सरकार ने बड़ी सरलता से हल कर डाला। पर अभी एक और प्रश्न था, जिसका उसे मुक़ाबला करना था और वह था शान्ति का प्रश्न। सोवियट सरकार युद्ध का अन्त कर देना चाहती थी। वह चाहती थी कि शान्ति स्थापित हो जावे। पर युद्ध के लोलुप यूरोपीय-राष्ट्र

रूस की शान्ति-चर्चा पसन्द नहीं करते थे। उनकी रक्त-पिपासा अभी शान्त नहीं हुई थी। मित्र-राष्ट्र समझते थे कि क्रान्ति के पश्चात् रूस उनके साथ कन्धे से कन्धा मिला कर युद्ध जीतने का प्रयत्न करेगा। इसीलिए उन्होंने क्रान्ति का विरोध नहीं किया था। अब, जब उन्होंने देखा कि बोलशेविक युद्ध का सिद्धान्ततः विरोध कर रहे हैं तब वे रूस का विरोध करने लगे। उन्होंने रूस का आर्थिक तथा राजनीतिक बहिष्कार कर दिया। रूस से सारे राजनीतिक सम्बन्ध तोड़ दिए गए। उन लोगों ने अपने-अपने दूत रूस से वापिस बुला लिए। रूस के साथ व्यापार-वाणिज्य भी बन्द हो गया। वे सोवियट रूस को पनपने नहीं देना चाहते थे और उसके मार्ग में रोड़े अटकाना चाहते थे। ज़ार ने उन राष्ट्रों के साथ कुछ सन्धियाँ की थीं। उन सन्धियों में अन्य बातों के साथ-साथ युद्ध का समर्थन भी किया गया था। उन राष्ट्रों ने सोवियट रूस से तक़ाज़ा किया कि वह ज़ार की सन्धियों को कार्यान्वित करे। परन्तु रूस ने ज़ार की सन्धियों को मानने से एकदम इन्कार कर दिया। उसने अन्य राष्ट्रों को यह भी बता दिया कि वह साम्राज्य-विस्तार का विरोधी है। परन्तु कोई भी राष्ट्र रूस की शान्ति-चर्चा सुनने को तैयार न था। हाँ, जर्मनी अवश्य रूस के साथ सन्धि-चर्चा करने को राज़ी मालूम होता था। फलतः रूस ने जर्मनी से एक पृथक सन्धि करनी चाही।

ब्रेस्ट लिटोवस्क (Brest-Litovsk) नामक स्थान पर बराबर तीन महीने तक जर्मनी के साथ सन्धि-चर्चा होती रही।

दोनों तरफ़ से खूब बहसें हुईं। खूब बाल की खाल निकाली गई। पर परिणाम कुछ भी नहीं निकला। कभी-कभी अवश्य सफलता के कुछ चिह्न दिखाई पड़ जाते थे, पर जर्मनी की शर्तें इतनी कड़ी थीं, कि उन्हें मानना रूस के लिए एकदम असम्भव था। इसलिए सन्धि-पत्र पर हस्ताक्षर करना ट्रॉटस्की के लिए अत्यन्त कठिन हो गया। इस स्थिति से घबरा कर ट्रॉटस्की ने कहा था "हम लोग सन्धि पर हस्ताक्षर नहीं करेंगे; पर हम लोग युद्ध भी नहीं करेंगे। हम अपनी सेना लौटा लेंगे और जर्मनी और ऑस्ट्रिया-हङ्गरी के मजदूरों तथा किसानों से क्रान्ति करने की अपील करेंगे।" ट्रॉटस्की का यह कथन भावी जर्मनी-क्रान्ति के लिए एक खुल्लमखुल्ला न्योता था। "न युद्ध, न शान्ति।" यह घोषणा ट्रॉटस्की ने ब्रेस्ट पहुँच कर की। इस घोषणा ने रूस के शत्रुओं को चौंका दिया। क्योंकि शत्रु इसके लिए तैयार न था। अस्तु जर्मनी ने पुनः युद्ध छेड़ दिया। उसकी सेना को किसी ने नहीं रोका। रूस ने अपनी सेना वहाँ से पहिले ही हटा ली थी। जर्मन-सेना एक के बाद एक रूसी नगरों पर अधिकार करती हुई आगे बढ़ने लगी। बहुत शीघ्र वह पेट्रोग्रेड के समीप पहुँच गई परन्तु न कहीं युद्ध हुआ और न किसी ने उसका मार्ग रोका।

परन्तु इस भयावह परिस्थिति के कारण रूस के कम्युनिस्ट-दल में भीषण मतभेद पैदा हो गया। शान्ति के प्रश्न पर दो दल हो गए। एक दल तो उन लोगों का था, जो 'न युद्ध न शान्ति' की नीति को मानता था। इस दल का मुखिया था, ट्रॉटस्की।

इस दल ने अपनी सारी आशाओं का केन्द्र जर्मन-क्रान्ति को ही बना रक्खा था। इसका कहना था कि जर्मन-सेना का आगे बढ़ते जाना जर्मन-क्रान्ति के लिए एक शुभ लक्षण है। क्योंकि जब वह आगे बढ़ती जावेगी तो रूसी किसान और मजदूर उसके साथ गोरिला-युद्ध (Guerrila War) आरम्भ कर देंगे। इससे पहले जर्मन-सेना में क्रान्ति फैलेगी और फिर जर्मन-जाति में। यह दल जर्मन-सेना के लिए मॉस्को और पेट्रोग्रेड छोड़ने तक को तैयार था। उसकी धारणा थी कि इस चाल से हम क्रान्ति को शीघ्र बुला लेंगे। इस दल के विचार में जर्मनी के साथ सन्धि करना संसार की क्रान्तियों के साथ दगा करना था।

दूसरा दल लेनिन का था और वह समय चाहता था। परन्तु लेनिन की व्यक्तिगत राय थी कि जर्मनी के साथ सन्धि कर ली जावे। क्योंकि सन्धि में देर होने से रूस को हानि उठानी पड़ेगी और फिर जर्मनी की शर्तें और भी कड़ी हो जावेंगी, परन्तु लेनिन अब तक चुप था। क्योंकि वह अपने दल में फूट नहीं डालना चाहता था। पर अब वह खामोश रहना घातक समझता था।

सन् १९१८ की २२वीं फरवरी को बोलशेविकों की केन्द्रीय कमिटी की बैठक हुई। इस बैठक में सात सभासदों ने सन्धि के पक्ष में राय दी। इन लोगों का कहना था कि जर्मनी की शर्तें फौरन मान ली जावें। चार सदस्य सन्धि के विरुद्ध थे। इसलिए वे तटस्थ रहे। क्योंकि वे लेनिन का विरोध नहीं करना चाहते थे। स्वयम् ट्रॉट्स्की भी तटस्थ था।

अन्त में बेतार के तार द्वारा जर्मनी को सूचित किया गया— ब्रेस्ट की सन्धि पर हस्ताक्षर करने के लिए रूस तैयार है। दो दिन पश्चात् जर्मनी का उत्तर आया। परन्तु उत्तर क्या था, अल्टीमेटम (चुनौती) था। सन्धि की शर्तें और भी कड़ी बना दी गई थीं और इन शर्तों को स्वीकार करने के लिए कुल ४८ घण्टे का समय दिया गया था। खैर, इस अल्टीमेटम पर विचार करने के लिए उपर्युक्त केन्द्रीय कमिटी और सोवियट की एक संयुक्त सभा हुई। इस सभा में जोरों से विरोध किया गया। सन्धि के विरोधियों ने कहा—"हम युद्ध नहीं चाहते, शान्ति चाहते हैं। परन्तु बेइज्जती के साथ नहीं, और न देशद्रोही बन कर क्रान्ति की रक्षा के लिए लड़ने में देश की तमाम जनता हमारा साथ देगी।"

इस सभा में लेनिन ने एक अत्यन्त सुन्दर तथा प्रभावशाली भाषण दिया था। उसने कहा, "हाँ, हम निस्सहाय हैं और जर्मन साम्राज्यवाद ने हम पर विजय प्राप्त की है। उसने हमारी छाती पर चढ़ कर हमारे सिर पर तमञ्चा तान रक्खा है और पश्चिम में ऐसी क्रान्ति कहाँ है जो जर्मन साम्राज्यवाद के कठिन चङ्गुल से हमें छुड़ावे। इसी क्षण आप हमें एक लाख सैनिकों की एक दृढ़ सेना दीजिए जो शत्रु को देख कर कम्पित न हो, तो मैं सन्धि पर हस्ताक्षर नहीं करूँगा। अभी तक मैंने आपको बाधा नहीं पहुँचाई है। मैं चुपचाप अलग हो गया था। मैंने आपको बातचीत करने के लिए पूरे दो महीने दे दिए थे। क्या आपने एक विशाल सेना

खड़ी कर ली है? क्या आपने बातें बनाने और हल्ला मचाने के अलावा और भी कुछ किया है?

"अगर हम मॉस्को और पेट्रोग्रेड छोड़ कर अरल प्रदेश चले जावें तो हमें जर्मनी से केवल दो-तीन सप्ताह के लिए छुट्टी मिलेगी। परन्तु क्या आप जिम्मेदारी लेते हैं, कि इन दो सप्ताहों में संसार में क्रान्ति हो जावेगी। मैं मानता हूँ कि यह सन्धि अत्यन्त अपमानजनक है। पर यदि आप आज सन्धि पर हस्ताक्षर नहीं करते तो एक महीने पश्चात् जिस सन्धि पर आपको हस्ताक्षर करने पड़ेंगे, उसकी शर्तें इन शर्तों की अपेक्षा सौ गुनी बदतर होंगी।

"यदि आप संसार की क्रान्ति को सुरक्षित रखना चाहते हैं और यदि आप सोवियट प्रजातन्त्र को चिरञ्जीवी रखना चाहते हैं तो आपको इस अपमानकारी सन्धि-पत्र पर अवश्य ही हस्ताक्षर कर देना चाहिए।

"आप समझते हैं कि क्रान्ति के मार्ग में गुलाब के फूल बिछे हैं और हम लोग सर्वदा झण्डा हिलाते हुए और अन्तर्राष्ट्रीय नारे लगाते हुए विजयी होते चले जावेंगे। तब तो क्रान्ति होना सरल है; परन्तु क्रान्ति कोई खेल-तमाशा नहीं है, क्रान्ति के मार्ग में काँटे बिछे हैं। आपको घुटने तक कीचड़ में चलना होगा। आवश्यकता पड़ने पर गलीज के ढेर पर पेट के बल रेंगना पड़ेगा। तब इस युद्ध में हमारी विजय होगी।"

बोलशेविकों की निजी सभा में भी सन्धि की शर्तों के सम्बन्ध में अनेक प्रश्न किए गए। सन्धि के विरोधियों ने लेनिन पर प्रश्नों की झड़ी लगा दी।

स्टेकलोव (Steklov) ने लेनिन से पूछा—"कॉमरेड लेनिन, आप सन्धि की उस शर्त को किस प्रकार पूरी करेंगे, जिसमें कहा गया है कि उकरेन प्रान्त से रूसी सेनाएँ हटा ली जावें। क्या हम निःशस्त्र प्रान्त को लुटेरे जर्मनों के हाथों में सौंप देंगे ?"

लेनिन ने उत्तर दिया—"सन्धि के अनुसार हम अपनी रूसी सेनाएँ उकरेन प्रान्त के हटा लेगें। शैतान को यह पता ही नहीं है कि कौन सी सेनाएँ उकरेन की हैं और कौन सी रूस की। सम्भव है, कि वहाँ रूसी सेनाएँ हों ही नहीं, सभी सेनाएँ उकरेन की हों और हमें वास्तव में कुछ हटाना ही न पड़े। (हँसी)।

"क्या हम फिनलैण्ड के साथियों की सहायता न करें और उन्हें प्रबल शत्रु से अकेले युद्ध करने दें ?

"हम उन्हें सहायता नहीं दे सकते। पर जरा सोचिए तो, कल क्या हुआ था ! रेल के कुछ डब्बे, जिनमें गोला-बारूद आदि सामान भरा था और जो दक्षिण भेजे जाने को थे, रेलवे कर्मचारियों की 'लापरवाही' से फिनलैण्ड भेज दिए गए। ऐसी 'लापरवाही' सदा हो सकती है। जहाँ तक नाविकों का सम्बन्ध है, हमारे फिनलैण्ड के साथियों ने हम से स्वयं उन्हें वापस बुला लेने को कहा है; क्योंकि वे नाविक इतने पतित हैं कि अपने शस्त्र तक शत्रुओं को बेच देते हैं।

"पर हमें साम्राज्यवाद के विरुद्ध सारा आन्दोलन बन्द कर देना होगा और विश्वव्यापी क्रान्ति की तैयारी रोक देनी होगी ?

"मुझे पता न था कि आज राजनीति के बच्चों से पाला पड़ा है। मैं तो समझता था कि हम सब के सब पुराने खुर्राट हैं। आप ज़ार के समय उसकी आज्ञा के विरुद्ध ज़ोरों से आन्दोलन कैसे करते थे ? जर्मनी का क़ैसर रूस के निकोलस से अधिक होशियार नहीं है।

"पर हमारी पार्टी के पत्र साम्राज्यवाद और क़ैसर के विरुद्ध कुछ नहीं छाप सकते। क्योंकि ऐसा करना ब्रेस्ट-सन्धि के विपरीत होगा।

"केन्द्रीय कार्यकारिणी कमिटी सन्धि पर हस्ताक्षर कर रही है। पर वह पार्टी की केन्द्रीय कमिटी नहीं है। केन्द्रीय कमिटी के बर्ताव के लिए सोवियट सरकार उत्तरदायी नहीं है।"

इस प्रकार लेनिन ने सारी शङ्काओं का समाधान किया। लोगों का भय जाता रहा। वे समझ गए कि वे सन्धि को जितनी बुरी समझते थे, वास्तव में वह उतनी बुरी नहीं है। उन्हें विश्वास हो गया कि लेनिन-ऐसे नेताओं के हाथों में क्रान्ति सदा सुरक्षित है। फलतः बोलशेविकों ने अपनी सभा में निश्चय किया कि वे सन्धि का समर्थन करेंगे। इस पार्टी के जिन मेम्बरों की व्यक्तिगत राय सन्धि के विपरीत थी, उनसे भी साधारण सभा में सन्धि के पक्ष में राय देने को कहा गया। इस प्रश्न पर किसी को भी व्यक्तिगत स्वतन्त्रता नहीं दी गई।

अन्त में साधारण सभा हुई। कुछ लोगों ने वहाँ भी सन्धि का विरोध किया। पर बहुमत से सन्धि का प्रस्ताव पास हो गया। कम्यूनिस्ट दल के प्रत्येक मेम्बर ने प्रस्ताव के पक्ष में वोट दिया। विरोधियों ने कम्यूनिस्टों को देशद्रोही तथा जर्मन-जासूस आदि विशेषणों से याद किया। उनका अब भी विश्वास था कि सन्धि करके वे लोग रूस को जर्मन के हाथ बेच रहे हैं। अस्तु।

दूसरे दिन प्रातःकाल बेतार के तार द्वारा बर्लिन, वियना, सोफिया और कुस्तुन्तुनिया को सूचना दी गई कि रूस ब्रेस्ट-सन्धि स्वीकार करने को तैयार है। उसी दिन सोवियट डेलीगेशन ब्रेस्ट के लिए रवाना हो गया। सोकोनिकोव उसका मुखिया था और जाफे राजनीतिक सलाहकार। जब वे लोग ब्रेस्ट पहुँचे, तो उन्हें पता चला कि अल्टीमेटम और भी कड़ा बना दिया गया है, क्योंकि टर्की ने अपनी कुछ और नई माँगें बढ़ा दी थीं।

सोवियट डेलीगेशन ने इन माँगों का घोर विरोध किया। उन्होंने कहा, कि हम हस्ताक्षर करने को तैयार हैं, पर हम चाहते हैं कि संसार यह देख ले, कि साम्राज्यवाद हम पर कितना अत्याचार कर रहा है।

तीसरी मार्च को दोनों तरफ से सन्धि पर हस्ताक्षर हो गए। कम्यूनिस्ट पार्टी की सातवीं कॉङ्ग्रेस के सामने उपरोक्त सन्धि को स्वीकार करने का प्रश्न आया। ५० वोट स्वीकार करने के

पक्ष में थे और १२ वोट विरुद्ध। फलतः सन्धि स्वीकार कर ली गई।

१४ वीं मार्च को इसी प्रश्न पर विचार करने के लिए सोवियट कॉङ्ग्रेस की विशेष बैठक हुई। बोलशेविक पार्टी के अलावा शेष अन्य पार्टियों ने सन्धि को स्वीकार न करने को कहा, फिर भी बहुमत से सन्धि स्वीकार कर ली गई।

जर्मन फेडरल कौन्सिल ने भी १७वीं मार्च को सन्धि स्वीकार कर ली। जर्मन पार्लामेण्ट ने भी सर्वसम्मति से सन्धि को स्वीकार कर लिया। पर जर्मनी में भी एक दल सन्धि का विरोधी था और वह था स्वतन्त्र साम्यवादी दल। लेनिन का विश्वास था कि बहुत शीघ्र जर्मनी में क्रान्ति होगी।

इसीलिए उसने सन्धि करने पर जोर दिया था। वह समझता था कि क्रान्ति के फल-स्वरूप जर्मनी का शासन जनता के हाथ में आ जावेगा और फिर जर्मनी की जनता स्वयं सन्धि की कड़ी शर्तों को हटा कर रूस के साथ रिआयत करेगी। इस तरह रूस का काम भी निकल जावेगा और हानि भी न उठानी पड़ेगी। साँप मर जावेगा और लाठी भी न टूटेगी। परन्तु लेनिन के विरोधी उसकी इस दूरदर्शिता पर विश्वास न करते थे।

परन्तु लेनिन कितना दूरदर्शी था और वह हवा का रुख कितना पहचानता था, इसका पता इसी से चलता है कि सचमुच कुछ महीनों के अन्दर ही जर्मनी में भीषण क्रान्ति हो गई।

९ नवम्बर को इस क्रान्ति का श्रीगणेश हुआ। देखते देखते क़ैसर-शाही का तख़्ता उलट दिया गया। जर्मनी की जनता जर्मनी की भाग्य-विधाता बन गई और ब्रेस्ट की सन्धि रद्दी की टोकरी में फेंक दी गई। लेनिन के विरोधी भी उसकी दूरदर्शिता के क़ायल हो गए और उसकी बुद्धि की प्रशंसा करने लगे।

सोवियट रूस और एशिया के राष्ट्र



न १९१७ की क्रान्ति ने रूस की कायापलट कर दी। अब तक तो रूस संसार के दूसरे बड़े राष्ट्रों की भाँति साम्राज्यवाद का पोषक था। पर क्रान्ति के पश्चात् वह उसका विरोधी बन गया।

रूस की क्रान्ति को साम्राज्यवादी यूरोप पसन्द न करता था। १९१७ में जब बोलशेविकों ने रूस का शासन अपने हाथ में ले लिया, तब यूरोप के राष्ट्र जामे से बाहर हो गए। उन्होंने बोलशेविकों को पदच्युत करने का भरसक प्रयत्न किया। रूस के विरुद्ध प्रचार किया गया। उस पर आक्रमण किया गया तथा रूसियों को बोलशेविकों के खिलाफ़ क्रान्ति करने को उकसाया गया।

१९१८ में इन राष्ट्रों ने रूस को चारों ओर से घेर लिया तथा उसकी सीमा के भीतर कोई भी आवश्यक वस्तु न जाने दी—औषधियाँ तथा बच्चों के लिए दूध तक रूस में न जा सकता था। वारसाइल की सन्धि (Treaty of Versailles) द्वारा बाल्टिक सागर से काले सागर तक रूस की सीमा पर छोटे-छोटे राष्ट्र बनाए गए, ताकि बोलशेविक रूस से बाहर न जा सकें। मित्र-राष्ट्रों ने सोवियट रूस पर हमला भी किया तथा डेनीकिन (Denikin),

कोलचक तथा रैङ्गिल आदि बोलशेविकों के विरुद्ध काम करने वालों तथा पोलों को सहायता दी, ताकि वे लोग बोलशेविकों को दबा दें। संसार भर में रूस के ख़िलाफ़ जोरों से प्रचार किया गया।

मित्र राष्ट्रों ने ज़ार को युद्ध का सामान देने के लिए आरचैंजल मरमन्स्क तथा व्लाडीवास्टक आदि स्थानों में गोदाम खोल रक्खे थे। उन्होंने यह सारा सामान रूस की सरकार को बतौर क़र्ज़ के दिया था। अब चूँकि सोवियट रूस ने इन क़र्ज़ों को अदा करने से इन्कार कर दिया था, अतएव मित्र-राष्ट्र वह सारा सामान अपने अधिकार में लाना चाहते थे। इङ्गलैण्ड, फ्रान्स, अमेरिका तथा जापान ने उन गोदामों की रक्षा करने के लिए अपनी-अपनी सेनाएँ उपर्युक्त स्थानों पर भेजीं। ज़ार के समय के ज़मींदारों तथा पूँजीपतियों को प्रत्येक स्थान पर सहायता दी गई। जहाँ-जहाँ मित्र-राष्ट्रों को विजय मिली वहाँ-वहाँ पुरानी सरकार की स्थापना की गई।

पर रूस की जनता ने मित्र-राष्ट्रों के कार्यों का घोर विरोध किया तथा उनकी सेनाओं के सिपाहियों ने विद्रोह किया। ऐसी हालत देख कर इन राष्ट्रों ने, १९१९ के मई और जून में एडमिरल कोलचक की, जो साइबेरिया से पश्चिम की ओर बढ़ रहा था, सहायता करने का निश्चय किया। उसी समय जनरल डेनिकिन कोलचक से मिल कर काम करने के लिए कॉकेशस से उत्तर की ओर बढ़ा। मित्र-राष्ट्रों से भरपूर सहायता मिलने के

कारण इन सेनापतियों को विजय प्राप्त हुई। पर उनकी यह विजय क्षणिक ही थी।

सन् १९१८ से १९२२ तक के चार वर्ष सोवियट रूस के लिए परीक्षा के समय थे। इन वर्षों में रूस ने बड़े कष्ट उठाए।

पश्चिमीय राष्ट्रों से इस तरह बहिष्कृत तथा तिरस्कृत होकर सोवियट रूस ने अपना ध्यान पूर्वीय राष्ट्रों की ओर दिया। पूर्वीय राष्ट्रों की हालत भी इस समय ऐसी थी कि रूस का कार्य बड़ा सरल हो गया। एशिया के करोड़ों मनुष्य साम्राज्यवाद के उत्पातों से ऊब रहे थे। भारतवर्ष, चीन, टर्की तथा ईरान में साम्राज्यवाद के विरुद्ध आवाजें उठ रही थीं।

सोवियट रूस ने पूर्वीय राष्ट्रों का सहयोग प्राप्त करने का प्रयत्न किया। तथा दोस्ती का हाथ बढ़ाया। उसने निम्नलिखित चार सिद्धान्त पूर्वीय राष्ट्रों के सामने रक्खे :—

(१) जार-कालिक के साम्राज्यवाद का अन्त जार के साथ ही हो गया है और अब रूस साम्राज्यवाद का विरोधी है।

(२) रूस के अन्दर जितनी अल्पसंख्यक जातियाँ हैं उन्हें स्वतन्त्रता दी जावेगी।

(३) अफ़गानिस्तान तथा ईरान आदि राष्ट्रों की स्वतन्त्रता रूस को मान्य होगी तथा वह उनकी रक्षा करेगा।

(४) एशिया तथा पूर्वीय यूरोप के छोटे-छोटे स्वतन्त्र राष्ट्रों की रक्षा का केवल एक ही उपाय है और वह यह है कि सब मिल कर एक स्वर से पश्चिमीय साम्राज्यवाद का विरोध करें।

रूस इन सिद्धान्तों की घोषणा करके ही न रह गया। उसने इन्हें कार्य में भी परिणत कर दिखाया। टर्की, अफ़ग़ानिस्तान तथा ईरान आदि से इन्हीं सिद्धान्तों के अनुसार नई सन्धि हुई। रूस की एशिया-सम्बन्धी नीति की मुख्य-मुख्य बातें इस प्रकार थीं :—

(१) टर्की, ईरान और अफ़ग़ानिस्तान से मैत्री करना तथा मिश्र और भारतवर्ष को एक दूसरे से अलग करके अङ्गरेज़ी साम्राज्य को दो टुकड़े में विभाजित कर देना।

(२) चीन तथा सुदूर-पूर्व के उन दूसरे देशों को, जो पश्चिमीय साम्राज्यवाद के शिकार बने थे, अपनी ओर मिलाना।

(३) जापान को आर्थिक सुविधाएँ देकर उससे मित्रता करना।

उपर्युक्त ध्येय को प्राप्त करने के लिए रूस ने पूर्वीय राष्ट्रों की कई कॉङ्ग्रेसें बुलाईं। सब से पहली कॉङ्ग्रेस बाकू में हुई थी। इस कॉङ्ग्रेस में भाषण देते हुए पूर्वीय राष्ट्रों का लक्ष्य करके जिनोवीव (Zenoviev) ने कहा था :—

"अब पहले-पहल पूर्वीय राष्ट्रों की कॉङ्ग्रेस में सम्मिलित होने के बाद आप लोगों को चाहिए कि इन लुटेरों—इङ्गलैण्ड और फ़्रान्स के पूँजीपतियों—के विरुद्ध धार्मिक युद्ध की घोषणा कर दें। अब समय आ गया है कि समस्त संसार के मजदूरों और किसानों को जगा दिया जाय।"

अपने व्याख्यान के अन्त में जिनोवीव ने कहा था—"कम्यूनिस्ट इण्टरनेशनल पूर्वीय राष्ट्रों को लक्ष्य करके कहता है,

भाइयों, सब से पहले हम तुम्हें ब्रिटिश साम्राज्यवाद के विरुद्ध धार्मिक युद्ध के लिए आह्वान करते हैं।"

१९२२ की २१ वीं जनवरी को चीन, कोरिया, जापान, डच तथा ईस्ट-इण्डीज आदि देशों के प्रतिनिधियों की सभा मॉस्को में हुई थी। इन्होंने अपना एक मेनिफ़ेस्टो निकाल कर कहा था कि "हम लोग जिन्दा रहना चाहते हैं और जिन वस्तुओं पर हमारा हक़ है, उन्हें हम बलपूर्वक ले लेंगे। क्योंकि हमारी संख्या अधिक है। हम लोग करोड़ों हैं। हमारी एकता ही हमारा बल है। जापानी, अमेरिकन, अङ्गरेज, फ्रान्सीसी तथा संसार के अन्यान्य लुटेरों से हम अन्त तक युद्ध करेंगे। चीन, कोरिया, प्रशान्त महासागर के द्वीपों, इण्डोचीन तथा डच-इण्डीज से उन्हें निकाल बाहर कर दो। सुदूर पूर्व से इनका पैर उखाड़ दो।"

प्रत्येक कॉङ्ग्रेस में कम्यूनिस्ट इण्टरनेशनल ने पश्चिमीय साम्राज्यवाद के विरुद्ध पूर्वीय एकता की घोषणा की।

१९२१ में सोवियट यूनियन ने ईरान, अफ़गानिस्तान, बोखारा तथा टर्की से सन्धियाँ कीं। पहिली सन्धि ईरान से हुई। इस सन्धि की पहिली धारा में ज़ार के समय की की हुई, उन तमाम सन्धियों को, जिनके द्वारा ईरानियों के हक़ों को धक्का पहुँचता था, रद्द कर दिया गया। सन्धि की दूसरी धारा में रूस ने ज़ार की उस नीति की निन्दा की, जिसके द्वारा यूरोपीय राष्ट्रों से मिल कर एशिया के राष्ट्रों को अपने अधिकार में लाने का प्रयत्न किया जाता था। सोवियट रूस ने ज़ार की उस नीति का

पूर्णतया त्याग करने की घोषणा की तथा ऐसे किसी भी कार्य में भाग न लेने का वादा किया, जिससे ईरान को हानि पहुँचने की सम्भावना हो। आठवीं धारा द्वारा उसने जार की सरकार द्वारा दिया हुआ ऋण रद्द कर दिया। ऋण के बदले में ईरान ने जार की सरकार को जो रिआयतें दी थीं, उन्हें सोवियट सरकार ने ईरान को वापस कर दीं और अन्त में ईरान के अधिकारों की रक्षा करने का वचन दिया।

दूसरी सन्धि टर्की से हुई थी। इसमें कहा गया कि ऐसी कोई भी सन्धि या अन्तर्राष्ट्रीय समझौता, जिस पर दोनों राष्ट्रों ने बाध्य होकर हस्ताक्षर किए हों, न माना जावेगा तथा पूर्वीय राष्ट्रों को स्वतन्त्रता तथा मनचाही सरकार स्थापित करने का अधिकार होगा।

इस समय की की हुई अन्यान्य सन्धियों में भी इन्हीं बातों का समावेश है। सब में पूर्वीय राष्ट्रों को स्वतन्त्रता के अधिकार दिए गए हैं। अफ़ग़ानिस्तान की सन्धि द्वारा रूस ने सीमाप्रान्त के जिलों को, जो रूस के अधिकार में थे, अफ़ग़ानिस्तान को लौटा दिया; क्योंकि उन जिलों के लोग अफ़ग़ानिस्तान के अधीन रहना चाहते थे।

इस तरह रूस ने निकट-पूर्वीय राष्ट्रों से मैत्री स्थापित की, उनकी सहानुभूति प्राप्त की और साम्राज्यवाद-विरोधी एक दल तैयार किया।

पर सुदूर-पूर्व में रूस को नई कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। निकट-पूर्व के टर्की, अफ़ग़ानिस्तान और ईरान तो बहुत

कुछ स्वतन्त्र थे। पर सुदूर-पूर्व के देशों में एक जापान को छोड़ कर, बाक़ी सब के सब साम्राज्यवाद के चङ्गुल में फँसे थे। बल्कि जापान स्वयम् उन देशों में अपना साम्राज्यवादी पाँव फैला रहा था। रूस ने सब से पहिले चीन पर अपना ध्यान दिया। उस समय चीन की स्थिति भी ऐसी थी कि रूस का कार्य बड़ा सरल हो गया। १९२० के बाद के चीन के राष्ट्रीय आन्दोलन का झुकाव रूस के पक्ष में था। जापान चीन पर अत्याचार कर रहा था। यहाँ तक कि चीन ने जापानी माल का बहिष्कार कर रक्खा था। अतएव जापान को रोकने के लिए चीन रूस के साथ काम करने को तैयार था। पश्चिम के साम्राज्यवादी राष्ट्र भी चीन पर आतङ्क जमा रहे थे, अतएव उनके विरुद्ध भी चीन रूस से मिलने के लिए पूर्णतया तत्पर था। एक ही समय चीन और रूस एक दूसरे की दोस्ती के इच्छुक थे, अतएव १९२४ में दोनों राष्ट्रों में एक सन्धि हुई। चीन के बारे में ज़ारों ने दूसरे देशों से जो सन्धियाँ की थीं, वे सब इस सन्धि द्वारा रद्द कर दी गईं। चीन की ईस्टर्न रेलवे के दस डाइरेक्टर नियुक्त किए गए, जिनमें से पाँच चीन के और पाँच रूस के थे। यह भी तय हुआ कि इस रेलवे के सम्बन्ध में जितने मामले भविष्य में होंगे, वे सब चीन और रूस आपस में तय कर लेंगे और किसी तीसरे राष्ट्र का इससे कोई सम्बन्ध न होगा। मित्र-राष्ट्रों ने इस समझौते का तीव्र विरोध किया, क्योंकि वे भी रेल के मामले में अपना अधिकार चाहते थे। १९२५ में रूस ने जापान से सन्धि की।

जापान को बहुत सी आर्थिक सुविधाएँ देकर उसको अपना मित्र बनाया।

इस तरह रूस ने एशिया के प्रायः सभी राष्ट्रों से मैत्री स्थापित की। रूस की दूरदर्शिता तथा बुद्धिमानी से रूस, ईरान, अफ़ग़ानिस्तान, चीन, टर्की तथा जापान का एक गिरोह बन गया। इनका उद्देश्य है यूरोपीय राष्ट्रों के साम्राज्य-विस्तार को रोकना। यह नवीन एशिया के इतिहास का पहिला अध्याय है। रूस के नेतृत्व में एशिया के राष्ट्र अपने को यूरोपीय साम्राज्यवाद से बचाने तथा एशिया की उन्नति का प्रयत्न कर रहे हैं। अभी तो इस कार्य का श्रीगणेश हुआ है। देखना है, इसमें इन राष्ट्रों को कहाँ तक सफलता मिलती है और रूस अपनी नीति में कितना सफल होता है।

सोवियट रूस की नवीन शिक्षा-प्रणाली



वीन रूस संसार के लिए एक अनोखी वस्तु है। सारे संसार की आँखें आज उसकी ओर लगी हुई हैं। बड़े-बड़े विद्वानों ने इसकी भूरि-भूरि प्रशंसा की है। विशेषज्ञों का कहना है कि दस-बीस वर्षों के अन्दर ही रूस संसार का नेता बनेगा। सोवियट रूस की चर्चा शिक्षित समाज में प्रतिदिन होती है। उसके राजनैतिक तथा आर्थिक प्रश्नों पर हम बहुधा लिखा-पढ़ा करते हैं। पर आज पाठकों के सामने उसके एक ऐसे पहलू को रक्खा जा रहा है, जिसके बारे में हम लोग बहुत कम जानते हैं। वह है, रूस की नवीन शिक्षा-प्रणाली। संसार ने रूस से बहुत सी बातें सीखी हैं। पर सब से आवश्यक बात जो हमें आज उससे सीखनी है, वह उसकी शिक्षा-प्रणाली ही है।

यह शिक्षा-प्रणाली रूस के लिए भी अभी बिलकुल नई वस्तु है। इसका श्रीगणेश १९२१ या १९२२ से होता है। दो ही वर्षों में रूस ने इसमें इतनी उन्नति कर ली थी कि १९२४ में ही 'ब्रिटिश ट्रेड यूनियन डेलीगेशन' ने अपने रिपोर्ट के १३८ वें पन्ने में लिखा है, कि किसी भी विषय में, विचारों में इतनी क्रान्ति नहीं हुई है, जितनी सोवियट रूस की नवीन शिक्षा-प्रणाली

में। इसके भी पूर्व १९२१ में, ब्रेल्सफ़र्ड ने लिखा था कि सोवियट यूनियन अपने शिक्षा के महान उद्योग द्वारा रूस की तमाम जनता को शक्तिशाली तथा जिम्मेदार बना रहा है।

पर इस नवीन शिक्षा-प्रणाली का दिग्दर्शन करने से पहले, आइए हम रूस की पुरानी शिक्षा-प्रणाली को भी देख लें। बीसवीं सदी के आरम्भ में, जहाँ तक शिक्षा का सम्बन्ध था, रूस यूरोप के और देशों से बहुत पीछे था। रूस के बहुत थोड़े पुरुष लिख-पढ़ सकते थे। यदि हम यूरोप के भिन्न-भिन्न देशों की सेनाओं के रँगरूटों की शिक्षा की तुलना करें, तो हमें उस समय के रूस की शिक्षा का पता लग जावे। बेलजियम की सेना में सौ पीछे ९२ रँगरूट पढ़े-लिखे थे, फ्रान्स की सेना में सौ पीछे ९६ लिख-पढ़ सकते थे, इङ्गलैण्ड की सेना में ९९ प्रति सैकड़ा शिक्षित थे और जर्मनी की सेना में २,००० रँगरूट पीछे १,९९९ रँगरूट पढ़े-लिखे थे, पर रूस के रँगरूटों में सौ पीछे केवल ६२ शिक्षित थे!

जनता को अशिक्षित रखना रूस के ज़ारों की नीति थी। उन्हें शिक्षित बनाने का उद्योग करने की कौन कहे, ज़ारों की सरकारें उल्टा शिक्षा के मार्ग में रोड़े अटकाती थीं। केवल अमीरों के लड़के शिक्षा पा सकते थे। किसान और मजदूरों के लड़के यदि ऊँची शिक्षा पाना चाहते थे, तो उन्हें महान कठिनाइयों का सामना करना पड़ता था। ज़ार एलेक्ज़ण्डर के चौथे शिक्षा-मन्त्री शिशकोव (Shishkov) ने शिक्षा और नगर की

तुलना करते हुए कहा था कि जैसे नमक जब थोड़ा खाया जाता है तब फ़ायदा पहुँचाता है, वैसे ही शिक्षा भी थोड़ी ही लाभ-जनक होती है, और जैसे अधिक नमक का प्रयोग हानि पहुँचाता है, वैसे ही अधिक शिक्षा भी हानि पहुँचाती है। अतएव तमाम जनता को शिक्षित बनाने से लाभ की अपेक्षा हानि ही अधिक होगी।

उस समय रूस के मदरसों में बहुत थोड़े लड़के पढ़ते थे। निम्नाङ्कित विवरण से पता चलता है कि १९०४ में किस देश में कुल आबादी का प्रतिशत कितना हिस्सा मदरसों में पढ़ता था:—

देश का नाम	कुल आबादी का प्रतिशत
अमेरिका	२३
जर्मन साम्राज्य	१९
इङ्गलैण्ड	१६
फ्रान्स	१५
रूस	३·३

रूस की सरकार ने इन स्कूलों पर पूरा अधिकार जमाया था। वही तय करती थी कि मदरसों में क्या-क्या पढ़ाया जावे। सरकारी निरीक्षक अध्यापकों पर अपनी लगाम कसे हुए थे। शिक्षकों का वेतन भी बहुत थोड़ा था। जो थोड़े से विद्यार्थी ऊँची शिक्षा प्राप्त करते थे, उन्हें 'डिसिप्लिन' के कड़े नियमों का पालन करना पड़ता था। उनकी प्रत्येक बात पर नियम लगा दिए गए थे। वे लोग किसी को मानपत्र न दे सकते थे; और न

अपना डेपुटेशन कहीं भेज सकते थे। विश्व-विद्यालय में या उनके हाते के अन्दर ऐसी कोई भी बात न कर सकते थे, जिसका शिक्षा से सम्बन्ध न हो। उन्हें कोई सभा आदि करने का अधिकार न था और जनता में व्याख्यान न दे सकते थे। विश्व-विद्यालय के विद्यार्थियों ने इन कठोर नियमों के विरुद्ध अनेक बार आन्दोलन किया, परन्तु कोई फल न हुआ।

अन्त में जारशाही का अन्त हुआ। रूस में भीषण क्रान्ति हुई। पुरानी रूढ़ियों का अन्त हुआ। रूस ने नवीन उत्साह से नए मार्ग पर क़दम रक्खा। प्रत्येक क्षेत्र में उत्साह से धैर्यपूर्वक परिवर्तन किया गया। पुरानी अशिक्षा को दूर करने के लिए तथा जनता को शिक्षित बनाने के लिए लोगों ने जी तोड़ परिश्रम किया।

१९१८ में अखिल रूस का शिक्षा-सम्मेलन मॉस्को में हुआ। रूस के नेताओं ने जनता में शिक्षा का प्रचार करने के लिए योजनाएँ बनाईं। पर उन योजनाओं को सफल बनाने के लिए साधनों की कमी थी। सब से बड़ी अड़चन धन का अभाव था। १९२१ में सोवियट रूस ने अपनी आर्थिक नींव दृढ़ की और धन का अभाव दूर किया। तभी से रूस में शिक्षा के नवीन युग का श्रीगणेश हुआ।

रूस की नवीन सरकार ने सब से पहिले धार्मिक शिक्षालयों का प्रश्न अपने हाथ में लिया। शिक्षालय गिरजाघरों से अलग कर दिए गए। धर्म का शिक्षा से कोई सम्बन्ध न रह गया। सरकारी पाठशालाओं से धार्मिक विषयों का अध्ययन उठा दिया गया।

सोवियट-यूनियन में शिक्षा का प्रश्न प्रत्येक प्रजातन्त्र को सौंप दिया गया है। प्रत्येक प्रजातन्त्र तथा प्रत्येक शहर में एक शिक्षा-विभाग है। प्रत्येक शहर, प्रत्येक जिला तथा प्रत्येक प्रान्त में शिक्षा-विभाग है और वहाँ के निवासी अपने शिक्षा-विषयक प्रश्न को अपने ढङ्ग से हल करते हैं पर इसका अर्थ यह न समझना चाहिये, कि 'अपनी-अपनी डफ़ली और अपना-अपना राग' की कहावत चरितार्थ हो रही है। देश भर के शिक्षा का प्रश्न एक सूत्र में बँधा हुआ है और सब का एक ही ध्येय तथा उद्देश्य है। ट्रेड-यूनियन, कम्यूनिस्ट पार्टी आदि देशव्यापी संस्थाओं ने शिक्षा की समस्या को एक बना रक्खा है। हाँ, एक ही स्थान से देश भर की शिक्षा का सञ्चालन नहीं होता।

सोवियट यूनियन में चार बड़े-बड़े प्रजातन्त्र हैं। जिनके नाम हैं—रसन प्रजातन्त्र, युक्रेन, व्हाइट रसा तथा ट्रान्सकॉकेशिया। प्रत्येक प्रजातन्त्र में एक शिक्षा-मन्त्री तथा एक शिक्षा-विभाग होता है। शिक्षा-विभाग के और भी कई उपविभाग होते हैं। रूस के एक प्रजातन्त्र के शिक्षा-विभाग की निम्नाङ्कित शाखाएँ हैं :—

(१) सङ्गठन-विभाग, (२) सामाजिक शिक्षा-विभाग, (३) औद्योगिक शिक्षा-विभाग, (४) राजनैतिक शिक्षा कमिटी, (इस कमिटी में ट्रेड-यूनियन, कम्यूनिस्ट पार्टी आदि के प्रतिनिधि शामिल हैं), (५) वैज्ञानिक शिक्षा-विभाग, (६) साहित्य तथा सम्पादन-कला-निरीक्षण विभाग और (७) वैज्ञानिक स्टेट कौन्सिल।

शिक्षा-विभाग के निरीक्षण में निम्नलिखित काम किए जाते हैं :-

१—सरकारी प्रकाशन

२—सरकारी सिनेमा

३—सरकारी थिएटर

प्रजातन्त्र के सभी शिक्षा-विभागों का सञ्चालन उपर्युक्त ढङ्ग से किया जाता है। प्रजातन्त्र के प्रत्येक छोटे से बड़े हिस्से में स्थानीय शिक्षा-विभाग है, जिसमें उसे पूरी स्वतन्त्रता है। परन्तु प्रजातन्त्र के दो शहरों—मॉस्को तथा लेनिनग्रेड—में शिक्षा का ढङ्ग अलग-अलग है। सिद्धान्त एक है, केवल कार्य-शैली भिन्न है।

रूस के सामने मुख्य दो प्रश्न हैं। एक तो तमाम नई पीढ़ी के लोगों को पढ़ाना और दूसरा उन बड़े-बूढ़ों को पढ़ाना, जो ज़ार के काल में पढ़ न पाए थे और तब से अशिक्षित चले आ रहे हैं। इस तरह मानो ज़ार के पापों का प्रायश्चित रूस को अब करना पड़ रहा है।

रूस में शिक्षा का विस्तृत जाल फैला है। जैसे ही बालक तीन वर्ष का होता है, उसके भावी शिक्षा की नींव रख दी जाती है। तीन वर्ष से छोटे बालक 'स्वास्थ्य बोर्ड' के अधीन रहते हैं। वही उनकी देख-भाल करता है। जब बालक आठ वर्ष का होता है।तो उसे पढ़ने के लिए बाध्य किया जाता है। पर तीन वर्ष से लेकर आठ वर्ष के बीच के पाँच वर्ष भी व्यर्थ नहीं जाते। उसे इन वर्षों में सरल मनोरञ्जन के साथ उपयोगी बातें सिखाई जाती हैं। खेलना, क़िस्से-कहानी कहना, क़रीब के स्थानों की सैर

करना आदि बातें बालकों को सिखाई जाती हैं, और उन्हें भविष्य के लिए तैयार किया जाता है। आठ वर्ष से १५ वर्ष तक प्रत्येक बालक को मदरसा जाना पड़ता है। इन सात वर्षों में उसे शिक्षित किया जाता है। इस शिक्षा-काल के दो हिस्से हैं। पहिला हिस्सा आठ वर्ष से १२ वर्ष तक है। १२वें वर्ष इस शिक्षा की पहिली मञ्जिल समाप्त हो जाती है। दूसरी मञ्जिल १२वें वर्ष से १५वें वर्ष तक है और कहीं-कहीं १७वें वर्ष तक। यह शिक्षा अधिकतर गाँवों में दी जाती है। १९२४ के जनवरी महीने में रूस भर में ऐसे ९२,८५७ मदरसे थे। इनमें से ८१, ३०६ यानी ८७·५ प्रति सैकड़ा गाँवों में थे।

जब एक बालक १५ वर्ष का हो जाता है, तब उसे उद्योग-धन्धे की शिक्षा दी जाती है। जो १८ या १९ वर्ष तक जारी रहती है। ऐसे मदरसे तीन भाँति के हैं :—

(१) किसानों के मदरसे, जो देहातों तथा गाँवों में हैं। इन मदरसों में देहाती उद्योग-धन्धों की शिक्षा दी जाती है। (२) शहर के शिक्षालय, जिनमें तिजारत, व्यापार आदि की शिक्षा दी जाती है। (३) फैक्टरी-स्कूल—ये मदरसे किसी उद्योग-धन्धे से सम्बन्ध रखते हैं। जो लोग उस धन्धे में पहले-पहल आते हैं, वे इन्हीं शिक्षालयों में पढ़ते हैं। प्रतिदिन चार घण्टे फैक्टरी में काम करते हैं और प्रतिदिन चार घण्टे उसी फैक्टरी-स्कूल में पढ़ते हैं। १९२४ के जनवरी माह में ३, १७,८४२ लड़के इन मदरसों में पढ़ते थे।

जब बालक १९ वर्ष का हो लेता है और प्रारम्भिक शिक्षा समाप्त करके आगे पढ़ने की योग्यता तथा इच्छा रखता है, तो उसके लिए ऊँची शिक्षा का प्रबन्ध है। १९२४ में ऊँची शिक्षा देने वाले ९१२ शिक्षालय थे, जिनमें १,५९, १७६ विद्यार्थी शिक्षा पा रहे थे। ऐसे शिक्षालय ६ भाँति के हैं---१९२४ में दवाई के ६६, कृषि के १५२, उद्योग-धन्धे के २१९, अर्थशास्त्र के ५३, संगीत-विद्या के ९२ शिक्षालय थे।

सोवियट यूनियन में विश्वविद्यालय भी हैं। मॉस्को के प्रथम विश्वविद्यालय में ९,००० विद्यार्थी शिक्षा पा रहे हैं। इन विद्यार्थियों में से ४५ प्रति सैकड़ा विद्यार्थी आर्थिक सहायता पाते हैं। मॉस्को में एक और विश्वविद्यालय है, जिसमें कम्यूनिस्ट पार्टी का काम करने के लिए लोग तैयार किए जाते हैं।

अन्त में, रूस के आर्थिक, राजनैतिक तथा सामाजिक नेताओं के सुभीते के लिए, कॉलेज और यूनिवर्सिटी के अध्यापकों के शिक्षा के लिए तथा नई-नई खोज तथा आविष्कार के लिए अनेक संस्थाओं का प्रबन्ध है।

रूस की उपर्युक्त शिक्षा-प्रणाली मनन करने योग्य है। जिस ढङ्ग से रूस शिक्षा के प्रश्न को हल कर रहा है, उससे तो यही मालूम पड़ता है कि भविष्य में संसार के विद्यार्थी अपनी शिक्षा के लिए इङ्गलैण्ड आदि न जाकर, रूस जाया करेंगे, और रूस संसार की शिक्षा का केन्द्र बन जावेगा।

सोवियट रूस का शासन-विधान



त यूरोपीय महायुद्ध के पूर्व रूस दस पृथक-पृथक भागों में बँटा था, जिनमें रूसी, पोल, यहूदी, फिन और मङ्गोल आदि जातियाँ रहती थीं। इन जातियों की भाषाएँ तथा धर्म भी पृथक-पृथक थे। रूस के प्रसिद्ध जार पीटर के समय से पहले रूस यूरोप का एक भाग न समझा जा कर, एशिया का ही भाग समझा जाता था। पीटर ने रूस को यूरोपीय जामा पहिनाने का भरसक प्रयत्न किया और रूस में यूरोपीय सभ्यता का खूब प्रचार किया।

अठारहवीं और उन्नीसवीं सदी से रूस यूरोप की राजनीति में भी भाग लेने लगा था। जिस समय नेपोलियन का सितारा बुलन्दी पर था, उस समय फ्रान्स के क्रान्ति की लहरें रूस तक पहुँच गई थीं। नेपोलियन का रूस पर धावा करना, निराश होकर लौटना और अन्त में उसके साम्राज्य का छिन्न-भिन्न होना, ये सब ऐतिहासिक घटनाएँ इतिहास के प्रत्येक विद्यार्थी को भली-भाँति मालूम हैं। नेपोलियन के पतन का सब से बड़ा कारण भी रूस ही था।

रूस ऐसे विशाल देश में, जहाँ अनेक जातियाँ रहती हों; जहाँ की सभ्यता पिछड़ी हो और जहाँ सैनिकवाद का बोलबाला हो, निरङ्कुश शासन ख़ूब फल-फूल सकता है। फलतः रूस का शासन भी निरङ्कुश ही रहा है। समय-समय पर विवश होकर जारों को कुछ सुधार करने पड़े थे, पर वे सुधार बड़े थोथे थे। शासकगण जनता के प्रतिनिधियों को वास्तविक अधिकार नहीं देना चाहते थे। सन् १८४८ में जब लोकतन्त्रवाद की लहरें पश्चिमीय यूरोप के एक कोने से दूसरे कोने तक बह रही थीं, और जब फ्रान्स, इटली और जर्मनी में नवीन विधान बन रहे थे, तब रूस में जारशाही का बोलबाला था और वहाँ जनता को कुछ भी शासनाधिकार प्राप्त न थे।

कुछ वर्ष पश्चात् जार द्वितीय एलेक्जेण्डर ने गुलामी की प्रथा उठा दी थी और किसानों की आर्थिक हालत सुधारने का प्रयत्न किया था। पर जमींदारों के अधिकार ज्यों के त्यों बने थे और राष्ट्रीय शासन में जनता का कुछ भी हाथ न था। पर सूबों और जिलों के शासन में अवश्य जनता को एलेक्जेण्डर ने कुछ अधिकार दिए थे। जिलों में जिला-सभाओं की स्थापना की गई थी। जिन्हें जेम्सट्वस (Zemstvos) कहते थे।

उपर्युक्त सूबा और जिला-सभाओं ने रूस में सुधार-आन्दोलन को उत्साहित किया। राष्ट्रीय शासन में राजनीतिक सुधार करना, इस सुधार-आन्दोलन का प्रधान लक्ष्य था। जनता विधान चाहती थी और उनके लिए एक राष्ट्रीय पार्लामेण्ट की स्थापना करना

चाहती थी। उन्नीसवीं शताब्दी के पश्चात् ही इस आन्दोलन ने विकराल रूप धारण किया। रूस के शासकगण सुधार और क्रान्ति को एक ही समझते थे। वे 'विधान' तथा 'पार्लमेण्ट' शब्दों से इतने भयभीत थे कि इन दोनों शब्दों पर सेन्सर लगा दिया था, जिससे कोई भी समाचार-पत्र अपने किसी लेख में इन शब्दों का प्रयोग नहीं कर सकता था। एक तरफ़ ये सब हो रहा था और दूसरी तरफ़ कार्लमार्क्स की शिक्षाएँ रूस के नौजवानों को साम्यवादी बना रही थीं तथा रूस में सामाजिक लोकतन्त्रीय दल की स्थापना हो रही थी।

इसी अवस्था में सन् १९०४ में रूस और जापान का विख्यात युद्ध छिड़ गया। इस युद्ध में जापान ने रूस को बुरी तरह हराया। संसार के आधुनिक इतिहास में यह पहिला ही अवसर था, कि यूरोप के एक प्रबल राष्ट्र ने एशिया के एक राष्ट्र से मुँह की खाई थी। इस राष्ट्रीय अपमान ने रूस के नौजवानों को बेचैन कर दिया। वे तिलमिला उठे। जनता में असन्तोष इतना बढ़ गया कि जारशाही घबड़ा गई। सामाजिक लोकतन्त्रों की संख्या बढ़ने लगी, यद्यपि दमन-चक्र भी तेजी से चल रहा था। सामाजिक लोकतन्त्रों ने घोर आन्दोलन आरम्भ किया। उन्होंने मजदूरों को भड़काना शुरू कर दिया। जारशाही समझ गई कि यदि उसे जीवित रहना है, तो दमन बन्द करना होगा और राष्ट्रीय पार्लमेण्ट की माँग के प्रति उदार नीति से काम लेना होगा।

अतएव सन् १९०५ में जार ने कुछ डिग्रियाँ जारी कीं। उसका कहना था कि इन डिग्रियों का अभिप्राय जनता को विधान देना था। पर वास्तव में इनसे निरङ्कुश शासन का अन्त नहीं हुआ। वरन् इन डिग्रियों ने जार के अधिकारों का समर्थन किया। जार के मन्त्री केवल जार के प्रति ही उत्तरदायी माने गए। एक राष्ट्रीय पार्लामेण्ट की योजना की गई। पार्लामेण्ट में दो सभाएँ थीं। बड़ी सभा को साम्राज्य की कौन्सिल (Council of the Empire) कहते थे और छोटी सभा का नाम ड्यूमा (Duma) था। बड़ी सभा के आधे सदस्यों को जार नियुक्त करता था और शेष आधे प्रान्तीय सभाओं, जमींदारों, चैम्बर ऑफ़ कॉमर्स, गिर्जाघरों तथा विश्वविद्यालयों द्वारा ९ वर्ष के लिए चुने जाते थे। चालीस वर्ष के ऊपर के लोग ही सदस्य चुने जा सकते थे। छोटी सभा के सदस्य जिला-सभाओं द्वारा चुने जाते थे। आम क़ानूनों के लिए छोटी सभा की स्वीकृति आवश्यक थी। छोटी सभा में सैनिक तथा वैदेशिक नीति पर बहस नहीं हो सकती थी। अस्तु।

उपर्युक्त विधान को यदि उचित ढङ्ग से कार्यान्वित किया जाता, तो सम्भव था कि कुछ अच्छा परिणाम निकलता, पर जार और उसके मन्त्रियों ने विधान के साथ विश्वासघात करना शुरू कर दिया। जनता भी शान्ति के साथ विधान की परीक्षा नहीं करना चाहती थी। प्रथम और द्वितीय ड्यूमाओं में गरम-दल की भरमार थी। उन्होंने अपने व्याख्यानों तथा कार्यों से मन्त्रियों को

भयभीत कर दिया। ड्यूमा ने मन्त्रियों को अपने प्रति उत्तरदायी बनाने का प्रयत्न किया। सुधारों की एक सूची बनाई गई, जिसमें राजनीतिक क़ैदियों को छोड़ने तथा भूमि को किसानों की भलाई के लिए छोटे-छोटे भागों में बाँटने आदि की योजनाएँ शामिल थीं। ड्यूमा के कुछ सदस्य क्रान्ति का आह्वान करने लगे।

परिणाम-स्वरूप दोनों ड्यूमाएँ तोड़ दी गईं और ज़ार तथा उसके मन्त्रियों ने चुनाव की एक नवीन योजना तैयार की। इस योजना के अनुसार मताधिकारियों को निम्न-लिखित वर्गों में विभाजित कर दिया गया, जैसे जमींदार, व्यापारी, किसान तथा मजदूर। इन वर्गों को भिन्न-भिन्न स्थान दिए गए। सब से अधिक सीटें जमींदारों को दी गईं और सब से कम किसानों तथा मजदूरों को। फलतः सन् १९०५ का विधान बहुत अंशों में रद्द कर दिया गया।

उपर्युक्त नवीन योजना के परिणाम-स्वरूप तृतीय ड्यूमा ने ज़ार के कथनानुसार चलना अङ्गीकार किया, चौथी ड्यूमा भी ज़ार के इशारे पर चलती थी। इन ड्यूमाओं में जनता के सच्चे प्रतिनिधि न थे। चौथी ड्यूमा के कार्य-काल में यूरोपीय महायुद्ध का श्रीगणेश हुआ। इस ड्यूमा ने ज़ार का पूरा समर्थन किया। युद्ध के प्रथम दो वर्षों में रूस की सेना अनेक स्थानों पर बुरी तरह पराजित हुई। फलतः जनता में घोर असन्तोष फैल गया। जनता को सन्तुष्ट करने के लिए ड्यूमा ने ज़ार को कुछ आवश्यकीय सुधार जारी करने की सलाह दी, पर ज़ार ने ड्यूमा की सलाह

स्वीकार नहीं की। ज़ार के सैनिक तथा सिविल विभागों की अयोग्यता प्रतिक्षण प्रदर्शित हो रही थी। जनता क्रोध से पागल हो रही थी। ऐसे अवसर में ज़ार ने पक्के प्रतिक्रियावादियों को अपना मन्त्री चुना। इन मन्त्रियों ने घोर दमन से काम लेना प्रारम्भ कर दिया।

इस दमन के परिणाम-स्वरूप सन् १९१७ में, रूस में एक क्रान्ति हुई। इस क्रान्ति का श्रीगणेश पेट्रोग्रेड में हुआ। वहाँ की भूखी जनता सड़कों पर निकल कर भोजन माँगने लगी। जनता को तितर-बितर करने के लिए सेना को आज्ञा दी गई। परन्तु सेना ने यह आज्ञा मानने से इन्कार कर दिया और वह जनता से मिल गई, इसके बाद जनता ने सेण्ट-पीटर तथा सेण्ट पॉल नाम के क़िलों को घेर लिया और वहाँ के क़ैदियों को भगा दिया। नवीन मन्त्रि-मण्डल का निर्माण करके एक अस्थायी सरकार की स्थापना की गई। जनता को विधान का आश्वासन दिया गया। ज़ार को सिंहासन छोड़ना पड़ा।

जिस समय अस्थायी सरकार बनाई गई, उसी समय पेट्रोग्रेड में किसानों तथा मज़दूरों के सोवियट की स्थापना की गई। अस्थायी सरकार तथा सोवियट दोनों जनता पर शासन करने लगे। दोनों की आज्ञाएँ एक-दूसरे के विपरीत होती थीं। सोवियट ने प्राचीन सैनिक डिसप्लिन का अन्त कर दिया। अन्त में कुछ समय बाद सोवियट और अस्थायी सरकार ने मिल कर एक संयुक्त सरकार स्थापित की। परन्तु यह नवीन सरकार भी

देश की आर्थिक तथा सैनिक स्थिति को सुधार न सकी और दिन-पर-दिन हालत बिगड़ती ही रही। इसी बीच में बोलशेविकों ने शासन को अपने हाथ में लिया और फ़ौज की सहायता से अस्थायी सरकार का अन्त कर दिया।

तत्पश्चात् सोवियटों की कॉङ्ग्रेस ने जनता के प्रतिनिधियों की एक कौन्सिल नियुक्त की। निकोलाई लेनिन इस कौन्सिल का प्रधान था। इस नवीन सरकार ने युद्ध में भाग लेने वाले तमाम राष्ट्रों से सन्धि करनी चाही। परन्तु जब अन्य राष्ट्रों ने सन्धि करने से इन्कार कर दिया, तो उसने मित्र-राष्ट्रों का साथ छोड़ कर जर्मनी से पृथक सन्धि कर ली। इसके बाद नवीन सरकार ने निजी सम्पत्तियों का अन्त कर दिया और रेलों, बैङ्कों, फ़ैक्टरियों, खानों तथा भूमि को ग़रीबों को सौंप दिया। ज़ार तथा उसका परिवार मौत के घाट उतार दिए गए। ज़ार के समर्थक क़त्ल कर दिए गए, क़ैद कर लिए गए या देश से बाहर निकाल दिए गए। प्रत्येक स्थान के उद्योग-धन्धे सोवियट कमिश्नरों (प्रतिनिधियों) के अधिकार में कर दिए गए। प्राचीन गिर्जाघर तोड़ दिए गए। सारांश यह कि कुछ ही महीनों में तमाम देश कम्यूनिस्ट बना दिया गया।

सन् १९१८ में सोवियटों की कॉङ्ग्रेस ने जिसे अब अखिल रूसी कॉङ्ग्रेस कहते हैं, एक विधान स्वीकार कर लिया। इस विधान को बोलशेविक नेताओं ने तैयार किया था। इस विधान को न तो जनता द्वारा चुने हुए लोगों ने बनाया था, न इस पर

जनता की राय ही ली गई थी। यह विधान ही सोवियट रूस का वर्तमान विधान है। यद्यपि इसमें सन् १९१८ के पश्चात् डिग्रियों द्वारा अनेक संशोधन कर दिए गए हैं।

सन् १९१८ के विधान में सब से पहले रूस सोवियटों का एक प्रजातन्त्र राज्य घोषित किया गया है। तत्पश्चात् मूल अधिकारों की घोषणा की गई है। ये अधिकार तमाम जनता के न होकर केवल उन लोगों के हैं, जो मजदूरी करते हैं। इसमें निजी सम्पत्तियों के अन्त करने के कार्य का समर्थन किया गया है। मताधिकार १८ वर्ष की उम्र के या उससे बड़े रूस के तमाम नागरिकों को दिया गया है, चाहे वे मर्द हों या औरत, उनका धर्म तथा उनकी जाति चाहे जो हो तथा उनका निवास-स्थान चाहे जहाँ भी हो; पर वे सब अपना जीवन निर्वाह मजदूरी (Productive Labour) द्वारा ही करते हों तथा "अपने निजी स्वार्थ के लिए दूसरों को नौकर न रखते हों।" निम्न-लिखित श्रेणी के लोगों को मताधिकार प्राप्त नहीं है और न वे किसी पद पर ही रह सकते हैं—(१) वे जो निजी लाभ के लिए दूसरों को नौकर रखते हैं। (आम घरेलू नौकर इसमें शामिल नहीं हैं), (२) जो ऐसी आमदनी पर रहते हैं, जो उनकी निजी मेहनत का परिणाम नहीं है (उदाहरणार्थ ब्याज और किराया आदि), (३) व्यापारी, एजेण्ट तथा अन्य सौदागर, (४) गिरजाघर के तमाम पदाधिकारी, (५) पुराने जार के शासन के किसी विभाग से कभी सम्बन्ध रखने वाले मनुष्य और (६) वे मनुष्य, जिनका

दिमाग दुरुस्त न हो, या जिन्हें किसी भीषण अपराध में सजा हो चुकी हो। विधान में यह भी कहा गया है कि विदेशी लोग, जो रूस में मजदूरी करके जीविकार्जन करते हैं, वे भी वोट दे सकते हैं। यह १८ वर्ष की उम्र की क़ैद स्थानीय सोवियट द्वारा कम की जा सकती है, यदि केन्द्रीय सरकार इसे स्वीकार कर ले।

पाठक कहेंगे कि रूस में तमाम जनता को मताधिकार प्राप्त नहीं है। केवल मजदूरी करने वाले ही वोट दे सकते हैं, अन्य श्रेणी के लोग वोट नहीं दे सकते और यह लोकतन्त्र के सिद्धान्त के विपरीत है। पर पाठकों को भूलना न चाहिए, कि उपर्युक्त विधान कम्यूनिस्ट विधान है, जिसका अभिप्राय है कि शासन की बागडोर मजदूर-श्रेणी के लोगों के हाथों में हो, न कि तमाम जनता के हाथों में। कम्यूनिस्ट स्टेट में मजदूर श्रेणी ही शासक होती है। अन्य श्रेणियों को शासन में कोई अधिकार प्राप्त नहीं होता। फलतः रूस में अन्य वर्गों के पुरुषों को मताधिकार नहीं दिया गया है।

सोवियट सामाजिक प्रजातन्त्रों के सङ्घ (Union of Soviet Socialist Republics) में उच्चतम शासकीय संस्था सोवियटों की कॉङ्ग्रेस (Congress of Soviets) है। इस कॉङ्ग्रेस में शहरों तथा सूबों के डेलीगेट रहते हैं। शहरों के सोवियटों से २५,००० मजदूरों पीछे एक डेलीगेट लिया जाता है। सूबों की सोवियटों से १,२५,००० दिहातों में रहने वालों के पीछे एक डेलीगेट लिया जाता है। कॉङ्ग्रेस की वर्ष में एक

बैठक होती है। जिस समय कॉङ्ग्रेस की बैठक नहीं होती उस समय काम करने के लिए प्रत्येक वर्ष कॉङ्ग्रेस एक सङ्घ केन्द्रीय कार्यकारिणी कमिटी (Union Central Executive Committee) चुनती है। इस केन्द्रीय कार्यकारिणी कमिटी की बैठक प्रत्येक तीसरे महीने १५ दिन के लिए होती है। इस कार्यकारिणी कमिटी में लगभग ४०० सदस्य होते हैं, जो दो चैम्बरों में बैठते हैं। बड़ी सभा में सोवियट के अन्तर्गत चारों प्रजातन्त्रों के प्रतिनिधि रहते हैं। ये प्रतिनिधि आबादी के लिहाज़ से चुने जाते हैं। कार्यकारिणी कमिटी का एक सभापति होता है। यह कार्यकारिणी कमिटी स्वयम् २१ सदस्यों की एक कमिटी चुनती है, जो कार्य का सञ्चालन करती है।

शासन का कार्य एक कैबिनेट द्वारा होता है, जिसे जनता के कमिसरों की सङ्घ कौन्सिल (Union Council of People's Commissars) कहते हैं। इसमें १५ सदस्य होते हैं, जो कार्यकारिणी कमिटी द्वारा चुने जाते हैं। यह कैबिनेट केवल कार्यकारिणी कमिटी के प्रति उत्तरदायी न होकर, सङ्घ कॉङ्ग्रेस के प्रति भी उत्तरदायी होती है। कैबिनेट का एक सदस्य सभापति होता है तथा ४ सदस्य उपसभापति होते हैं। पर सभापति को छोड़ कर शेष सब सदस्य एक-एक विभाग के प्रधान होते हैं। इस कैबिनेट के तमाम क़ायदे और क़ानूनों को सङ्घ के तमाम सदस्यों को अवश्यमेव मानना और उन्हें कार्यान्वित करना पड़ता है।

विधान ने केन्द्रीय शासन को बहुत अधिकार दिए हैं। केन्द्रीय शासन के कुछ अधिकार ये हैं---वैदेशिक नीति का सञ्चालन करना, युद्ध घोषित करना और सन्धि स्थापित करना, विदेशों से ऋण लेना, वैदेशिक व्यापार का सञ्चालन करना, रेल, डाक तथा तार विभागों का सञ्चालन करना, सैनिक सङ्गठन पर अधिकार रखना और देश भर में सिक्के तथा टैक्स की एक नीति निर्धारित करना आदि-आदि। केन्द्रीय सरकार तमाम प्रजातन्त्रों के दीवानी और फौजदारी कानूनों के लिए तथा स्कूलों के लिए आम सिद्धान्त निश्चित करती है।

सोवियट के अन्तर्गत प्रत्येक प्रजातन्त्र में अपनी सोवियट सरकार होती है। पर चारों प्रजातन्त्रों की सोवियट सरकारें एक दूसरे से बहुत मिलती-जुलती हैं। सोवियट सरकार में सब से नीचे शहरों में फैक्टरियों तथा कारखानों में मजदूरों के गुट्ट होते हैं। देहातों में किसानों के गुट्ट हैं। ये गुट्ट (प्रत्येक फैक्टरी तथा प्रत्येक ग्राम में) स्थानीय कौन्सिल या सोवियट चुनते हैं। तत्पश्चात् ये स्थानीय सोवियटें उच्चतर शासनीय संस्थाओं के लिए अपने प्रतिनिधि चुनती हैं। गाँव की सोवियटें अपने प्रतिनिधि जिले की सोवियटों की कॉङ्ग्रेस को भेजती हैं। तमाम जिले अपने प्रतिनिधि अपने से बड़ी कॉङ्ग्रेस को भेजते हैं। तत्पश्चात् ये तमाम कॉङ्ग्रेस अपने प्रतिनिधि उसी प्रकार अपने से बड़ी कॉङ्ग्रेस को भेजती हैं। शहरों की सोवियटें अपने प्रतिनिधि उच्चतर संस्थाओं को भेजती हैं। शहरों की सोवियटें अपने

प्रतिनिधि सीधे अखिल रूसी कॉङ्ग्रेस को भेजती हैं। अखिल रूसी कॉङ्ग्रेस में देहातों की सोवियटें अपने प्रतिनिधि सीधे नहीं भेज पातीं। उनके प्रतिनिधि सूबों की तथा कमिश्नरी की कॉङ्ग्रेसों से चुन कर आते हैं। इस प्रकार पाठक देखेंगे, कि प्रतिनिधित्व आबादी पर या वोटरों की संख्या में से किसी एक पर निर्भर नहीं करता। शहर के मजदूरों को अधिक प्रतिनिधित्व प्राप्त हैं। शहरों का प्रतिनिधित्व वोटरों की संख्या पर निर्भर करता है। पर देहातों का प्रतिनिधित्व रहने वालों की संख्या पर निर्भर करता है।

अखिल रूसी सोवियटों की कॉङ्ग्रेस खास रूस के लिए (सङ्घ के लिए नहीं) अन्तिम क़ानून बनाने वाली संस्था है। इस कॉङ्ग्रेस में एक ही चैम्बर होता है, जिसमें शहरों और सूबों के सोवियटों के प्रतिनिधि होते हैं। इसके सदस्यों की संख्या विधान द्वारा निश्चित नहीं है। कुल मिला कर इसमें कई हजार सदस्य होते हैं। इसकी बैठक मॉस्को में वर्ष में दो बार होती है। इसको क़ानून बनाने के पूरे अधिकार हैं, केवल उन अधिकारों को छोड़ कर, जो सङ्घ कॉङ्ग्रेस को दे दिए गए हैं। जब कॉङ्ग्रेस की बैठक नहीं होती, तो उसका कार्य एक बड़ी कार्यकारिणी कमिटी करती है। कॉङ्ग्रेस के सदस्यों की संख्या इतनी अधिक होने के कारण तथा कार्य की अधिकता के कारण कार्यकारिणी कमिटी की बैठकें साल भर तक होती रहती हैं। यहाँ तक कि कॉङ्ग्रेस के अधिवेशन के समय भी कार्यकारिणी की बैठक नहीं

बन्द होती। कार्यकारिणी कमिटी की एक उपसमिति भी होती है, जो उसका बहुत सा काम कर देती है।

सङ्घ की भाँति खास रूस में भी शासन करने के लिए मन्त्रियों की एक कैबिनेट होती है, जिसे वहाँ की जनता के कमीसरों की कौन्सिल कहते हैं। इस कौन्सिल में १२ सदस्य होते हैं तथा प्रत्येक सदस्य के अन्तर्गत एक शासकीय विभाग रहता है। इन सदस्यों का निर्वाचन कार्यकारिणी द्वारा होता है, जिसके प्रति ये उत्तरदायी होते हैं। इनका सम्बन्ध अखिल रूसी कॉङ्ग्रेस से भी होता है। कमीसरों की कौन्सिल अपने प्रत्येक निश्चय से कार्यकारिणी कमिटी को सूचित करती है, पर जरूरी काम आ जाने पर कौन्सिल अपनी जिम्मेदारी पर भी काम कर सकती है। प्रत्येक शासकीय विभाग के साथ एक सलाह देने वाला बोर्ड (Advisory Board) रहता है। कौन्सिल अपने सदस्यों में से ही एक को अपना सभापति चुन लेती है।

सोवियट शासन के सम्बन्ध में पाठकों को दो बातें याद रखनी चाहिएँ। प्रथम यह, कि संसार की अन्य प्रतिनिधि सरकारों में भौगोलिक प्रतिनिधित्व (Geographical Representaion) होता है। एक गाँव, तहसील, जिला या शहर आदि अपना प्रतिनिधि चुनते हैं। एक जिले के रहने वाले एक साथ वोट देते हैं और अपना प्रतिनिधि चुनते हैं, इन चुनने वालों के पेशे अलग-अलग भले ही हों और जो प्रतिनिधि चुना जाता है, वह उस जिले के तमाम रहने वालों का प्रतिनिधि होता है—अर्थात् वह एक साथ

ही जिले के तमाम व्यापारियों, सौदागरों, किसानों, जमींदारों, मजदूरों, वकीलों तथा डॉक्टरों आदि का प्रतिनिधि होता है। सारांश यह, कि भौगोलिक प्रतिनिधित्व में स्थान को विशेष महत्व दिया जाता है, पेशे को महत्व नहीं दिया जाता। यह अनुमान किया जाता है, कि सत्ताधिकारों की भलाई-बुराई पर स्थान का अधिक प्रभाव पड़ता है, और पेशे का उतना नहीं पड़ता। फलतः एक जिले में रहने वाला वकील उस जिले के तमाम रहने वालों का प्रतिनिधि हो सकता है। यद्यपि जिले में किसानों की संख्या अधिक होती है, परन्तु एक दूसरे जिले का रहने वाला किसान उन किसानों का प्रतिनिधि नहीं हो सकता।

रूस में भौगोलिक प्रतिनिधित्व को नहीं माना गया है। वहाँ पेशेवर प्रतिनिधित्व (Vocational Representation) को अधिक महत्व दिया गया है। यह सही है, कि भौगोलिक वर्गक्षेत्रों का प्रयोग किया जाता है, पर केवल पेशेवर प्रतिनिधित्व को सफल बनाने के लिए। पृथक-पृथक पेशे के लोग पृथक-पृथक वोट देते हैं। खानों में काम करने वाले एक साथ वोट देते हैं। लोहे का काम करने वाले एक साथ पृथक वोट देते हैं। सैनिकगण एक साथ पृथक वोट देते हैं। प्रत्येक पेशे के लोग एक साथ पृथक वोट दे कर अपने ही पेशे के किसी आदमी को अपना प्रतिनिधि चुनते हैं। अखिल रूसी कॉङ्ग्रेस में लोहे का काम करने वाला कीव, ओडेसा या जिस स्थान से वह आता है, उस

स्थान का प्रतिनिधि नहीं होता, बल्कि वह तमाम लोहे के काम करने वालों का प्रतिनिधि होता है।

यह सोवियट प्रतिनिधित्व का मूल-सिद्धान्त है। इसके समर्थकों का कहना है कि यह भौगोलिक प्रतिनिधित्व या किसी अन्य प्रतिनिधित्व से कहीं अच्छा है। क्योंकि लोगों की भलाई-बुराई उनके जीवन पर निर्भर करती है और उनका जीवन उनके पेशे पर निर्भर करता है, न कि उनके रहने के स्थान पर।

सिद्धान्ततः पेशेवर प्रतिनिधित्व के पक्ष में बहुत-कुछ कहा जा सकता है। भौगोलिक प्रतिनिधित्व में दोष भी है। क्योंकि इस प्रणाली के समर्थक इस बात को भूल जाते हैं, कि प्रत्येक मताधिकारी केवल उस स्थान में रहता ही नहीं, बल्कि किसी एक श्रेणी तथा पेशे का सदस्य भी है तथा सम्भव है कि उसके पेशे का असर उस पर स्थान की अपेक्षा अधिक पड़ता हो।

व्यापारी, मजदूर तथा किसान सब अपने पेशे की उन्नति करना चाहते हैं। चूँकि व्यापारी तथा किसान एक ही स्थान पर रहते हैं, इसलिए उनके जीवन का दृष्टिकोण एक नहीं हो जाता, न उनकी भलाई-बुराई एक बात पर निर्भर करती है। फलतः सब बातों पर विचार करने के पश्चात् यह कहना ही पड़ता है कि पेशेवर प्रतिनिधित्व भौगोलिक प्रतिनिधित्व से कहीं अच्छा है।

पर इसी प्रश्न पर दूसरे ढङ्ग से विचार कीजिए तो आप दूसरे ही परिणाम पर पहुँचेंगे। क्या तमाम पेशे के लोगों में राजनीतिक अधिकार बाँट देने से तमाम जनता की भलाई की जा सकती है?

सोवियट का प्रतिनिधित्व का सिद्धान्त इस सिद्धान्त पर निर्भर करता है, कि आम नीति के प्रति लोगों की मनोवृत्ति उनके पेशे पर निर्भर करती है। बहुधा ऐसा होता भी है; पर क्या यह अच्छी बात है और क्या इसे उत्साहित करना चाहिए ? अन्य देशों में यह बात मानी जाती है कि लोग नागरिक पहिले हैं, व्यापारी तथा मजदूर पीछे, तथा लोगों को अपनी श्रेणी तथा पेशे की भलाई की अपेक्षा राष्ट्र की भलाई का ध्यान पहिले होना चाहिए। पार्लामेण्ट की छोटी सभा का सदस्य किसी एक जिले से अवश्य चुना जाता है, पर केवल जिले का प्रतिनिधि ही बनने के लिए नहीं। उसे तमाम जनता के राष्ट्रीय कोष से व्यय दिया जाता है। वह तमाम जनता का प्रतिनिधि है। जब वह तमाम जनता का प्रतिनिधि होता है, तब भी हमें बहुधा यह शिकायत होती है, कि प्रायः वह तमाम राष्ट्र की भलाई का विचार न करके, अपने जिले की भलाई का अधिक विचार करता है। और यदि कहीं वह किसी एक श्रेणी या पेशे का प्रतिनिधि हुआ, तब तो उसका यह कर्तव्य ही होगा, कि वह तमाम राष्ट्र की भलाई का विचार न करके, अपनी श्रेणी या पेशे का अधिक विचार करे। फलतः हमें शिकायत करने की गुञ्जाइश न रहेगी। क्या यह तमाम राष्ट्र की दृष्टि से उचित होगा ?

सोवियट शासन के सम्बन्ध में दूसरी स्मरणीय बात यह है कि शासकों और जनता के बीच में बहुत फ़ासला रहता है। अन्य देशों में जनता अपने शासकों को स्वयं सीधे तौर से चुनती है। और शासकों और जनता में केवल एक सीढ़ी का अन्तर रहता

है। पर रूस में यह अन्तर कई सीढ़ियों का हो जाता है। रूस के किसान अपने गाँव की सोवियट को चुनते हैं। गाँवों की सोवियटें जिले की सोवियटों को अपने प्रतिनिधि भेजती हैं। जिले की सोवियटें प्रान्तीय कॉङ्ग्रेस के लिए अपने प्रतिनिधि चुनती हैं। अन्त में प्रान्तीय कॉङ्ग्रेस के प्रतिनिधि अखिल रूसी कॉङ्ग्रेस तथा सङ्घ कॉङ्ग्रेस में होते हैं, जो अपने-अपने लिए केन्द्रीय कार्यकारिणी कमिटियाँ चुनते हैं। तत्पश्चात् प्रत्येक कार्यकारिणी कमिटी एक उप-कमिटी चुनती है तथा कमीसरों की एक कौन्सिल नियुक्त करती है,जो शासकीय विभागों का सञ्चालन करता है। किसान और कमीसरों के मध्य में इतना अधिक फ़ासला होता है कि तमाम उत्तरदायित्व मार्ग में ही नष्ट हो जाता है। यों तो रूस के शासन पर जनता ही का अधिकार होता है, पर इस अधिकार को कार्यान्वित करने का ढङ्ग इतना पेचीदा है कि वास्तविक अधिकार नहीं के बराबर होता है। बोल्शेविकों ने उत्तरदायी सरकार इस ढङ्ग से स्थापित की है कि उत्तरदायित्व का कहीं पता ही नहीं चलता। अस्तु।

ऊपर सोवियटों, कॉङ्ग्रेसों, कमिटियों तथा कौन्सिलों का ज़िक्र किया जा चुका है। इनके अलावा नाना प्रकार के स्थायी तथा अस्थायी,साधारण तथा विशेष कमीशन भी होते हैं। समय-समय पर भिन्न-भिन्न उद्देश्यों के लिए इनकी स्थापना की गई है। बहुधा उनके अधिकार तथा कार्य अन्य संस्थाओं के अधिकार तथा कार्यों से टकराते हैं। कुछ कमीशन डिग्रियाँ जारी करते हैं, उन्हें

कार्यान्वित करते हैं तथा जो उन डिग्रियों को तोड़ते हैं, उन्हें सजा देते हैं। ऐसे कमीशनों में सब से प्रसिद्ध कमीशन 'चेका' (Cheka) था, जिसका कार्य था, सरकार के विरुद्ध अपराधों को रोकना और अपराधियों को सजा देना। यह कमीशन मृत्यु-दण्ड तक दे सकता था। रूस में आम क़ानूनी अदालतें होती हैं, पर 'चेका' कमीशन अपना कार्य उन अदालतों द्वारा नहीं कराता था, बल्कि वह स्वयं ही जाँच करता, मुक़दमे सुनता, सजा देता तथा सजा को कार्यान्वित करता था। सन् १९२२ में इस कमीशन का अन्त कर दिया गया और इसके जाँच के कार्य सङ्घ के एक शासकीय विभाग को सौंप दिए गए। अब ऐसे मुक़दमे भी आम अदालतों में ही होते हैं। इन तमाम अदालतों के न्यायाधीश तथा असेसर चुने जाते हैं।

ऐसे गोरखधन्धी शासन का अन्त क्यों नहीं हो जाता और सङ्घ तथा प्रजातन्त्रों के अधिकारों तथा प्रजातन्त्र और प्रान्तों के अधिकार एक-दूसरे से टकरा कर एक-दूसरे को नष्ट क्यों नहीं कर देते? इसका प्रधान कारण यह है कि एक ही राजनीतिक पार्टी का सर्वत्र बोल-बाला है। सब कमीसर बोल्शेविक हैं, वे सब कम्यूनिस्ट पार्टी के सदस्य हैं। वे ही सोवियटों, काँग्रेसों, कमिटियों तथा कौन्सिलों का सञ्चालन करते हैं। फलतः इन सब का सञ्चालन एक ही ढङ्ग से होता है। इनमें से किसी में भी विरोधी दल नहीं पाया जाता। कम्यूनिस्ट पार्टी का विरोधी सरकार का शत्रु समझा जाता है। जब कभी

कोई झगड़ा खड़ा होता है, तो बोल्शेविक पार्टी में वह तय कर दिया जाता है। रूस में सर्वत्र बोल्शेविक दल का सर्वे-सर्वा होना ही सोवियट शासन की सफलता का सब से बड़ा कारण है।

सन् १९१८ के सोवियट विधान में स्पष्ट कहा गया है कि तमाम नागरिकों के अधिकार समान हैं। पर उसके पश्चात् ही यह भी स्पष्ट कर दिया गया है, कि कोई भी नागरिक किसी ऐसे अधिकार का दावा नहीं कर सकता, जिसका प्रयोग सोवियट के विरुद्ध किया जा सके। फलतः नागरिकों के मूल अधिकारों की घोषणा नहीं की गई है। सोवियट शासन के विरुद्ध नागरिक के कोई अधिकार नहीं हैं। सामाजिक शासन (Social State) ही साध्य है, व्यक्तिगत नागरिक केवल साधन। पत्रों की स्वतन्त्रता (Freedom of the Press), बोलने की स्वतन्त्रता (Freedom of the Speech) आदि स्वतन्त्रताएँ जो संसार के अन्य सभ्य तथा स्वतन्त्र देशों में मानी जाती हैं, रूसी शासन में इन स्वतन्त्रताओं का कोई अटल स्थान नहीं है। सोवियट शासन में इन स्वतन्त्रताओं को तभी तक स्थान मिलता है, तथा सरकार इन्हें तभी तक मानती है, जब तक इनका प्रयोग सोवियट सरकार के विरुद्ध न हो कर, उसके पक्ष में होता है। सोवियट के अर्थ में यह उचित भी है, क्योंकि साधन को कभी भी साध्य के विपरीत न जाना चाहिए। साधन का अस्तित्व ही साध्य के लिए होता है।

सोवियट शासन की आर्थिक नीति क्या है? सन् १९१७ में रूसी क्रान्ति ने बोल्शेविकों के हाथ में आते ही आर्थिक जामा

पहिन लिया था। क्रान्ति का लक्ष्य था, व्यक्तित्व का अन्त करके कम्यूनिस्ट सरकार की स्थापना करना तथा ग़रीबों के हाथों में तमाम सांसारिक शक्तियाँ सौंप देना। सन् १९१८ के विधान ने भूमि की निजी सम्पत्ति का अन्त कर दिया तथा रूस की प्रत्येक इञ्च भूमि सरकार को सौंप दी गई। तत्पश्चात् यह राष्ट्रीय भूमि किसानों में बाँट दी गई थी। जो किसान जितनी भूमि जोत-बो सकता था, उसे उतनी भूमि दी गई। किसानों का भूमि पर क़ानूनी अधिकार मान लिया गया था, वैसे तो किसानों ने पहिले ही जमींदारों को निकाल कर भूमि अपने अधिकार में कर ली थी। एक किसान के मर जाने पर उसका वारिस उस भूमि को जोतता-बोता है, पर वह उसे बेच नहीं सकता।

शहरों में जिन फ़ैक्टरियों के मालिकों ने अपनी फ़ैक्टरियों को सरकार को सौंपने से इन्कार कर दिया, वे बलपूर्वक फ़ैक्टरियों से निकाल दिए गए। तमाम उद्योग-धन्धे सरकार द्वारा नियुक्त कमीसरों के अधिकार में कर दिए गए। ये लोग इन उद्योग-धन्धों का सञ्चालन मजदूरों की इच्छा के अनुसार ही करते हैं। प्रत्येक फ़ैक्टरी में, जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, मजदूरों की कौन्सिल या सोवियट होती है। मजदूरों को वेतन के रूप में एक काग़ज़ का टुकड़ा मिलता था, जिसके दिखाने से मजदूरों को सरकारी दूकानों से भोजन-कपड़ा आदि आवश्यकीय वस्तुएँ मिल जाती थीं। क्योंकि इन वस्तुओं की निजी दूकानें न रह गई थीं। पर यह योजना सफल प्रमाणित नहीं हुई। फ़ैक्टरियों

की पैदावार कम हो गई, क्योंकि मजदूर मनमाना काम करते थे और उन्हें आवश्यकीय वस्तु काफी नहीं मिलती थी, अतएव उनकी योग्यता घट रही थी। फैक्टरियों को कच्चा सामान (Raw material) काफी तादाद में नहीं मिलता था और जो लोग फैक्टरियों का सञ्चालन करते थे, उनका फैक्टरियों के सम्बन्ध का ज्ञान बहुत परिमित था। सरकार मजदूरों को अपनी दूकानों द्वारा काफी खाद्य-पदार्थ नहीं दे सकती थी। क्योंकि किसान शहरों में उस समय तक गल्ला नहीं भेजना चाहते थे, जब तक उन्हें गल्ले के एवज में बनी हुई वस्तुओं के मिलने का आश्वासन न मिल जाता था और सरकार आश्वासन देने में असमर्थ थी।

फलतः सन् १९२१ में उपर्युक्त योजना में अनेक परिवर्तन किए गए। उद्योग-धन्धों का निजी सञ्चालन पुनः होने लगा। निजी व्यापार भी थोड़ा-थोड़ा होने लगा। कुछ लोग मिल कर फैक्टरी चला सकते थे, पर उन्हें सरकार को साझीदार बनाना पड़ता था। सरकारी लाइसेन्स पर दूकानें आदि खुल सकती थीं। विदेशी पूँजीपतियों के साथ रियायतें की गईं और उन्हें वहाँ आकर व्यापार करने तथा मिल खोलने का न्योता दिया गया। जब तक देश की हालत सुधर न जाय, तब तक के लिए कम्यूनिस्ट सिद्धान्त ढीला कर दिया गया है। लोगों का अनुमान है कि हालत सुधरते ही पूर्ण कम्यूनिज्म स्वयं क्रमशः सब क्षेत्रों में फैल जाएगा।

तृतीय अन्तर्राष्ट्रीय क्या है ?



वियट रूस के सिलसिले में पाठकों ने तृतीय अन्तर्राष्ट्रीय का नाम बहुधा सुना होगा। कम्यूनिस्ट - प्रचार के सम्बन्ध में इसका नाम प्रत्येक दिन सुनाई पड़ता है। यह तृतीय अन्तर्राष्ट्रीय (Third International) क्या है ? पाठकों ने साम्यवाद के आचार्य कार्लमार्क्स का नाम सुना होगा। कार्लमार्क्स की प्रसिद्ध पुस्तक 'पूँजी' (Capital) साम्यवाद की बाइबिल समझी जाती है। कार्लमार्क्स की शिक्षा ने ही रूस के नवयुवकों को साम्यवादी बनाया था। इसी कार्लमार्क्स ने सन् १८६४ में संसार के मजदूरों की एक अन्तर्राष्ट्रीय संस्था की स्थापना की थी। इस संस्था को आगे चल कर प्रथम अन्तर्राष्ट्रीय के नाम से पुकारा जाने लगा। इस संस्था द्वारा कार्लमार्क्स संसार के तमाम देशों के साम्यवादियों को एक सूत्र में बाँधना चाहता था। इस प्रथम अन्तर्राष्ट्रीय की कई एक कॉङ्ग्रेसें समय-समय पर हुईं। संसार भर के साम्यवादियों के प्रतिनिधि इन कॉङ्ग्रेसों में इकट्ठा होकर संसार भर के साम्यवादियों के लिए एक नीति तथा कार्य-शैली निर्धारित करते थे। यह प्रथम अन्तर्राष्ट्रीय पेरिस कम्यून (Paris

Commune) का जोरों से समर्थन करता था। फलतः पेरिस कम्यून के पतन होते ही प्रथम अन्तर्राष्ट्रीय को जबरदस्त धक्का लगा। यहाँ तक कि वह इस धक्के से बच न सका और अन्त में १८७६ में, यह संस्था तोड़ दी गई। अपनी अन्तर्राष्ट्रीय संस्था को नष्ट होते देख कर संसार के साम्यवादियों को बहुत दुःख हुआ। अतः १३ वर्ष बाद सन् १८८९ में उन्होंने पुनः पेरिस में अपनी एक अन्तर्राष्ट्रीय संस्था की स्थापना की। इसे द्वितीय अन्तर्राष्ट्रीय कहते थे। इस द्वितीय अन्तर्राष्ट्रीय के उद्देश्य भी वही थे, जो प्रथम अन्तर्राष्ट्रीय के थे। सन् १८८९ से लेकर सन् १९१४ तक द्वितीय अन्तर्राष्ट्रीय की सात कॉङ्ग्रेसें हुईं। इन कॉङ्ग्रेसों में संसार के तमाम देशों की साम्यवादी संस्थाओं के प्रतिनिधि भाग लेते थे। ऐसी ही एक कॉङ्ग्रेस सन् १९०० में पेरिस में हुई थी, जिसमें एक अन्तर्राष्ट्रीय साम्यवादी ब्यूरो की स्थापना की गई थी। इस ब्यूरो का काम था, संसार में साम्यवाद का प्रचार करना। सन् १९१४ में महायुद्ध के प्रारम्भ होते ही अनेक देशों की साम्यवादी संस्थाएँ छिन्न-भिन्न हो गईं। तमाम साम्यवादी संस्थाएँ साम्यवाद को ताक पर रख कर युद्ध में अपनी-अपनी सरकारों की तन, मन और धन से सहायता करने लगीं। फलतः द्वितीय अन्तर्राष्ट्रीय का भी अन्त हो गया।

महायुद्ध के समाप्त होते ही नरम-दल के साम्यवादियों ने सन् १९१९ में द्वितीय अन्तर्राष्ट्रीय को पुनः सङ्गठित किया। पर गरम दल के साम्यवादी इस संस्था में नहीं आना चाहते थे।

अतः उन्होंने मॉस्को में रूसी कम्यूनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में अपनी एक अलग अन्तर्राष्ट्रीय संस्था स्थापित की। इसी मास्को वाली गरम दल के साम्यवादियों की अन्तर्राष्ट्रीय संस्था को तृतीय अन्तर्राष्ट्रीय के नाम से पुकारते हैं। इस तृतीय अन्तर्राष्ट्रीय में संसार के तमाम देशों की कम्यूनिस्ट संस्थाएँ शामिल हैं तथा इसकी बैठकों में उन सब के प्रतिनिधि भाग लेते हैं। इसका प्रधान दफ़्तर मॉस्को में है और रूसी कम्यूनिस्ट पार्टी ही इसका अधिकतर सञ्चालन करती है। इस तृतीय अन्तर्राष्ट्रीय का उद्देश्य है, "संसार के मजदूरों की तमाम क्रान्तिकारी पार्टियों के प्रयत्न को एक सूत्र में बाँध कर संसार भर में कम्यूनिस्ट क्रान्ति की तैयारी करना" (To unite the efforts of all revolutionary parties of the world-proletariate and thus facilitate a communist revolution on a world-wide basis)। रूसी कम्यूनिस्ट पार्टी का वैदेशिक प्रचार बहुत-कुछ इसी संस्था द्वारा होता है।

रूस की पञ्च-वर्षीय योजना



स का पञ्च-वार्षिक कार्यक्रम आज सारे संसार का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट कर रहा है। पाँच वर्ष--केवल पाँच वर्ष के थोड़े समय में वह संसार का सर्वोत्कृष्ट व्यापारिक शक्ति बनने का दावा करता है। इस धुन में वह ऐसा लगा है कि उसे खाना, पीना और सोना तक हराम हो रहा है। रूस-जैसे कुचले हुए राष्ट्र के उत्थान के लिए पाँच वर्ष का समय उतना ही है, जितना जल में बुलबुले का जीवन-काल। किन्तु इसी समय में वह असम्भव को सम्भव करने पर तुला हुआ है। देखना चाहिए कि इस समय के अन्त में वह कहाँ तक सफल होता है।

रूस का विस्तार पृथ्वी के सारे स्थल-भाग का छठाँ हिस्सा है। इस में तरह-तरह के पदार्थ अपनी प्राकृतावस्था में पड़े हुए हैं, जिनका आज दिन बहुत कम उपयोग होता है। ऐसे पदार्थों को अधिक उपयोग में लाने के लिए रूस के पास साधन--जैसे कारखाने, मेशीन और योग्य अनुभवी मनुष्य--नहीं हैं। सब से भारी कठिनाई यह है कि अन्य देशों में रूस की साख भी नहीं रही। एक पैसे मूल्य वाली वस्तु भी उसे दाम देकर ही लेनी पड़ती है। ऐसी हालत में वह प्रायः एक खरब रुपए लगा कर

अपने गिरे हुए देश को महत्वाकांक्षी राष्ट्र के रूप में परिणत करना चाहता है। वह अपनी जन-संख्या के १६ करोड़ मनुष्यों को मजदूर बना कर अपने लक्ष्य तक पहुँचने का प्रयत्न कर रहा है। इस विशाल आयोजन का आरम्भ १९२८ ई० में हुआ था। किन्तु १९३३ ई० में इसकी अवधि कुछ और बढ़ा दी गई है। यह स्कीम क्या है ? इसका लक्ष्य क्या है ? इन बातों को ठीक-ठीक जानने के लिए एक बार संक्षेप में रूस के वर्तमान वातावरण की चर्चा दोहरा देना अनुचित न होगा। अस्तु,

यदि सच पूछिए तो आजकल "रशिया" नाम का कोई देश ही नहीं है। वह विस्तृत साम्राज्य, जो ८०,००,००० वर्गमील भूमि में फैला हुआ है, जो यूरोप के आधे और एशिया के तिहाई भाग को छेके हुए है, इस समय The Union of Socialist Soviet Russia के नाम से प्रसिद्ध हो रहा है। इसके शासक मजदूर हैं अर्थात् वहाँ की १६,००,००,००० आबादी में १६,००,००० अर्थात् सैकड़े पीछे एक मनुष्य शासक है। ये सैकड़े एक मनुष्य शासक-दल—कम्युनिस्ट पार्टी वाले हैं। केवल मजदूर और किसानों को 'वोट' देने का अधिकार है। गवर्नमेण्ट के सभी प्रधान-प्रधान कार्यालय कम्युनिस्टों के हाथ में हैं। यह दल सम्पूर्ण-रूपेण सेना और नौ-विभाग (Army nad Navy) को हथियाए हुए हैं।

जार के राज्यच्युत होने के बाद सन् १९१७ ई० में कम्युनिस्ट शक्तिशाली हुए। शासन-भार ग्रहण करने के बाद इन्होंने पुराने

साम्राज्य को छः प्रधान हिस्सों (Republics) में बाँटा। ये सोवियटों या कमिटियों द्वारा शासित होते हैं। हर एक गाँव और नगर के अपने-अपने 'सोवियट' या शासन करने वाली पञ्चायत हैं। इसे उस गाँव या नगर वाले चुनते हैं। ये ग्राम्य पञ्चायतें प्रान्तीय पञ्चायतों (County Soviet) के लिए प्रतिनिधि चुनती हैं। प्रान्तीय पञ्चायतें व्यवस्थापिका सभा (State Legislature) के लिए प्रतिनिधि चुनती हैं। अन्त में ये सभाएँ Union Congress of Soviet का चुनाव करती हैं। उपरिलिखित कॉङ्ग्रेस में २,००० से ३,००० तक मेम्बर होते हैं। इसकी बैठक हर दो वर्षों में एक बार होती है और यह अपने मेम्बरों में से एक सेण्ट्रल एक्जिक्यूटिव कमिटी (केन्द्रीय प्रबन्धकारिणी समिति) चुनती है, जिसमें प्रायः ४०० कमिसर होते हैं। ये कमिसर एक छोटी एक्जिक्यूटिव कमिटी निर्वाचित करते हैं। यह कमिटी 'प्रेज़िडियम' (Presidium) के नाम से विख्यात है। इसमें २१ मेम्बर होते हैं। ये ही रशिया के वास्तविक शासक हैं।

जोज़फ़ स्टेलिन, रशिया के डिक्टेटर, सेण्ट्रल एक्जिक्यूटिव कमिटी के मन्त्री तथा प्रेज़िडियम के एक मेम्बर हैं। वे कम्युनिस्ट पार्टी के प्रधान सेक्रेटरी तथा उत्साही कार्यकर्ता भी हैं। इसी कारण आजकल उनकी चलती भी है।

गत तेरह वर्षों से रूस का शासन-क्रम यही रहा है। इस समय कम्युनिस्ट पार्टी का ही बोलबाला रहा है। इस पार्टी के थोड़े-से सिद्धान्त ये हैं:—भूमि और स्वाभाविक उपज, जैसे खान

आदि, राष्ट्र की सम्पत्ति हैं। राष्ट्र ही उपज और वितरण का (Production and Distribution) मालिक है। कम्युनिस्ट राज्य में निज की कोई सम्पत्ति नहीं है। निज का न धन है और न लाभ। सभी नागरिक या तो राष्ट्र के कर्मचारी हैं या राष्ट्र के पेन्शनयाफ़्ता। रूस ही एक देश है, जहाँ कम्युनिज़्म के सिद्धान्तों की परीक्षा विस्तृत-रूप से तथा कुछ कालव्यापी हुई है।

कम्युनिज़्म, कैपिटलिज़्म (पूँजीवाद) का ठीक विरोधी है। कैपिटलिज़्म का प्रचार अन्य सभी देशों में है। इस सिद्धान्तानुसार धन निज की सम्पत्ति है, और अपनी चेष्टाओं तथा उद्योग का फल हर एक व्यक्ति उपभोग करने के लिए स्वतन्त्र है। सोशलिज़्म के भी वे ही सिद्धान्त हैं, जो कम्युनिज़्म के; फ़र्क़ सिर्फ़ इतना ही है, कि सोशलिस्ट क्रान्ति के बदले क़ानून द्वारा अपना काम निकालना चाहते हैं। इस प्रकार एक कम्युनिस्ट अधीर-सोशलिस्ट कहा जा सकता है।

आधुनिक कम्युनिज़्म के पिता कार्लमार्क्स एक जर्मन थे। इनकी मृत्यु १८८३ ई० में हुई। १९१७ ई० की रूस क्रान्ति के नेता निकोलाई लेनिन तथा लियन ट्रॉटज़्की ने मार्क्स के सिद्धान्त को तुरत काम में लाने की चेष्टा की। नई सरकार ने देश के सारे कारखानों, खानों, रेलों को अपने हाथ में कर लिया और सभी निजी दूकानों तथा बैङ्कों को बन्द करने के लिए बाधित किया। इसके बाद ही चार वर्ष व्यापी अभ्यान्तरिक युद्ध (Civil War) छिड़ गया। सरकार कारखानों या रेलों को न चला सकी।

किसानों ने खेतों में काम करने से इन्कार कर दिया। फल यह हुआ कि १९२१ में २०,००,००० मनुष्य दुर्भिक्ष के शिकार हुए।

लेनिन ने असफलता स्वीकार की और कम्युनिज़्म तथा कैपिटलिज़्म के सिद्धान्तियों में सन्धि करा दी। ट्रॉटज़्स्की ने इसका घोर विरोध किया और उसे देश-निकाले की सज़ा हुई। सरकार अब कारखानों को चलाने लगी और निजी कारबार को पुनः खोलने का अधिकार दे दिया गया। दूकानें और बैङ्क खुल गईं। किसान खेतों पर काम करने लगे, व्यवसाय पूर्ववत् चलने लगे। स्टेलिन ने ट्रॉटज़्स्की का स्थान ग्रहण किया। यह नई पद्धति चालाकी से भरी हुई एक सन्धि थी। क्योंकि लेनिन और स्टेलिन ने उसी समय कहा था कि मार्क्स के सिद्धान्त से हम लोग एक पग भी नहीं हटे हैं। १९२४ ई० में लेनिन के मरने के बाद उसके काम को दूसरों ने जारी रक्खा। १९२७ ई० तक देश पुनः अपने पैरों पर खड़ा हो गया। स्टेलिन अब सर्वेसर्वा बना, उसने देखा कि लेनिन के पुराने कार्यक्रम को कार्य में परिणत करने का समय आ गया है। किन्तु उसने नये ढङ्ग से काम करने का विचार किया, क्योंकि उसने सोचा कि यदि कम्युनिज़्म को सफल बनाना है तो धीरे-धीरे काम करना पड़ेगा, जिसमें लोगों के मन में घबराहट न पैदा हो और न पृथ्वी के दूसरे देश ही चौंक उठें। उसने यह भी अनुभव किया, कि यदि राष्ट्र को सारे कारबार का भार अपने ऊपर लेना है तो उसे यह भी सीखना पड़ेगा, कि पूँजी वाले किस प्रकार अपना कारबार चलाते हैं।

इसलिए संसार के बड़े-बड़े पूँजीवादी देशों तथा बड़े-बड़े व्यापारिक संस्थाओं से उसने मित्रता कर ली। इसके बाद, उसने एक State Planning Commission स्थापित की, जिसके मेम्बर कई विज्ञान-विशारद थे। उससे यह जाँच करने को कहा गया कि किस वैज्ञानिक रीति के अवलम्बन से पाँच वर्ष में ही लेनिन का कार्यक्रम पूरा किया जा सकेगा। उक्त कमीशन ने अपनी रिपोर्ट दी।

१९३३ ई० तक सोवियट रशिया इस्पात, तेल और कोयले की उत्पत्ति को दुगुना, धातुओं की उत्पत्ति को तिगुना और मैशीनों की उत्पत्ति को चौगुना बढ़ाना चाहता है, सोवियट सरकार की अन्य देशों में साख नहीं है। विदेशी मैशीनों को खरीदने तथा विदेशी विशारदों (Experts) को वेतन देने के लिए धन चाहिए। इसलिए वह अपना बहुत-सा गल्ला, मैङ्गनीज (खनिज-पदार्थ-विशेष) और कुन्दों (Lumbar) को बाहर भेज रहा है। खेतों की उपज बढ़ाने के लिए वह भूमि के छोटे-छोटे टुकड़ों को बड़े-बड़े टुकड़ों में परिणत कर स्तम्भ के पशुओं, औज़ारों और सरकार द्वारा दी हुई मैशीनों से जुतवाता है। रशिया की सारी भूमि अब सरकार के क़ब्ज़े में है। किसान जब तक खेत जोत सकें और सरकारी कर अदा कर सकें, तब तक भूमि उन्हें मुफ़्त मिलती है। गत अक्तूबर में ऐसे बड़े-बड़े खलिहानों में ६०,००,००० परिवार काम करते थे। इनके अलावा सरकार ३,००० से भी अधिक खलिहानों का स्वयं इन्तज़ाम करती है। १९३३ ई० तक रशिया

की सारी भूमि या तो सम्मिलित समाजों द्वारा जोती जायगी या सरकार द्वारा।

इस पञ्च-वार्षिक कार्यक्रम को पूरा करने के लिए रशिया के पास आवश्यकीय धन है, मनुष्य है, लोहा, कोयला, तेल तथा अन्य स्वाभाविक उपादान हैं, किन्तु उसके पास योग्य, अनुभवी अफसर नहीं हैं। रशियन इञ्जीनियरों में आवश्यकीय शिक्षा तथा अनुभव का अभाव है। इसलिए उसने अमेरिका से २,००० तथा जर्मनी, इटली, स्वीडेन, जेकोस्लोवेकिया आदि देशों से १,००० इञ्जीनियरों को बुला कर काम में लगाया है। सोविएट सरकार यह स्वीकार करती है कि ये इञ्जीनियर रशिया के उत्थान के लिए अनिवार्य हैं।

इनके अलावा रशिया के पास मैशीनें भी नहीं हैं। संसार की बड़ी-बड़ी कम्पनियाँ रशिया के लिए मैशीनें बनाने में व्यस्त हैं।

ये इञ्जीनियर या संसार की कम्पनियाँ कम्युनिस्ट विचार वाली नहीं हैं। उन्हें कार्लमार्क्स के सिद्धान्त से कोई मतलब नहीं, न वे स्टैलिन, वा ट्राटज्स्की की राजनीति से ही सहमत हैं। वे सिर्फ भाड़े के टट्टू हैं, जो दुगुनी तेज गति से काम करने के लिए वेतन पाते हैं। रुपया मिलने पर ये ही लोग भारतवर्ष के लिए भी वही कार्य कर सकते हैं।

डेन्नीपर नदी के पास पुकराइन में ये एक विद्युत् शक्ति-उत्पादक यन्त्र तैयार कर रहे हैं, नोवगोरोड में मोटर बनाने का एक वृहत् कारखाना बन रहा है, युरेल पहाड़ में एक छोटी-सी जगह

मैगनेटोगोरस्क नाम की है, वहाँ लोहे और इस्पात की एक बहुत बड़ी फैक्टरी प्रायः शेष हो आई है। साइबेरिया के ऐजवेस्ट स्थान में 'ऐस्बेस्ट्स' की खान खोदने का प्रबन्ध किया जा रहा है। यहाँ प्रायः ३६ मील-व्यापी एक खान है, जिससे प्रायः १,२०,००,००० टन के क़रीब 'ऐस्बेस्ट्स' निकल सकता है। चेलयाबिन्स्क स्थान में संसार का सब से बड़ा ट्रैक्टर का कारख़ाना भी बनाया जा रहा है। पञ्च-वार्षिक कार्यक्रम के ये पाँच प्रधान अङ्ग हैं। यदि ये सफल हुए तब तो कोई बात ही नहीं; किन्तु असफलता होने पर रशिया की मिट्टी-पलीद हो जायगी। किन्तु असफल होने का कोई कारण नहीं। अब तक की प्रगति को देख कर कहा जा सकता है, कि जिस तीव्र गति से काम हो रहा है, वैसी हालत में पाँच वर्ष, नहीं तो छः या सात वर्ष में सारा काम ख़तम हो जायगा।

इसके अलावा ये इञ्जीनियर नई-नई खानें खोद रहे हैं, नदियों के जल को काम में लगा रहे हैं, तेल-कूपों को खोद रहे हैं, पहाड़ों को तोड़ कर उससे रास्ता निकाल रहे हैं, नदियों पर पुल बना रहे हैं, रेलों के लिए पटरी बिछा रहे हैं और शक्ति-उत्पादन के लिए 'पावर हाउस' बना रहे हैं। तरह-तरह की वस्तु बनाने के लिए सारे रशिया में फैक्टरियों का जाल-सा बिछाने की भरपूर चेष्टा की जा रही है। विदेशी इञ्जीनियरों का रशिया में सर्वप्रथम आगमन १९२८ ई० में हुआ। पार साल उनको आए केवल तीन वर्ष हुए थे। इस समय में उन लोगों ने रशिया की उत्पत्ति को १९१३ ई० की उत्पत्ति से प्रायः दूना कर दिया है।

अभी हाल तक रशिया की रेल की सड़कें व्यापारिक केन्द्र रूपी मधु पर मक्खियों-जैसी फैली हुई थीं। जार के बाद जब रशिया का शासन-भार सोवियटों के हाथ में आया, उस समय वहाँ ६०,००० मील में रेल की सड़कें बिछी हुई थीं, और प्रायः १७,००० रेल के इञ्जन थे, किन्तु ये दोनों ही बड़ी रद्दी हालत में थे। प्रायः दस लाख आदमी इस विभाग में काम कर रहे थे। इनमें अधिकांश नाम ही के थे, काम करने वाले बहुत थोड़े थे। भला ऐसा विभाग सोवियट की तीव्र गति को कब सहन कर सकता था? दो वर्ष ही में वह बेकाम हो गया।

रशिया के पास योग्य व्यक्ति तो थे नहीं। उसे पुनः बाहर से अनुभवी इञ्जीनियरों को अत्यधिक वेतन दे कर बुलाना पड़ा। इस काम के लिए उसने प्रायः २७५ करोड़ खर्च करने का विचार किया है।

जिस विद्युत-उत्पादक-यन्त्र के विषय में ऊपर लिखा गया है, जो डेनीपर नदी के पास बन रहा है, उसके तैयार हो जाने पर वह २,५०,००,००,००० किलोवैट घण्टे की शक्ति ७०,००० वर्ग-मील में प्रति साल पहुँचाया करेगा, इसे हम यों कह सकते हैं, कि यही एक यन्त्र बिहार-उड़ीसा-जैसे प्रान्त के अन्दर जितने कारखाने बन सकते हैं उनके लिए शक्ति पहुँचाने के लिए काफी है, यह संस्था ८० लाख मजदूरों की रोटी का प्रश्न हल कर देगी।

यह रूस के शक्ति-उत्पादन शक्ति को पाँच गुना बढ़ा देगी और उसे इस विषय में आज जो दशम स्थान प्राप्त है, उसे उठा

का तीसरे स्थान में ला रक्खेगी। अमेरिका के संयुक्तराज्य और जर्मनी के शक्ति के खज़ाने के बाद रूस के पास उसका भण्डार आ कर जमा हो जायगा। यह संस्था सवा मील की लम्बाई में फैली रहेगी, जिसमें ८२० फ़ीट में 'पावर हाउस' होगा। यहाँ नौ "टरबाइन" (Turbines) बैठाए जायँगे और उनमें से प्रत्येक की ८५,००० अश्व-शक्ति की शक्ति पैदा करने की योग्यता होगी। इस प्रकार वे ७, ६५,००० अश्व-शक्ति की विद्युत शक्ति भिन्न-भिन्न स्थानों में भेजने के लिए सदा प्रस्तुत रहेंगे। यह वृहत् कार्य प्रायः आधा शेष हो चुका है, अस्तु।

रूस के उत्थान में सिर्फ़ विदेशी इञ्जीनियरों या विशारदों (Experts) ही का हाथ नहीं है। ये तो इने-गिने हैं। इनकी देख-रेख में रशिया का एक बहुत बड़ा मज़दूर-दल काम कर रहा है। उनके विषय में भी यहाँ कुछ लिख देना असङ्गत नहीं होगा। ये मज़दूर जी-जान से अपने काम में लगे हुए हैं। उन्हें वेतन भी अधिक नहीं मिलता। देश से खाद्य-पदार्थों के बाहर चले जाने के कारण मामूली-से-मामूली भोजन-पदार्थ के लिए उन्हें अत्यधिक मूल्य देना पड़ता है। एक मज़दूर का औसत मासिक वेतन प्रायः १०० रुपया है और आध सेर घटिया मक्खन का मूल्य ८ रुपया है। इसलिए अधिकांश मनुष्य रोटी, मछली और तरकारी ही पर अपनी गुज़र कर लेते हैं।

चूँकि सभी व्यापार सरकार के हाथ में है, वह मशीनों को छोड़ कर कुछ भी बाहर से नहीं मँगाती; इसलिए कपड़ों और जूतों की

बड़ी मँहगी है। इतना होने पर भी जार के समय (१९१३) में एक औसत मजदूर ने जितना काम किया था, उसका डेवढ़ा सोवियटों के समय में किया है और कर रहा है। इसका क्या रहस्य है?

इसका सब से गूढ़ रहस्य यह है, कि सरकार ने अपने मजदूरों के आराम के लिये कितने ही प्रकार की व्यवस्था कर रक्खी है। यह सही है कि उसे सौ रुपए से अधिक मासिक वेतन नहीं मिलता, किन्तु उसे विश्वास है, कि जब वह बुड्ढा हो जायगा और उसमें काम करने की शक्ति नहीं रहेगी, उस समय उसे सरकार से काफी पेन्शन मिलेगी। काम छूट जाने पर भी उसे Un-employment Insurance Fund से मदद या खाने को मिलता है। किन्तु यदि सच्ची बात पूछी जाय, तो आजकल रशिया में बेकारी हुई नहीं है—वहाँ तो मजदूरों की कमी है। जब मजदूर बीमार पड़ता है तो उसके लिए मुफ़ में दवा-दारू का प्रबन्ध है। जब उस की औरत को लड़का होता है, अस्पताल में उसके रहने, खाने और लड़के की देख-रेख के लिए मुफ़ इन्तजाम है। हर साल उसे वेतन-सहित दो हफ्ते की छुट्टी मिलती है। यदि वह खन्दकों में या किसी जोखिम के स्थान पर काम करता है तो उसकी वार्षिक छुट्टी एक महीने की होती है। हर पाँच दिन काम करने के बाद एक दिन की छुट्टी मिलनी अनिवार्य है। दिन में ७-८ घण्टे से अधिक उसे काम नहीं करना पड़ता।

यदि किसी मजदूर को कोई सख्त बीमारी हुई तो उसे सरकारी खर्च से 'रेस-रिविएरा' स्थान को भेज देते हैं। इसे

भारतवर्ष का धरमपूर या सोलन समझना चाहिए। यहाँ की आबहवा बड़ी ही अच्छी है। यहाँ जार और बड़े-बड़े लोगों के जो मकान बने हुए थे, वे ही अब मजदूरों के रहने के स्थान, होटल और क्लब-घर हैं। इन सब सुविधाओं को देखते हुए कहना पड़ेगा कि रूसी मजदूरों की अवस्था जार के समय से कहीं अच्छी है। उसे किसी बात की फ़िक्र नहीं है, जब तक वह काम करता है उसे भर-पेट खाने को मिलता है। उसे और भी कई सुविधाएँ प्राप्त हैं। सोवियट सरकार ने मजदूरों को जितनी स्वतन्त्रता दी है, उतनी उन्हें कभी भी प्राप्त नहीं थी। उन्हें उनका प्यारा वोडका (एक प्रकार की शराब) पीने को मिलता है, जिसे जार ने लड़ाई के समय में पीने की मनाही कर दी थी। शादी और तलाक़ के नियमों में भी काफ़ी परिवर्तन किया गया है। सिर्फ़ सरकारी रजिस्टरी ऑफ़िस में जा कर कोई भी दम्पति विवाह-सूत्र में बँध जा सकती है। यदि तलाक़ देना हो तो पुरुष या स्त्री कोई भी जा कर सरकारी ऑफ़िस में दरख़्वास्त दे दे, तलाक़ मञ्जूर हो जायगा। कोई कारण देने की आवश्यकता नहीं। अगर बन्धन है तो यही कि पिता लड़कों का पालन-पोषण करेगा।

कम्युनिस्ट नेताओं ने मजदूरों के हृदय में अदम्य उत्साह भर दिया है। उन्हें यह विश्वास दिलाया गया है, कि वह सिर्फ़ अपने या अपने परिवार ही के लिए नहीं काम करता, किन्तु राष्ट्र की भलाई के लिए करता है अतएव वे अपनी सारी शक्ति लगा

कर अपने काम में डटे रहते हैं। उन्हें एक और आशा दी गई है। उनसे कहा गया है कि १९३५ ई० में रशिया में सभी पदार्थों की प्रचुरता हो जायगी। वहाँ दूध, घी की नदियाँ बहने लगेंगी। मजदूरों को इसमें विश्वास है और इस स्वर्गीय अवस्था को निकट बुलाने में वे यथासाध्य सहायता करते हैं। इसके अलावा, उसकी दृष्टि सारे संसार पर लगी हुई है और दूसरे देशों पर अपना आधिपत्य जमाने की महत्वाकांक्षा भी उसके हृदय में हिलोरें मारा करती है।

उसमें एकायक उत्साह-जागृति का यही कारण है। इसी आकांक्षा को ले कर वहाँ के मजदूर निरन्तर रात-दिन काम में भिड़े रहते हैं। इसी भावना से प्रेरित हो कर नोवगोरोड में प्रायः १०,००० आदमी एक विशाल मोटर का कारखाना बनाने में लगे हुए हैं। यहीं एक आदर्श कम्युनिस्ट शहर भी बसाया जा रहा है। इस शहर में २५,००० मनुष्यों के रहने का इन्तजाम किया जा रहा है। रहने के घरों के अतिरिक्त, यहाँ स्कूल, अस्पताल, भोजनालय, लाइब्रेरी, थिएटर आदि भी होंगे, किन्तु गिर्जाघर नहीं रहेगा। क्योंकि सोवियट-सरकार ईश्वर में विश्वास नहीं करती और वह पृथ्वी से धर्म नामक वस्तु का बहिष्कार कर देना चाहती है। यह आश्चर्य-जनक शहर धनियों या उनके लड़कों के लिए नहीं बनाया जा रहा है, क्योंकि रूस में कोई धनी मनुष्य नहीं है। यह रूसी मजदूरों और उनके लड़कों के लिए बनाया जा रहा है।

रूस का पञ्च-वार्षिक कार्यक्रम आज सफल दीख रहा है, यद्यपि कम्युनिस्ट सरकार की स्थिति अभी भी सन्देहात्मक है। यह सच है, कि भूमि राष्ट्र की सम्पत्ति हो रही है। प्रायः सारा व्यापार राष्ट्र के हाथ में आ रहा है, किन्तु सभी व्यापारिक उन्नति की जड़ में कैपिटलिस्ट का घृणित भाव काम कर रहा है। कैपिटलिस्टों के तरीक़ों को अख़्तियार कर, उन्हीं की मैशीन तथा मस्तिष्क से यह उन्नति-साधना हो रही है। अस्तु, यदि रशिया की यह महत्वाकांक्षा सफल हुई, तब क्या उसके मज़दूर मज़दूरी पेशे से ही सन्तोष कर लेंगे? क्या उसके नेता रशिया में ही रह कर सन्तुष्ट होंगे या संसार-व्यापी साम्राज्य स्थापित करने की चेष्टा में लगेंगे। ये सब ऐसे प्रश्न हैं, जो संसार के राजनीतिज्ञों के मस्तिष्क में हलचल पैदा कर रहे हैं। सारा संसार रूस के कार्यक्रम तथा उसकी अनिश्चित सफलता को आश्चर्य की दृष्टि से देख रहा है।

लेनिन



वियट प्रजातन्त्र तथा कम्युनिस्ट इण्टरनेशनल का पिता, बोलशेविक दल का नेता तथा रूस की अक्तूबर वाली क्रान्ति के सञ्चालक का नाम किसने न सुना होगा? लेनिन का पूरा नाम व्लडीमिर इलिइच लेनिन (Vladimir Ilyich) था। उसका जन्म सिमबिरस्क (अब उलीआनोस्क) नाम के एक क़स्बे में, सन् १८७० की ९ वीं एप्रिल को हुआ था। उसका पिता, जिसका नाम इलिया निकोलिविच था, एक शिक्षालय में शिक्षक का काम करता था। और उसकी माता, मेरिया एलेक्जेन्ड्रोवना थी, वर्ग नाम की एक डॉक्टर की लड़की। उसके सब से बड़े भाई ने तीसरे एलेक्जेण्डर को मार डालने का प्रयत्न किया था और इसी अपराध में उसे, सन् १८९१ में, प्राण-दण्ड दिया गया था। लेनिन के जीवन पर इस घटना का बहुत असर पड़ा था। यहाँ तक कि इसी घटना ने उसे भविष्य का मार्ग बता दिया।

लेनिन ने सिमब्रिस्क जिमनासियम् में, सन् १८८७ में, अपनी शिक्षा पूरी की। उसे पुरस्कार में स्वर्ण-पदक भी मिला था। क़ानून का अध्ययन करने के लिए वह कज़न विश्वविद्यालय में

भरती हुआ। पर कुछ महीनों के बाद ही वह एक सभा में भाग लेने के अभियोग विश्वविद्यालय से निकाल दिया गया। सन् १८८९ के पहिले वह फिर विश्वविद्यालय में न आ सका। अपने विश्वविद्यालय-काल में वह अपना समय कार्लमार्क्स की पुस्तकों का अध्ययन करने में बिताता था। और मार्क्स के दल के जो लोग वहाँ रहा करते थे, उनसे मिला करता था।

सन् १८९१ में लेनिन ने सेण्टपिटर्सबर्ग विश्वविद्यालय से क़ानून की परीक्षा पास की और सन् १८९२ में उसने अपनी वकालत आरम्भ कर दी। पर उसका दिल इस काम में अधिक न लगता था। और वह मार्क्स के अध्ययन में ही जुटा रहता था। वह चाहता था, कि मार्क्स के सिद्धान्तों का रूस के आर्थिक तथा राजनैतिक क्षेत्रों में प्रयोग किया जावे और चाहता था, उनके द्वारा तमाम संसार का उद्धार करना।

सन् १८९४ में वह सेण्टपीटर्सबर्ग में आ कर रहने लगा और अपना प्रचार-कार्य आरम्भ किया। उस समय कुछ ऐसे लोग थे, जो मार्क्स के सिद्धान्तों को ग़लत समझते तथा समझाते थे। लेनिन ने समाचार-पत्रों में ऐसे लोगों के विरुद्ध कई लेख लिखे।

सन् १८९५ में वह पहले-पहल रूस छोड़ कर विदेश गया और प्लेखनोव आदि मार्क्स के भक्तों से भेंट की।

जब वह लौट कर सेण्टपीटर्सबर्ग आया तो आते ही उसने एक गुप्त सभा की स्थापना की। इस सभा का उद्देश्य था,

मजदूरों का उद्धार करना। बहुत शीघ्र वह सभा प्रसिद्ध हो गई। सभा द्वारा श्रमिकों में प्रचार-कार्य किया जाने लगा।

सन् १८९५ के दिसम्बर में लेनिन तथा उसके साथी गिरफ़्तार कर लिए गए। उसका १८९६ का सारा वर्ष कारागार में ही बीता। १८९७ में उसे तीन साल के लिए देश-निकाला दिया गया। इन वर्षों में वह पूर्वीय साइबेरिया के येनिसी प्रान्त में रहा। सन् १८९८ में उसने अपनी शादी एन० के० क्रुपसकया के साथ की। इसी साल उसने अपनी सब से प्रसिद्ध अर्थशास्त्र-सम्बन्धी पुस्तक लिखी। इस पुस्तक का अङ्गरेजी नाम है—Development of Capitalism in Russia। सन् १९०० में वह स्वीट्ज़रलैंड गया। वह रूस में एक क्रान्तिकारी पत्र निकालना चाहता था। उसी का प्रबन्ध करने के लिए वहाँ गया था। इसी वर्ष के अन्त में 'इस्क्रा' (चिनगारी) पत्र का प्रथम अङ्क म्यूनिच से निकला। इस पत्र का मॉटो था, 'चिनगारी से लपट' (From spark to flame)

सन् १९०३ में दूसरी रूसी कॉङ्गरेस ब्रसेल्स तथा लन्दन में हुई। इस कॉङ्गरेस ने लेनिन तथा प्लेखनोव के बनाए हुए प्रोग्राम को मान लिया। पर इस कॉङ्गरेस में आपस में फूट पड़ गई और इसके दो दल हो गए। एक दल तो बोल्शेविकों का था और दूसरा था, मेनशेविकों का। बोल्शेविक दल का नेता लेनिन ही था। दोनों दलों में मुख्य अन्तर यह था, कि मेनशेविक दल नरम विचार के धनिक लोगों से मिल कर काम करना चाहता था और

बोल्शेविक दल किसानों से मिल कर कार्य करना चाहता था। उसे धनिकों से कुछ आशा न थी। अन्त में इस फूट का परिणाम यह हुआ, कि सन् १९१४ में, द्वितीय अन्तर्राष्ट्रीय (Second International) का अन्त हो गया। सन् १९१७ में अक्तूबर की क्रान्ति हुई और सन् १९१८ में पार्टी का नाम 'सोशल डिमॉक्रैट' से बदल कर 'कम्युनिस्ट पार्टी' रख दिया गया। अस्तु।

सन् १९०४ में रूस और जापान में युद्ध हुआ। पाठकों को याद होगा कि इस युद्ध में जापान ने विजय पाई थी। यह पहला ही अवसर था कि एशिया के एक राष्ट्र ने यूरोप के एक बड़े राष्ट्र को युद्ध में पछाड़ा था। रूस की इस हार का उत्तरदायित्व रूस के शासकों पर ही था। अतएव रूस की जनता अपने शासकों से बहुत ही अप्रसन्न थी। इसके अलावा कुछ और भी ऐसी घटनाएँ हुईं, जिसने रूस की जनता को उत्तेजित कर दिया था। ९ जनवरी, १९०५ को श्रमिकों पर गोलियाँ चलाई गई थीं, और तमाम देश में राजनैतिक हड़तालें हो रही थीं। लेनिन चाहता था, कि जारशाही के विरुद्ध जनता की एक सशस्त्र सेना का सङ्गठन किया जावे और साथ ही एक अस्थायी सरकार की स्थापना भी की जाय, जो किसानों तथा मजदूरों को जार के चङ्गुल से छुड़ा सके।

बोल्शेविक दल की तीसरी कॉङ्ग्रेस मई, १९०५ में हुई। इस कॉङ्ग्रेस ने एक नया प्रोग्राम बनाया, जिसमें जमींदारों की जायदादें जब्त करना भी शामिल था।

सन् १९०५ के अक्तूबर में रूस भर में हड़ताल हुई। यह हड़ताल रूस के एक कोने से दूसरे कोने में फैल गई। इस बढ़ती हुई आँधी को देख कर रूस की ज़ारशाही सरकार सहम गई और अपने भविष्य के बारे में सोचने लगी। इस आँधी को रोकने के लिए तथा जनता को शान्त करने के लिए रूस के ज़ार ने एक तरकीब सोची। १७ अक्तूबर को ज़ार ने रूस के शासन-विधान के सम्बन्ध में एक घोषणा की।

जिस समय रूस में यह सब हो रहा था, उस समय लेनिन जिनेवा में था। परन्तु अब वहाँ रहना बेकार समझ कर वह नवम्बर के आरम्भ में रूस लौट आया। और आते ही उसने एक अपील निकाली। इस अपील में बोल्शेविकों से कहा गया था कि वे अपने दल में अधिक-से-अधिक मज़दूरों को शामिल करें।

१९०५ का वर्ष रूस तथा लेनिन के लिए बड़े महत्व का था। इस वर्ष में अनेक घटनाएँ हुई थीं। यहाँ तक कि कुछ समय के लिए रूस की जनता को राजनैतिक स्वतन्त्रता मिल गई थी, यद्यपि वे बहुत काल तक उसे रख न सके। इसी वर्ष श्रमिकों, सैनिकों तथा किसानों का ज़बरदस्त सङ्गठन किया गया और 'सोवियटों' की स्थापना की गई।

दिसम्बर के अन्त में रूस के प्रसिद्ध नगर मॉस्को में बलवा हुआ। पहिले तो ऐसा प्रतीत होता था कि यह विद्रोह दबाया न जा सकेगा। पर शीघ्र ही धारणा ग़लत प्रमाणित हुई और विद्रोह पूर्णतया कुचल दिया गया। इस विद्रोह के असफल होने

का मुख्य कारण यह था, कि देश के और दूसरे नगरों में तथा देहातों में पूरी शान्ति बनी रही।

इस घटना के पश्चात् सन् १९०७ में, लेनिन को रूस एक बार फिर छोड़ना पड़ा। इस समय वह दस वर्ष तक बाहर रहा और सन् १९१७ के पहिले रूस लौट कर नहीं आया। सन् १९०७ से ही रूस में भयङ्कर दमनकाल का श्रीगणेश होता है। सैकड़ों पुरुष कारागारों में बन्द कर दिये गये। अनेकों को देश-निकाला और प्राणदण्ड दिया गया। क्रान्ति का नामोनिशान मिटाने का पूरा प्रयत्न किया गया।

सन् १९०७ में जब लेनिन रूस छोड़ कर भाग रहा था, तो एक समय वह मरते-मरते बचा। वह स्टॉकहोम जाना चाहता था। पुलिस उसका बुरी तरह पीछा कर रही थी। अगर वह अबो से स्टीमर में चढ़ कर जाता तो अवश्य ही पकड़ जाता; क्योंकि वहाँ पुलिस का कड़ा पहरा रहता था और बहुत-से आदमी वहाँ स्टीमर पर चढ़ते हुए गिरफ़ार किए जा चुके थे। लेनिन के एक साथी ने उसे क़रीब के एक द्वीप से स्टीमर पर चढ़ने की सलाह दी। रूस की पुलिस वहाँ उसे गिरफ़ार नहीं कर सकती थी। पर उस द्वीप तक पहुँचने में बहुत दूर तक बरफ़ पर चलना पड़ता था। जाड़ा ख़ूब पड़ रहा था, स्थान-स्थान पर बरफ़ ख़तरनाक थी। कोई भी पुरुष अपने प्राण को सङ्कट में नहीं डालना चाहता था, अतएव पहिले तो लेनिन को कोई पथ-प्रदर्शक नहीं मिला। अन्त में दो किसान, जो उस स्थान से भली प्रकार

परिचित थे, यह कार्य करने को तैयार हो गए। रात को वे लोग बरफ़ पार करने लगे। एक स्थान पर जब लेनिन बरफ़ पार कर रहा था, तो उसके पाँव के नीचे की बरफ़ अकस्मात् खसक गई। उस समय संयोग से ही वह मरने से बच गया। जब उसके पैरों के नीचे से बरफ़ हट रही थी, तो उसने कहा था—आह! इस प्रकार मरना कितनी मूर्खता की बात है।

रूस से बाहर रह कर लेनिन ने मेनशेविकों तथा उन लोगों का, जो मेनशेविकों तथा बोल्शेविकों के मध्य में रहना चाहते थे, विरोध किया और उन बोल्शेविकों का भी विरोध किया, जो चाहते थे कि सोशल डिमॉक्रेटिक दल के मेम्बर ड्यूमा (Duma) छोड़ कर चले आवें।

सन् १९१२ में रूस में मजदूरों के आन्दोलन ने फिर जोर पकड़ा। और सन् १९१४ तक यह आन्दोलन बढ़ता ही गया। सन् १९१२ में लेनिन ने प्रेग नगर में रूस के बोल्शेविकों की एक गुप्त कॉन्फ्रेन्स बुलाई। इस कॉन्फ्रेन्स ने एक नवीन केन्द्रीय कमिटी चुनी। बाहर ही रहते हुए लेनिन ने रूस के सेण्ट-पिटर्सबर्ग नगर से 'प्रवदा' नाम के एक समाचार-पत्र के निकालने का प्रबन्ध किया। ये सारे काम लेनिन इस चतुराई से करता था कि रूस की सरकार दङ्ग रह जाती थी और उसका कुछ न कर पाती थी।

जुलाई, १९१२ को लेनिन अपने घनिष्ठ साथियों के साथ पेरिस छोड़ कर क्रेको चला गया। रूस में क्रान्ति बढ़ रही थी।

उन दिनों प्रति दिन सारे बोल्शेविक पत्रों में अलग-अलग नाम से लेनिन लेख लिखा करता था। जिस पत्र में देखिए, लेनिन का लिखा हुआ कोई-न-कोई लेख अवश्य मिलेगा।

लेनिन की पत्नी—क्रप्सकया—इस सारे सङ्गठन की केन्द्र थी। वही लोगों से मिला करती थी, लिखा-पढ़ी किया करती थी और सारा सङ्गठन का कार्य चलाती थी।

जब सन् १९१४ में यूरोप का महायुद्ध प्रारम्भ हुआ, उस समय लेनिन गलेशिया के पोरोनिन नाम के एक छोटे-से नगर में था। पाठक जानते हैं, कि गलेशिया ऑस्ट्रिया का एक प्रान्त था। ऑस्ट्रिया की पुलिस ने लेनिन को रूस का जासूस समझ कर गिरफ़ार कर लिया। पन्द्रह दिन पश्चात् उसे ऑस्ट्रिया छोड़ देने की आज्ञा मिली। फलतः वह ऑस्ट्रिया छोड़ कर स्वीट्ज़र्लैण्ड चला गया।

१ नवम्बर, १९१४ को लेनिन ने एक मैनिफ़ेस्टो निकाल कर साम्राज्यवादी युद्ध का विरोध किया। उसने कहा कि इस युद्ध के लिए सभी बड़े राष्ट्र दोषी हैं, जो वर्षों से अपनी वस्तुओं के लिए बाज़ार बढ़ाने तथा अपने शत्रुओं को नष्ट करने के लिए युद्ध की तैयारी कर रहे थे। एक देश के धनी लोग दूसरे देश के धनिकों पर जो दोषारोपण कर रहे थे, वह संसार के श्रमिकों को धोखा देने का एक उपाय था। मैनिफ़ेस्टो में यह भी कहा गया था, कि सोशल डिमॉक्रैटिक दल के नेताओं का बहुमत युद्ध का समर्थन कर रहा था और सोशलिस्ट कॉङ्ग्रेसों के प्रस्तावों के विरुद्ध आचरण

कर द्वितीय अन्तर्राष्ट्रीय (Second International) का अन्त कर रहा था। अपने मैनिफ़ेस्टो के अन्त में लेनिन ने जोरदार शब्दों में तमाम देशों के सोशल डिमॉक्रेटों से अपील की थी, कि वे अपने-अपने देश की सरकार की हार मनावें।

लेनिन ने एक नवीन अन्तर्राष्ट्रीय दल की स्थापना करने के लिए प्रोग्राम बनाया और उसका ध्येय तथा उसकी नीति निश्चित की।

सन् १९१५ के सितम्बर में यूरोप के उन साम्यवादियों की, जो साम्राज्यवादी युद्ध के विरोधी थे, प्रथम कॉन्फ्रेन्स हुई। यह कॉन्फ्रेन्स स्वीट्ज़र्लैण्ड के जिमरवाल्ड नाम के एक नगर में हुई थी। इसमें ३१ डेलीगेटों ने भाग लिया था।

इस प्रकार लेनिन ने अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में क़दम रक्खा। अब उसका कार्यक्षेत्र केवल रूस ही न रह गया। लेनिन अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र के लिए अत्यन्त उपयुक्त था। वह अङ्गरेजी, जर्मन तथा फ्रेञ्च भाषाओं का विद्वान् और साथ-ही-साथ स्वीडेन, इटली तथा पोलैण्ड की भाषाएँ भी जानता था।

लेनिन अभी स्वीट्ज़र्लैण्ड ही में था, कि रूस में क्रान्ति आरम्भ हो गई। यह घटना फ़रवरी, सन् १९१७ की है। रूस में पुनः एक बार आग लग गई। भला अब लेनिन को स्वीट्ज़र्लैण्ड में चैन कैसे पड़ सकता था? वह रूस पहुँचने के लिए छटपटाने लगा। उसने वहाँ पहुँचने के लिए कितने प्रयत्न किए, पर इङ्गलैण्ड की सरकार ने विरोध किया और उसके प्रयत्नों को सफल

न होने दिया। अतः लाचार हो कर, उसने जर्मनी हो कर रूस जाने का निश्चय किया। उसे मार्ग में बड़ी कठिनाइयाँ हुईं। पर अन्त में वह अपने प्रयत्न में सफल हुआ, और रूस पहुँच गया। इसके लिए उसे कुछ ऐसी बातें करनी पड़ीं, जिनके कारण उसके शत्रुओं ने उस पर कितने ही घृणित अभियोग लगाए। पर लेनिन सहज ही घबड़ाने वाला पुरुष न था। वह उन बातों से विचलित नहीं हुआ और वे लोग उसका कुछ भी न बिगाड़ सके। लेनिन अपने दल का नेता बना ही रहा।

४ एप्रिल की रात थी। लेनिन ट्रेन से पेट्रोग्रेड के फिनलिएडस्की स्टेशन पर उतरा और उतरते ही एक व्याख्यान दिया। लोगों को अपनी बातें समझाईं। उसने कहा कि जारशाही का अन्त कर देने से ही कार्य का अन्त नहीं होता। असल में यह तो कार्य का श्रीगणेश है। जब तक जनता सन्तुष्ट नहीं होती, तब तक काम अधूरा ही रहेगा। इसलिए उसने जनता से राजनैतिक शक्ति हाथ में लेने के लिए तैयार होने को कहा और उसके सामने इस कार्य के लिए एक प्रोग्राम भी रक्खा।

पर वह प्रोग्राम इतना गरम था, कि कितने ही बोल्शेविकों तक ने उसका विरोध किया, प्लेखनोव ने लेनिन के इस प्रोग्राम को लेनिन की 'सनक' बतलाया था।

उस समय कुछ देशभक्त साम्यवादी अपने देश के धनवानों तथा बड़े आदमियों से मिल कर काम करना चाहते थे। रूस की

'क्रान्ति-विरोधिनी गुप्त सभा' बोल्शेविकों के विरुद्ध प्रचार कर रही थी। इस सभा ने ५ जुलाई को कुछ पत्र प्रकाशित किए थे, जिनमें यह दिखलाया गया था, कि लेनिन को जर्मनी से सहायता मिलती थी और वह 'जर्मन जनरल स्टाफ़' के अधीन काम कर रहा था।

प्रचण्ड दमन से आन्दोलन पूर्णतया कुचल दिया गया और रूस की पुलिस लेनिन के पीछे हाथ धो कर पड़ गई। लेनिन भी एक स्थान से दूसरे स्थान पर छिपता फिरता रहा, परन्तु छिपे-छिपे काम भी करता था। कुछ दिन तक वह पेट्रोग्रेड में एक मजदूर के घर में छिपा रहा। फिर वह वहाँ से भाग कर फ़िनलैण्ड चला गया। पर यह हालत बहुत काल तक न रही। बहुत शीघ्र एक दूसरी लहर आई और उसने एक बार फिर जनता में खलबली मचा दी। जनता फिर जागृत हुई। पेट्रोग्रेड और मॉस्को के सोवियटों में बोल्शेविकों का बहुमत हो गया। लेनिन तो ऐसे अवसर की प्रतीक्षा ही कर रहा था। उसने जनता से, इस अवसर से लाभ उठा कर शासन-शक्ति को अपने हाथों में लेने की अपील की। 'अब या कभी नहीं' यही वह बार-बार कहता था। उसका कहना था कि ऐसा अवसर बार-बार नहीं आता। यदि इस अवसर से जनता ने लाभ नहीं उठाया, तो फिर वह वर्षों तक कुछ नहीं कर सकेगी।

अस्थायी सरकार के विरुद्ध क्रान्ति हुई और इसके साथ ही २५ अक्तूबर को सोवियट की द्वितीय कॉङ्ग्रेस की बैठक हुई।

साढ़े तीन महीने छिपे रहने के पश्चात् अब लेनिन जनता के सामने आया और आते ही उसने आन्दोलन का नेतृत्व अपने हाथों में ले लिया। २७ अक्तूबर को काँग्ररेस की रात की बैठक में उसने एक योजना मेम्बरों के सामने रक्खी, जो सर्वसम्मति से मान ली गई। उस समय बोल्शेविकों की ओर से एक घोषणा निकाली गई थी, जिसमें यह कहा गया था, कि रूस का शासनाधिकार अब सोवियट के हाथों में आ गया। रूस के किसानों ने भी बोल्शेविकों का साथ दिया और शासन की बाग-डोर जनता के हाथों में आ गई। लेनिन का प्रयत्न सफल हो गया।

पाठकों को याद होगा कि जिस समय रूस में यह सब हो रहा था, उस समय यूरोप में महा संग्राम जारी था। रूस की सोवियट के सामने युद्ध और शान्ति का प्रश्न उपस्थित हुआ। रूस की सोवियट दल के कुछ लोग युद्ध के पक्ष में थे, यद्यपि वे जानते थे कि रूस की आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं है। पर लेनिन बहुत दूरदर्शी था, वह चाहता था कि जर्मनी से बहुत समय तक बात-चीत जारी रक्खी जावे, ताकि रूस को प्रचार करने का अवकाश मिल जावे। पर यदि बातचीत अधिक काल तक न चल सके और जर्मनी युद्ध करने के लिए तैयार हो जावे तो रूस को उससे सन्धि कर लेनी चाहिए। चाहे रूस को इस सन्धि के लिए कुछ देना ही क्यों न पड़े। उसका कहना था कि पश्चिम में जो क्रान्ति उठ रही है, वह आगे चल कर रूस की समस्त हानियों की पूर्ति कर देगी।

केन्द्रीय कमेटी की १८ फ़रवरी की बैठक में इस प्रश्न पर ख़ूब बहस हुई। पर कमेटी का बहुमत लेनिन के पक्ष में था। फलतः जर्मनी से सन्धि कर ली गई। लेनिन के प्रस्ताव पर सोवियट सरकार का केन्द्र मॉस्को चला आया। जब पूरी तरह शान्ति स्थापित हो गई, तब लेनिन ने अपना ध्यान रूस की आर्थिक तथा साहित्यिक स्थिति सुधारने की ओर दिया।

पर अभी रूस के कष्टों का अन्त नहीं हुआ था। उसकी अग्नि-परीक्षा और भी होने को थी। सोवियट के विरुद्ध क्रान्ति उठ खड़ी हुई। ज़ेकोस्लोवेकों (Czecho-slovaks) ने सोवियट के विरुद्ध विद्रोह कर दिया। २ अगस्त को आरचैञ्जल में और १४ अगस्त को बाकू में अङ्गरेज़ों ने हस्तक्षेप किया। रूस में खाद्य पदार्थ भी न जाने दिये जाते थे। पर लेनिन इन बाधाओं से बिल्कुल नहीं घबड़ाया। उसने ख़ूब प्रचार किया। जनता को जगाया और कमर कस कर बाधाओं का सामना किया।

३० अगस्त की बात है। मज़दूरों की एक सभा हो रही थी, लेनिन उसमें व्याख्यान देने जा रहा था और अभी थोड़ी ही दूर गया था, कि कपलन नाम के एक मनुष्य ने उस पर दो गोलियाँ चलाईं। लेनिन घायल हो गया; पर सौभाग्य से मरा नहीं। वह एक हट्टा-कट्टा पुरुष था। अतएव उसके ज़ख्म शीघ्र ही अच्छे हो गये थे। सन् १९२१ में सोवियट ने विरोधी-दल को पूरी तरह से कुचल दिया।

लेनिन ने अपने जीवन में घोर परिश्रम किया तथा अनेक कष्ट उठाये थे। उसे दिन-रात परिश्रम करना पड़ता था और बहुधा हफ़्तों तक चैन से बैठ भी नहीं सकता था। इन्हीं सब कारणों से उसकी तन्दुरुस्ती जवाब दे रही थी। सन् १९२२ के प्रारम्भ में उसके डॉक्टरों ने उसे काम करने से मना कर दिया। दिसम्बर में उसके हाथ और पैर में लकवा मार गया।

रूस के प्रसिद्ध नगर मॉस्को के पास एक क़स्बा है, जिसका नाम है गार्की। इसी क़स्बे में लेनिन का इलाज हो रहा था। यहीं पर १९२४ की २१ जनवरी के दिन शाम के साढ़े छै बजे लेनिन ने इस संसार से सदा के लिए विदा ले ली !!

अन्त में मैं दो शब्द एन० के० क्रप्सकया—लेनिन की पत्नी—के बारे में भी कह देना चाहता हूँ। क्रप्सकया ने लगातार तीस वर्ष तक लेनिन के साथ कन्धे-से-कन्धा मिला कर काम किया है। वह बराबर सारे सङ्गठनों की केन्द्र थी। सन् १९०१ से ले कर सन् १९०३ तक वह 'इस्क्रा' पत्र की सम्पादकीय मन्त्रिणी थी। और उसके पश्चात् वह सोशल डिमॉक्रेटिक पार्टी के अन्तर्गत बोल्शेविक दल की मन्त्रिणी थी। सन् १९०५ से ले कर सन् १९०८ तक वह अपने पार्टी के केन्द्रीय कमेटी की मन्त्रिणी थी। जब वह १९१५-१६ में स्वीट्ज़रलैण्ड में रहती थी, उसने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक Popular Education and Democracy लिखी थी। जब वह १९१७ में लेनिन के साथ लौट कर रूस में आई, तो अक्तूबर की भावी क्रान्ति की तैयारी में लग गई।

अक्तूबर की क्रान्ति के पश्चात् वह सोवियट सरकार के शिक्षा-विभाग में एक ऊँचे पद पर नियुक्त की गई। हाल ही में क्रुप्सकया ने लेनिन पर एक पुस्तक लिखी है। उस पुस्तक का पहला भाग निकल गया है। दूसरा अभी निकलने को है। पुस्तक का अङ्गरेजी नाम है—Memoirs of Lenin.

